THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL LIBRARY
OU_180526
UNIVERSAL LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H922.97 R14Su   Accession No. G.H.2831

Author राहुल, क्षेमानन्द

Title सूफ़ी संत-चरित 1961

This book should be returned on or before the date last marked below

सत्साहित्य-प्रकाशन

सूफ़ी संत-चरित

—चुने हुए मुस्लिम संतो के जीवन-परिचय तथा उपदेश—

'भगवान'

([illegible] राहत)

●

पुस्तक भेंट के निमित्त है

१९६१

सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय,
मन्त्री, सस्ता साहित्य मडल,
नई दिल्ली

पहली बार १९६१
मूल्य
तीन रुपए

मुद्रक
श्री जैनेद्र प्रेस
दिल्ली

प्रकाशकीय

सत-साहित्य के प्रकाशन की ओर 'मण्डल' का ध्यान बहुत दिनो से रहा है और उसने अबतक उसके अन्तर्गत कई पुस्तके प्रकाशित की है · 'संत-सुधासार', 'सत-वाणी', 'बुद्ध-वाणी', 'तुकाराम गाथासार', 'तामिलवेद' आदि-आदि 'मडल' की ऐसी कृतिया है, जिन्हे सभी वर्गों के पाठको ने पसन्द किया है और उनकी उपयोगिता को मुक्त कण्ठ से स्वीकार किया है।

प्रस्तुत पुस्तक उसी शृखला की एक मूल्यवान कडी है। इसमे चुने हुए पच्चीस मुस्लिम सतो के सक्षिप्त जीवन-परिचय दिये गए है, साथ ही उनके उपदेश भी। इन जीवन-चरितो और उपदेशो मे जीवन-शोधकों को तो प्रेरणादायक सामग्री प्राप्त होती ही है, सामान्य पाठको को भी बहुत-कुछ मिलता है। वस्तुतः, सत-महात्मा किसी भी देश और किसी भी धर्म मे पैदा हों, वे देश-काल की परिधि मे सीमित नही होते। उनकी वाणी सार्वजनीन और सर्वकालीन होती है।

इस पुस्तक के उदात्त चरितों मे बहुत-सी ऐसी घटनाए मिलती है. जो शिक्षित-अशिक्षित सभी के लिए शिक्षाप्रद है। वे जीवन के लक्ष्य को समझने और उसे प्राप्त करने की दिशा मे अच्छी प्रेरणा देती है। कुछ चमत्कारी घटनाएं भी है, जिन्हे सभव है, बुद्धिवादी सहज ग्रहण न कर सके। ऐसी घटनाओं के शाब्दिक अर्थ को न लेकर उनकी मूल भावना को समझेंगे तो उनमें से नया प्रकाश मिलेगा।

यह पुस्तक उर्दू के सुविख्यात ग्रंथ 'तजकिरत्-उल-औलिया' के आधार पर तैयार की गई है।

इसके लेखक का वास्तविक नाम श्री क्षेमानन्द राहत है। वह हिन्दी के पुराने लेखक है। मौलिक लेखक के रूप में उनकी सेवाएं उल्लेखनीय रही है। उनकी कविताओं ने किसी समय मे हिन्दी-जगत मे अच्छा स्थान प्राप्त किया था। हिन्दी के अनन्य प्रेमी और उन्नायक के रूप मे उन्होने हिन्दी के प्रचार में बड़ा योगदान दिया। सन् १९१७-१८ में मद्रास से

प्रकाशित 'भारत-तिलक' पत्र का सम्पादन किया, बाद मे हिन्दी की उच्च-कोटि की साहित्यिक पत्रिका 'त्याग-भूमि' का। 'तामिलवेद' के हिन्दी मे प्रथम बार अनुवाद का श्रेय भी उन्ही को है।

भारत के स्वातन्त्र्य-सग्राम मे भी उनकी सेवाएं बड़ी मूल्यवान है। सन् १९३० के राष्ट्रीय आंदोलन मे जब वह जेल गये तो उनके जीवन ने नया मोड़ लिया। राजनीति से उनका मन हट गया और वह आध्यात्मिकता की ओर झुक गए। श्री क्षेमानन्द राहत से वह 'भगवान' बन गए। अब उनका वही रूप देश के सामने है। कोलाहल से दूर अब वह मसूरी के एकान्त वायुमण्डल मे साधना कर रहे है।

पुस्तक की भाषा और शैली के विषय मे कुछ कहने की आवश्यकता नही : संक्षेप मे हम इतना ही निवेदन करेगे कि सारी सामग्री को उन्होंने बडी ही प्रांजल, प्रवाहपूर्ण तथा सजीव भाषा में प्रस्तुत किया है। प्रत्येक चरित को पढने में ऐसा जान पड़ता है, मानो किसी उपन्यास का अध्याय पढ रहे हों।

आज के विज्ञान-युग में हमारा जीवन इतना भौतिकता से आवृत्त हो रहा है कि हमारे मूल्य ही बदल गए है। फलत, हमारे जीवन मे अशान्ति उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है। विज्ञान की उपलब्धियों को हम आज अस्वीकार नही कर सकते; लेकिन इसमे सदेह नही कि जबतक विज्ञान के केन्द्र-विन्दु मानव का सुख-दुख नही रहेगा, अर्थात् विज्ञान और आध्यात्मिकता का समन्वय नही होगा, तबतक मानव सच्चे सुख और स्थायी शान्ति की प्राप्ति नहीं कर सकेगा।

हम आशा करते है कि इस पुस्तक का सर्वत्र आदर होगा और इसके पठन-पाठन से सभी वर्गों और सभी धर्मो के पाठक लाभान्वित होगे।

—मंत्री

विषय-सूची

१. राबिआ ९
२. फजील-बिन-अयाज २४
३. इब्राहीम-बिन-अदहम ३३
४. जू-उल-नून मिस्री ५०
५ दाऊद ताई ६३
६. अबु मुहम्मद जरेरी ६९
७ हजरत अबु-हमजा खुरासानी ७२
८. अबुलहसन खिरकानी ७५
९. शिबली ९३
१० हबीब अजमी १०६
११ जुनैद बगदादी ११३
१२. इमाम शाफी १२३
१३. सरी सक्ती १२९
१४. यूसुफ-बिन-हुसैन १३७
१५ हातम असम १४३
१६. अब्दुल्ला-बिन-मुबारिक १५१
१७. खैर नस्साज १५८
३८. शाहशुजा करमानी १६२
१९ अहमद खिजरविया १६७
२०. बशर हाफी १७४
२१ बायजीद बस्तामी १८४
२२. यहिया-बिन-मुआजराजी १९६
२३ अबु हफ़स हदाद २०५
२४. इमाम अबु हनीफ़ा २१७
२५. मन्सूर अम्मार २२३

सूफ़ी संत-चरित

सूफ़ी सन्त-चरित

: १ :

राबिआ

भगवान सन्तों के हृदय से खेलते है। उनकी आत्मा में बैठकर चहकते हैं। उनके पारस्परिक वाणि-विनोद और प्रेमालाप मे काफी बेतकल्लुफी रहती है; मगर वे अपने भक्तो पर जुल्म करने मे भी नही चूकते । जितना गहरा उनका प्यार होता है उनका जुल्म भी कुछ उतना ही ज्यादा तीखा होता है ।

सन्त-शिरोमणि राबिआ के साथ उनका कुछ ऐसा ही सलूक था। उस पर उन्होने जुल्म न किया हो, यह तो नही कहा जा सकता ; पर उस पर उनका प्यार भी अपार था। भले आदमी की तरह भगवान को भी चाहिए कि भक्त का बोझा बटा ले । कमजोर पैरों वाला इन्सान कैसे सातवे आस्मान (वैकुण्ठ) या हृदय-गुहा मे छुपे ईश्वर तक पहुँच सकता है ! भगवान शक्तिशाली है ! उन्हे कही भी पहुँचना कठिन नही ।

मुस्लिम संतो के इतिहास में राबिआ का अस्तित्व अद्वितीय है । वह स्त्री सन्तों में ही अग्रगण्य नही, पुरुषो में भी यदि वह सबसे आगे नहीं तो किसी से कम भी नही। राबिआ के जीवन की श्रेष्ठता और विचारों की शुद्धता किसी भी जाति और किसी भी काल के सन्तों के लिए अभिनन्दनीय कही जा सकती है। उसके समकालीन ऊँचे-ऊँचे सन्त दिल से उसकी इज्जत करते और सत्संग से लाभान्वित होते ।

राबिआ के माता-पिता भक्त-हृदय, ईश्वर-विश्वासी, आत्म-सन्तोषी और बड़े ही दीन थे। कहते है कि जब उसका जन्म हुआ तो गरीबी इतनी ज्यादा थी कि न चिराग मे तेल था, न उसे ओढाने के लिए कोई कपडा ही घर मे था। नाभि पर तेल रखने का रिवाज था, लेकिन तेल घर में था नही। बुझे दिल से उसके पिता पड़ोसी के घर गए; पर उसने द्वार ही न खोला।

हद दरजे की अपनी लाचारी से दुखी होकर वह घर आकर पड़ रहे। आँख लग गई तो स्वप्न देखा कि रसूल मुहम्मद कह रहे है—"रज न करो। तुम्हारी यह लडकी खुदा की बडी ही प्यारी होगी। बेहद वफादारी के साथ उनकी इबादत करेगी। मेरी उम्मत (समुदाय) के ७० हजार इसानो का उसके ज़रीआ गुनाहों का छुटकारा होनेवाला है। तुम एक काम करो। एक कागज पर जो बताता हूँ, वह लिख कर अमीर बसरा के पास भेज दो :

"कि तू हर रोज रात को एक हजार दुरूद (रसूल पर सलाम) देता है और जुमा की रात को ४०००; पर इस जुमा की रात को तो तू अपना वह दुरूद देना भूल गया। इससे बतौर कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) रुक्काहजा को चार सौ दीनार दे दे।" आँख खुली तो वह बहुत रोए—रसूल को मेरे लिए कितना कष्ट करना पड़ रहा है। पर स्वप्न मे मिले आदेश के अनुसार पत्र लिख कर दरबान के हाथों अमीर बसरा के पास भेज दिया।

अमीर ने जब वह कागज़ देखा तो बहुत विस्मित हुआ। सचमुच वह दुरूद देना भूल गया था। पर उसकी प्रसन्नता उसके विस्मय से भी अधिक थी, रसूल को उसका ख़याल है। वह जो दुरूद देता है उसे रसूल स्वीकार करते है। उसने १० हज़ार दीनार शुक्राने में फ़कीरों को बाँटने का हुक्म दिया और ४ सौ दीनार राबिआ के पिता के पास भेजे। इतना ही नहीं, वह खुद दौड़ा हुआ उनके पास आया और बोला, "जब ज़रूरत हो हुक्म दे, बजा लाऊँगा।"

जब राबिआ बड़ी हुई तो माता-पिता का देहान्त हो गया और उन्हीं

दिनों एक भयंकर अकाल पडा, जिसमें उसकी दूसरी तीन बहनें तितर-बितर हो गईं। राबिआ को भी किसी ने पकड़ पर गुलाम बना लिया, और फिर उसे किसी दूसरे ज़ालिम के हाथ बेच दिया। वह राबिआ से सख्त मेहनत लेता। राबिआ दिन में रोज़े रखती, मेहनत-मशक्कत करती और रात को जब सब सो जाते, वह अकेले में बैठकर दर्द भरे दिल से खुदा की इबादत करती।

एक दिन रात के समय जब वह सिज्दे में थी—सिसक-सिसक कर कह रही थी "तुमने मुझे दूसरे की मिल्कियत बना दिया है। इसलिए दिन में तेरे दरबार में आने की फ़ुरसत ही नही मिलती। उसीकी खिदमत में लगी रहती हूँ; पर ऐ मेरे दिल के मालिक! तू जानता है कि मेरी खाहिश तो तेरी खिदमत करने की है; तेरी दरगाह मेरी आँखों की रोशनी है; अगर आजाद होती, तो तेरी दी हुई इस ज़िदगी का हर लहमा तेरी खिदमत, तेरी इबादत मे ही बीतता। वैसे जो तेरी मर्ज़ी!"

दैवयोग से मालिक की आँख खुली। वह उठा, आवाज़ सुन कर उधर आया यह देखने के लिए कि यह कैसी आवाज है और कहाँ से आ रही है। उसने देखा, राबिआ सिज्दे में कुछ कह रही है। वह ध्यान से सुनने लगा। राबिआ की जुबान नही, उसका दिल बोल रहा था और एक दैवी ज्योति उसके सिर पर चमक रही थी। यह सब देखकर वह सन्न रह गया—यह तो कोई बहुत ही बड़ी पाक हस्ती है। इससे सेवा लेना तो बड़ा गुनाह है!

सबेरा होते ही मालिक ने राबिआ को गुलामी से आज़ाद कर दिया और बड़ी विनम्रता से कहा, "मेरे गुनाह (अपराध) माफ़ करे। अनजान में मुझसे बड़ी भूल हुई। अब आप आज़ाद है, जहाँ जाना चाहें जा सकती हैं। अगर यहाँ रहना चाहे तो मैं बड़ी खुशी से आपकी खिदमत करूँगा।" राबिआ वहाँ से चली आई और एकान्त में जाकर जी-जान से अपने कृपालु भगवान की आराधना में लीन हो गई।

उनकी साधना के सम्बन्ध में कहा जाता है कि वह दिन-रात आराधना

में निमग्न रहती। रोज एक हज़ार नमाज़ पढ़ती। इस तरह बहुत दिनों तक जंगलों में रही और फिर गोशानशीनी (एकांतवास) अख्तियार की। किसी से मिलती-जुलती न थी।

हसन बसरी नाम के प्रतिष्ठित और पहुँचे हुए सन्त भी वही रहते थे। दोनों की एक-दूसरे के प्रति बड़ी श्रद्धा थी। राबिआ कभी-कभी उनके उपदेश सुनने भी जाती।

मुसलमान होने के नाते, हज करने और मक्का-मदीने के दर्शन करने की उनकी इच्छा होना स्वाभाविक ही है; पर उन्होंने जब हज का इरादा किया उस समय तक अध्यात्म-लोक मे वह बहुत ऊँचे उठ चुकी थी। यहाँ तक कि फरीद्दुदीन अत्तार ने अपनी बहुमूल्य पुस्तक मे लिखा है कि काबा खुद उनके स्वागत के लिए आगे आया और दूसरे यात्रियों को वह अपने स्थान पर नही दिखाई दिया।

इस सबंध मे एक बड़ी ही मजेदार घटना घटित हुई—एक बुजुर्ग सन्त इब्राहीम-बिन-अदहम उसी समय चौदह वर्ष की यात्रा समाप्त करके मक्का पहुँचे। वह हर कदम पर रक्अत (एक विशेष ढंग की नमाज) पढ़ते। इसीलिए उनको चौदह वर्ष लगे; पर जब वह वहाँ पहुँचे तो उनको काबा नजर न आया।

बड़े दुखी हुए कि जिसके लिए इतनी मेहनत की वह नजरों से ओझल है। समझा, शायद आँखों मे फ़र्क आ गया है। बडी दीनता से भगवान् के आगे गिडगिड़ाए। भगवान ने उनके हृदय को आश्वासन देते हुए कहा, 'ऐ इब्राहीम! तेरी आँखो मे कोई फ़र्क नही है। काबा इस वक्त एक बूढ़ी औरत के इस्तिक़बाल के लिए गया है। इसीलिए तुम्हे नजर नही आ रहा।"

ऐसी कौन-सी भाग्यशालिनी, पुण्य-शीला महिला है वह कि जिसके स्वागत के लिए खुद काबा गया है। भगवान से वे यह पूछ ही रहे थे कि लकडी टेक कर आती हुई एक बुढ़िया को उन्होंने देखा। वे राबिआ थी। प्रेम भरे स्वर में झिड़कते हुए वे बोले, "अरी राबिआ! यह कैसा शोर और

हंगामा तुमने जहान में मचा रक्खा है !"

बूढ़ी राबिआ बोली, "शोर मैंने नहीं, शोर बरपा किया है तुमने कि चौदह बरस के लम्बे अर्से में खान-ए-काबा में आए हो।" इब्राहीम बोले, "मैं हर कदम पर नमाज़ अदा करता हुआ आया हूँ।" रहस्योद्घाटन-सा करती हुई राबिआ बोली, "तुम्ने नमाज पढ़कर रास्ता तय किया। मैंने बेखुदी और हलीमी से अपना रास्ता तय किया है।"

यह आध्यात्मिक इतिहास की एक बड़ी ही सुन्दर घटना है और एक स्वर्ण संयोग था कि दोनों एक ही समय काबा पहुँचे। नमाज और इब्राहीम के तप से कर्म और घमंड का भाव प्रकट हुआ, जिसकी कलई काबा के गायब होने से खुल गई। विनम्रता और दीनता से घमंड नष्ट होकर आत्म-समर्पिता खिल उठती है और इसी उच्चता को घोषित करने के लिए काबा द्वारा राबिआ का स्वागत हुआ।

पिसे हुए सुरमे को पीसने के लिए ही मानो लिखने वाले ने लिखा है कि हज करने के बाद राबिआ रो-रोकर प्रार्थना करने लगी कि मेरा हज यदि स्वीकार न किया गया तो यह एक बडी मुसीबत होगी। फिर प्रेम भरी बेतकल्लुफी से बोलीं, "मालिक ! तुमने हज पर भी नेक वादा फ़रमाया है और मुसीबत पर भी। नामंजूर हज मुसीबत है। यह कहो कि इस मुसीबत का सबाब (पुण्य) क्या है ?"

राबिआ बसरे वापस आकर आराधना मे लीन हो गईं कि इतने में फिर हज का समय आया। उन्होने सोचा, पिछली बार काबा ने मेरा सम्मान किया था, अबके मैं काबा का सम्मान करूँगी और पहलू के बल लुढ़कती हुई सात बरस मे काबा तक पहुँची। कृषकाय, तपोनिष्ठ राबिआ के प्यार भरे हृदय मे अपने प्यारे के दर्शनों की लालसा जागी, तो वहाँ से गहरी फटकार आई :

"ऐ दीदार की प्यासी राबिआ ! यह तेरे दिल में क्या ख़ाहिश पैदा हुई है ? अगर तू यही चाहती है तो कह मैं अपनी तजल्ली (तेज) दिखाऊँ, और दम भर में तू जल कर ख़ाक का ढेर हो जाय ?" राबिआ ने दीनता

से कहा, "मेरी यह ताकत कहाँ जो ऐसा कहूँ। हाँ, इतना ज़रूर कहूँगी कि दीदार की मर्ज़ी नही है तो मुझे मर्तब-ए-फ़ुक्र (आत्म-तुष्टि) बख्शा जाय।"

क्षण भर में सब-कुछ दे सकने की शक्ति वाले भगवान किसी कंजूस का दिल उधार लेकर बोले, "राबिआ, फ़ुक्र तो हमारे कहर (बलाओं) का खुश्क साल है, और यह उन मर्दों (तेजस्वियो) के लिए है, जो हममें अपने-आपको खो देते है, बाल भर भी फ़ासला नही रहता और तब हम मामला पलट देते है, यानी उन्हे अपने से दूर कर देते है; फिर भी वे दिल पर मैल नही लाते है, नाउम्मीद नही होते; हमारी क़ुर्बत (सहवास) हासिल करने के सरूर मे मस्त रहते है।"

और फिर पत्थर का दिल करके बोले, "तू जमाने के अभी ७० पर्दों में है। जबतक इन पर्दो से निकल कर हमारी राह में सच्चे जी से कदम न रक्खे, तबतक तुझे फुक़ का नाम लेना भी वाजिब नही।" फिर बोले, "ऊपर देख", और राबिआ ने देखा तो लहू की एक नदी-सी आकाश में उमडती दिखाई पडी। गैब (परोक्ष) से आवाज आई, "ये दरिया हमारे प्यारों की आँखो के खून का है, जिन्होने हमारी राह में अपने को मिटा दिया।"

मालूम होता है, राबिआ के उस अहंकारी तप से भगवान सन्तुष्ट नहीं हुए। उन्होंने सात वर्ष पहलू के बल चलने की उस क्रिया पर एक छींटा कसा। आखिर राबिआ बोली, "मगर तुम मुझे अपने घर मे रहने की इजाज़त नही देते, और सच तो यह है कि मै इस लायक हूँ ही नही, क्योंकि मैंने तुम्हारी मर्ज़ी के बिना तुम्हारे दीदार की तमन्ना की सो मुझे बसरे जाकर अपनी इबादत करने की मंजूरी अता करो।"

एक बार जब वे हज को गईं तो उस समय उनके पास एक बहुत ही दुर्बल गधा था। उसी पर वह अपना सामान लाद कर काफ़िले के साथ चलीं। मार्ग मे गधा मर गया। लोग बोले, "आपका सामान हम ले चलेंगे।" उत्तर दिया, "तुम जाओ, मै तुम्हारे भरोसे नहीं आई हूँ।" जब सब चले गए तो दर्द भरे प्यार से कहा, "ये तुम्हारे क्या ढंग हैं? क्या

सातों आस्मानों के मालिक एक गरीब औरत के साथ ऐसा ही सलूक करते है ? पहले तो अपने घर की ओर बुलाया और अब रास्ते में गधे को मार दिया !"

वह कह ही रही थी कि इस बियावान (जंगल) मे निपट अकेली मैं भला क्या करूँ कि गधा ज़िंदा हो उठा। खुशी-खुशी सामान रख कर वह आगे चली और लोगो ने लिखा है कि वह जानवर उसके बाद भी बहुत दिनों तक ज़िन्दा रहा। मक्का के निकट पहुँच कर वह एक जंगल मे ठहरी। उनके मन मे मन्थन हुआ—मैं एक मुट्ठी खाक हूँ और काबा पत्थर का मकान, मैं चाहती हूँ कि बिला वासिता (माध्यम) तू मिल जाय।

वह बोले, "ऐ राबिआ ! मेरे दीदार की यह कैसी तमन्ना तेरे दिल में पैदा हुई है? क्या तू नही जानती कि मूसा की दुआ पर मैंने अपनी तजल्ली (तेज) का एक ही कतरा कोहेतूर[1] पर भेजा था जिससे पहाड़ टुकड़े-टुकड़े हो गया ? क्या तू चाहती है कि तेरे लिए मैं अपना जलाल ज़ाहिर करूँ और यह दुनिया नेस्तोनाबूद हो जाय ! और सारे आलम का खून तेरे एमाल-नामे मे लिखा जाय ?"

अब राबिआ अपने वतन बसरे मे आकर इबादत करने लगी। किसी ने लिखा है कि जब वह हज को गई थी और काबा को अपने स्वागत के लिए आते देखा तो कहा, "मैं खान-ए-काबा को क्या करूँगी, मुझे तो मालिके-काबा चाहिए।" उन्होंने विवाह नहीं किया था। किसी सन्त ने जब विवाह का ज़िक्र छेड़ा तो बोली, "यह सवाल तो तुम उससे करो कि जिसकी मैं मिल्कियत हूँ !"

एक बार दो सन्त मिलने आए। भूखे थे। यह भी सोचा—राबिआ के यहाँ जो मिलेगा, हलाल यानी पाक होगा। उसके पास दो रोटियाँ थी। वह उनके सामने रख दी। अभी खाना शुरू नहीं किया था कि एक फ़कीर आया और राबिआ ने वे रोटियाँ उठा कर उसे दे दी। कुछ देर में

---

१. वह पर्वत, जिस पर हज़रत मूसा ने ईश्वर का प्रकाश देखा था।

एक दासी एक तश्तरी में कुछ खाना लाई, गिना तो १८ रोटियाँ थीं। राबिआ ने यह कह कर कि यह मेरे लिए नही है, उन्हे वापस कर दिया। कुछ देर बाद दासी फिर आई। अबकी गिना तो २० थी।

राबिआ ने अब सन्तों के सामने रख दी। सन्त भोजन करते समय मन-ही-मन इस घटना पर आश्चर्य कर रहे थे। जब भोजन कर चुके तो राबिआ से पूछा कि क्या राज था। राबिआ ने कहा, "जब तुम आए तो मैं जानती थी कि तुम भूखे हो। दो रोटियाँ नाकाफ़ी होगी। इधर खुदा ने कुरान मे कहा है कि मैं एक के बदले दस देता हूँ। इसीलिए जब वह फ़कीर आया तो मैने वे खैरात मे दे दी। बदले मे १८ बे-हिसाब थी, बीस वादा के मुताबिक थी। इसलिए ले ली।"

इतना गहरा विश्वास था उनको अपने प्रियतम मे और वह भी दोस्ती निभाने मे कमी न करते। एक बार वे सोयी हुई थी कि एक चोर आया। चादर उठाकर चला तो रास्ता न मिला। चादर रखदी तो रास्ता मिल गया। लोभ से फिर चादर ली तो फिर रास्ता गुम। कई बार ऐसा हुआ। आखिर आवाज आई, "क्यों अपने को परेशानी में डाल रहा है, मुद्दत हुई इसने अपने को मेरे सिपुर्द कर दिया। एक दोस्त सोता है, तो एक जागता है। कैसे मुमकिन है कि कोई उसकी चीज़ चुरा ले जाय ?"

उनकी अहिसा और सर्वात्मभावना से प्रसिद्ध धर्मोपदेशक और विद्वान सन्त हसन बसरी की आँख खुली। वे कहीं जंगल में थी। जंगली जानवर और परिन्दे मित्रभाव से उन्हे घेरे खडे थे। इतने में हसन उधर से कही आ निकले और उन्हे देखते ही पशु-पक्षी भयभीत होकर भागे। हसन के दिल को चोट लगी। पूछा, "यह क्यों ?" राबिआ ने कहा, "खाया क्या था ?" बोले, "गोश्त !" राबिआ बोली, "जब तुम उन्हें खाते हो तो वे क्यों न तुमसे भागे और डरे ?"

हसन बसरी भी बहुत ही ऊँचे दर्जे के सन्त थे। वह अक्सर रोते थे, और इतना, कि कहते है कि उनके आँसू पनाले मे बह निकलते। एक

बार आँसू की बूंदें पनाले से किसी पर गिरीं तो उसने पूछा, "यह पानी कैसा है?" हसन बोले, "भाई तू इन्हे धो डाल, ये नापाक की आँखों के आँसू है।" राबिआ पर भी एक बार आँसू की बूँदे गिरी तो उसने हसन से कहा, "अगर रोने में मक्कारी है तो न रो ताकि अन्दर एक दरिया उमड उठे जिसमे तेरा दिल बह जाय और कही ढूंढ़े न मिले मासिवा अल्लाह के।"

हसन और राबिआ की आध्यात्मिक चुहल का एक जिक्र आया है। हसन ने दरिया पर मुसल्ला (नमाज की चटाई) बिछा कर कहा, "आओ हम दोनों नमाज़ पढे!" राबिआ न अपना मुसल्ला हवा में फैला कर कहा, आओ यहाँ, ऊपर नमाज पढे ताकि कोई देखे नही।" हसन का मुसल्ला पानी पर स्थिर था तो राबिआ का आकाश मे। हसन का दिल छोटा होता देख राबिआ ने साँत्वना के स्वर मे कहा, "देखो हसन, तुमने जो कुछ किया वह एक मछली कर सकती है और जो मैंने किया वह एक मक्खी कर सकती है। सच तो यह है कि जो असली काम है वह इन दोनों से कहीं ऊँचा है।"

पानी और हवा मे चलने से भी अधिक महत्वपूर्ण एक बात का ज़िक्र खुद हसन बसरी ने किया है। वह कहते है, "एक बार दिन भर और रात भर मै राबिआ के घर पर रहा। फ़ल्सफाना और सूफियाना चर्चाएँ होती रही, पर न तो मेरे दिल मे यह ख़याल आया कि मै मर्द हूँ और एक औरत से बात कर रहा हूँ और न राबिआ को ही यह भान हुआ कि वह औरत है।"

एक बार हसन बसरी कुछ सन्तों के साथ राबिआ के घर आए। उनके यहाँ कोई चिराग़ न था। लोगों को चिराग की जरूरत हुई तो उन्होंने अपनी उँगलियों पर फूंक मारी और उँगलियाँ चिराग की तरह जलने लगीं। स्वयं अत्तार ने यहाँ पर आशंका व्यक्त की है कि लोगों को उस पर विश्वास न आयगा। सच्ची बात तो यह है कि जैसे भौतिक और वैज्ञानिक नियम हैं वैसे ही इनके भी। पहली और अन्तिम बात है, "ईश्वरेच्छा और ईश्वरार्पण।"

एक बार ईश्वर-प्रेम के बारे में कुछ लोगों के पूछने पर राबिआ ने कहा, "मुहब्बत अजल (अनादिकाल) से अबद (अनंतकाल) तक गुज़री; पर कोई ऐसा न मिला जो उसका एक घूँट भी पीता। आखिर वासिलेहक (ईश्वर-मिलन) हुई", और वहाँ से आवाज आई, "हम उनको दोस्त रखते है और वह हमको दोस्त रखते है", (अर्थात्, जिनके दिल में ईश्वर की सच्ची भक्ति है वह ईश्वर के मित्र होते है और ईश्वर उनका मित्र।

राबिआ की एकनिष्ठ ईश्वर-भक्ति उनके एक मजेदार स्वप्न मे प्रकट हुई। स्वप्न में हजरत मुहम्मद ने राबिआ से पूछा, "क्या तू मुझे दोस्त रखती है ?" राबिआ ने उत्तर दिया, "ऐ रसूल अल्लाह! ऐसा कौन है, जिसको आपकी मुहब्बत न हो; पर खुदा की मुहब्बत का मुझ पर ऐसा गल्बा (प्रभुत्व) है कि उनके सिवा किसी की दोस्ती और दुश्मनी के लिए मेरे दिल मे जगह ही नही है।" और भी एक बार कहा, "खुदा-परस्ती से मुझे फुर्सत हो तो शैतान से दुश्मनी करूँ !"

मुरीदो ने पूछा कि "जिस खुदा की आप इबादत (उपासना) करती है, उसको देखती भी है या नही ?" बोली, "अगर मैं उसको देखती नही तो उसकी परस्तिश (पूजा) क्यों करती ?" राबिआ अक्सर रोया करती थी। किसी ने कारण पूछा तो कहा, "मै उसकी जुदाई से डरती हूँ इसलिए कि उसकी खूगर (अभ्यस्त) हो गई हूँ। ऐसा न हो कि मौत के वक़्त यह आवाज़ आय कि तू हमारी दरगाह के लायक नही है।"

किसी ने पूछा, "खुदा बन्दे से किस वक़्त राजी होता है ?" राबिआ ने उत्तर दिया, "वह उस वक़्त राज़ी होता है जब बन्दा मेहनत पर स तरह शुक्र (कृतज्ञता) करे जैसे ने'मत (सुख-संपदा) पर करता है।" गुनाहगार की तौवा (पश्चात्ताप) कबूल होती है कि नहीं ? इस प्रश्न के उत्तर में कहा, "खुदा जबतक तौबा करने की ताक़त नही देता तबतक कोई गुनाहगार तौबा कर ही नहीं सकता ! जब वह तौबा की ताक़त देता है तो तौबा कबूल भी करता है।"

राबिआ का कहना था कि अल्लाह की राह पर हाथ-पैरों से नही चला जाता सिवा दिल के। जब दिल बेदार (जाग्रत) हो जाय तो शरीर के और अंगों की सहायता की आवश्यकता नही रहती। बेदार (जाग्रत) दिल वह है जो हक़ में गुम हो जाय। उसे फिर शरीर का भान ही कहाँ! यही दर्जा फ़नाफिल्लाह का है, अर्थात्, ईश्वर-प्रेम में आत्मविस्मृति। दिल को ऐसा रंगों कि सब उसी रंग में रंग जाय।

मोम, सुई और बाल भेज कर राबिआ ने एक सन्त को कहलाया, "मोम की तरह जल कर दूसरों को रोशनी दो। सुई खुद नंगी रहती है; मगर दूसरों को कपडे सी कर पहनाती है, वैसे ही तुम भी खल्क (जनता) की बेगरज़ खिदमत करो, तब तुम बाल की तरह लचकीले, हलीम और वेखतर हो जाओगे।" हसन ने पूछा कि तुमने यह दर्जा कैसे पाया। बोली, "मैने दुनिया की सारी चीजो को खुदा की याद मे डुबा दिया और खुदा को पाया कोरी इबादत से।"

राबिआ की मान्यता थी कि वाचिक त्याग झूठों का काम है, और अहंकार पूर्वक त्याग करने से अहंकार-त्याग की आवश्यकता बनी रहती है। "सब्र अगर मर्द होता तो करीम होता" इससे उनका मतलब यह है कि अविचल सन्तोष ईश्वर की कृपा का कारण होता है। ईश्वरीय ज्ञान का एक ही अर्थ है कि मन ईश्वर की ओर चले। ज्ञानी का लक्षण यही है कि वह ईश्वर से शुद्ध और पवित्र अन्तःकरण माँगे और फिर उसे ईश्वर ही को सौंप दे ताकि वह सुरक्षित और दुनिया के नशे से दूर रहे।

सालेह आमरी नाम के सन्त अक्सर कहते थे कि जब कोई किसी का दरवाज़ा खटखटाता है तो कभी-न-कभी दरवाज़ा खुल ही जाता है। एक बार राबिआ के सामने जब उन्होंने यह कहा तो वे बोली, "यह कब तक कहते रहोगे कि खुलेगा; पहले बताओ कि वह बन्द कब हुआ जो आइंदा कभी खुलेगा।" यह सुन कर सालेह को होश आया। उनकी बड़ी प्रशंसा की। कोई आदमी 'हाय ग़म! हाय ग़म!' कहता था। सुन-कर बोलीं "अरे हाय बेग़मी कह, क्योंकि ग़मवाले को तो साँस लेना भी

दूभर है, बोलना तो दरकिनार !"

एक व्यक्ति ने सर पर पट्टी बाँध रक्खी थी। पूछने पर बताया कि सर में दर्द है। राबिआ ने पूछा, "तेरी उम्र क्या है ?" बोला, "३० बरस।" पूछा, "इन ३० बरसों में बीमार रहा या तन्दुरुस्त ?" बोला, "तन्दुरुस्त।" राबिआ ने कहा, "इतने दिन ठीक रहा इसके शुक्राने मे तो तूने पट्टी कभी न बाधी और एक दिन की बीमारी में शिकायत की पट्टी बाँधी है।" वह छुरी भी पास में न रखती थी इस भय से कि वो महबूब (प्यारा) और उनमें जुदाई पैदा न कर दे।

एक बार सात दिन तक रात-दिन कुछ न खाया। आठवे दिन भूख लगी, प्याले मे कोई रसा दे गया था। वह चिराग जलाने उठीं कि बिल्ली ने प्याला उलट दिया। पानी से रोजा खोलना चाहा तो चिराग बुझ गया और आबखोरा हाथ से गिर कर टूट गया। दुखी होकर चीख उठी, "या अल्लाह ! ये क्या है जो तू मेरे साथ कर रहा है ?" आवाज आई, "ऐ राबिआ, अगर तू चाहे तो दुनिया की ने'मत तुझे दे दूँ और अपना गम तेरे दिल से निकाल लूँ।"

वह बोले, "देखो राबिआ ! तुम्हारी भी एक मुराद है और हमारी भी एक मुराद है। ये दोनों मुरादे एक जगह नहीं रह सकतीं। हमारा ग़म और ने'मते-दुनिया (सासारिक-सुख) दोनों का गुज़र एक दिल में मुमकिन नही।" ये आवाज सुन कर राबिआ ने अपना दिल दुनिया से उसी तरह हटा लिया जैसे कोई मरनेवाला संसार की सारी आशाएँ छोड़ देता है। एक दम विरक्त होकर नित्य प्रार्थना करती—मेरे दिल को अपनी ही ओर लगाए रख, ताकि दुनिया उसे अपनी ओर न खीच सके।

वह प्रायः रोया करतीं। लोगों ने कहा, "आपको कोई बीमारी तो है नहीं, फिर क्यों रोती है ?" बोलीं, "मेरे सीने के अन्दर ऐसी बीमारी है जिसका इलाज कोई हकीम नहीं कर सकता (प्रभु-मिलन ही उसकी एक मात्र औषधि है), क़यामत के दिन मेरी इस दर्दमन्दी पर शायद उन्हें रहम आय।" कपडे बहुत ही फटे-पुराने थे। एक वृद्ध सन्त ने कहा, "आपके

बहुत मुरीद है जो एक इशारे पर सब सामान ला देगे।" बोलीं, "दुनिया का जो मालिक है—वही सब को देता है। फिर मै क्यों किसी से कुछ माँगूं ?"

एक बार वह बीमार हुई। लोगों ने कारण पूछा तो कहा, "मेरे दिल में जन्नत की ख़ाहिश हुई, वह ख़फा हुए। उनकी नाराजगी इस बीमारी का कारण है।" शायद इसी बीमारी के समय सन्त हसन जब उन्हे देखने गए तो बसरे के एक अमीर को थैली लिये द्वार पर रोता पाया। बोला, "राबिआ के लिए ये दीनार लाया हूँ पर जानता हूँ कि वे लेगी नही। आप कहे तो शायद ले लें।" हसन ने जाकर कहा तो बोली, "ख़ुदा को जानने के बाद मख़लूक से लेना तर्क (त्याग) कर दिया है कि क्या मालूम हलाल है या हराम !"

सन्त सफियान और अब्दुल वहीद आमरी भी एक दिन इयादत (रोगी का हाल-चाल पूछना) को गए तो राबिआ के आगे वे बोले न सके। राबिआ के आदेश पर सफ़ियान बोले, "आप ऐसी दुआ करे कि आप पर जो तकलीफ़ आई है, दूर हो जाय।" बोली, 'ऐ सफ़ियान, ये तकलीफ ख़ुदा की ही दी हुई है। मै उसकी दी हुई चीज की क्योंकर शिकायत करूँ ? दोस्त को ज़ेबा नही कि दोस्त की मर्जी की मुखालिफ़त करे।" तब सफ़ियान ने पूछा, "क्या आपका दिल किसी चीज़ को चाहता है।" बोली, "साहबे-इल्म (ज्ञानी) होकर कैसी बात पूछते हो। मैं बान्दी हूँ (सेविका) हूँ, बान्दी की अपनी ख़ाहिशे ही क्या !"

फिर बोली, "बारह बरस से मेरा दिल ख़ुरमे खाने को कह रहा है और वह बसरे मे है भी बहुत सस्ते, लेकिन अबतक मैंने नहीं खाए इसीलिए कि मै बान्दी हूँ। मालिक की मर्ज़ी के बिना अपनी मर्जी से कुछ करना कुफ़्र (नास्तिकता) है।" सफ़ियान बोले, "आपकी बातों मे दख़ल देने की किसी की ताक़त नही।" फिर कुछ नसीहत चाही। राबिआ ने कहा, "अगर तुम्हे दुनिया की मुहब्बत न होती तो तुम नेक मर्द होते।" सफ़ियान चौके, "ये आप क्या कहती है ?" राबिआ ने कहा, "मै सच कहती हूँ।"

राबिआ का मतलब था कि संसार का प्रेम तुम्हारे दिल में न होता तो संसारी बातों की तुम चर्चा न करते। संसार अनित्य है, इसलिए संसार की सभी चीज़े नाशवान हैं। फिर भी तुम पूछते हो कि मेरा दिल क्या चाहता है? सफ़ियान के दिल को यह बात लग गई तो रो पड़े। ईश्वर से प्रार्थना करने लगे कि या अल्लाह, तू मुझ से राज़ी हो। राबिआ बोलीं, "ऐ सफ़ियान, तुम्हे लाज नही आती कि उसकी रज़ा ढूंढ़ते हो जब कि तुम खुद उससे राज़ी नही हो!"

मालिक-बिन-दीनार नाम के सन्त मिलने आए तो देखा एक टूटी हुई बंधनी रखी है। उसीसे वे वुज़ करती और पानी पीती। एक पुराने बोरिये पर बैठी थी और सर रखने के लिए ईंट थी। बोले, "बहुत से अमीर दोस्त है, कहें तो आपके लिए कुछ माँगूं।" वह बोली, "क्या मुझे, तुम्हे और अमीरों को देने वाला एक नही है?" सन्त बोले "एक ही है।" वह बोली, "क्या वह हमे भूल गया है, और दौलतमन्दों की उसे याद है? नही तो क्यों उसे याद दिलाएँ! हमें यह हाल पसन्द है, क्योकि उसको पसन्द है।"

सफ़ियान ने देखा कि राबिआ शाम से नमाज़ के लिए खड़ी हुई, और सुबह कर दी। फिर बोली—उनकी इस मह्र के लिए उनका कैसे शुक्र करूँ। और कहा, "कल शुक्राने (कृतज्ञता) में रोज़ा रखूंगी।" कभी-कभी प्रार्थना के समय प्रेम-भीरुता से कहती, "या अल्लाह! अगर तू मुझे दोज़ख में भेजेगा तो मै तेरा एक ऐसा राज़ ज़ाहिर कर दूंगी कि तू मुझ से दूर भाग जायगा!" कहतीं, "दोज़ख तू अपने दुश्मनों को दे, इबादत अपने दोस्तों को, मेरे लिए तो तू ही है बस।"

बोलीं, "यदि मै दोज़ख के डर से या जन्नत के लोभ से तेरी इबादत करती हूँ तो मेरी ये ख़ाहिशें पूरी न हों और अगर तेरे ही लिए ये मेरी इबादत हो, तो मुझे अपना दीदार दे", और कहा, "ऐ खुदा! अगर तू मुझे दोज़ख में भेजेगा तो मै यह गिला करूँगी कि मैने तुझे अपना दोस्त बनाया। दोस्त, दोस्त के साथ ऐसा सलूक नहीं करते।" आवाज़ आई, "ऐ राबिआ! तू दिल से ऐसी ख़ाहिशें न कर, हम तुझे अपने पास ही रखेंगे।"

राबिआ प्रार्थना में कहा करती कि मेरा काम और मेरी एक ही ख़ाहिश दुनिया मे यह है कि तेरा नाम जपूं और दिल मे तेरी याद बनी रहे और अन्त काल में तेरे दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हो। मेरी तो इच्छा यही है आगे तू मालिक है, जैसा चाहे कर। एक रोज़ बोलीं, "ऐ ख़ुदा, या तो मेरे दिल को हाज़िर कर, यानी वश मे ला दे और पूजा में लगा दे, या फिर मेरी इस बेदिली की इबादत को हो मंजूर कर।"

जब राबिआ का अन्त समय आया तो जो बहुत-से बड़े-बडे सन्त और शेख पास थे उनसे कहा, "तुम लोग उठ आओ और फ़रिश्तों के लिए जगह खाली कर दो।" सब लोग बाहर चले आये और दरवाज़ा बन्द कर दिया। एक आवाज़ लोगो ने सुनी। एक आयत राबिआ ने पढ़ी और कहा, "ऐ रूहे मुत्मईन ! अब तू अपने ख़ुदा की ओर चल।" फिर देर तक खामोशी रही। अन्दर जाकर लोगों ने देखा कि ब्रह्म-लीन हो गई है।

उपस्थित सन्तो ने कहा, "राबिआ दुनिया मे आई पर कभी प्रीतम—ख़ुदा की किसी तरह की कोई अवज्ञा नही की और न कभी अपनी तरफ से यही कहा कि ऐ ख़ुदा तू मुझे इस तरह रख या उस तरह। मालिक से ही जब उन्होंने कभी कुछ न माँगा तो फिर बन्दों से तो वह माँगती ही क्या ! आज वह दुनिया से चली गई। ख़ुदा की उन पर मेहर हो।"

किसी ने स्वप्न में देखा तो पूछा—मुन्करनकीर[1] से कैसी निभी ? राबिआ ने जवाब दिया कि जब वे आये और उन्होंने मुझसे सवाल किया कि तेरा रब कौन है, तो मैंने कहा कि पलट आओ और उनसे कहो कि जब तूने एक नादान औरत को इतना मशगूल होते हुए भी कभी न भुलाया तो वह तुझे क्योंकर भूल जाती, हालाकि दुनिया मे तेरे सिवा किसी से उसे वास्ता न था। फिर क्यों फरिश्तों के ज़रीआ उससे सवाल करता है ?

---

१. मुन्कर और नकीर वो फ़रिश्ते हैं जो कब्र में मुर्दों से पूछताछ करते हैं।

: २ :

फ़ज़ील-बिन-अयाज़

फ़जील की जीवनी बड़ी ही विचित्र है। इन्हें मुस्लिम जगत का बाल्मीकि कह सकते है, पर बाल्मीकि और फ़जील में कुछ अंतर है। बाल्मीकि जब डाकू थे तब वह निरे डाकू ही थे, भक्त न थे और जब वह डाकू-पन छोड़कर भक्त हुए तो संस्कृत साहित्य के सर्वमान्य आदि-कवि बने। फ़जील डाकुओं के सरदार थे। वह लूट का माल अपने साथियों में बाँट देते और जो चीज़ पसन्द आती स्वय ले लेते। किन्तु उनकी विशेषता यह थी कि डाकुओं की सरदारी करते हुए उनकी ईश्वर-भक्ति चल रही थी। वह नमाज़ पढ़ते और सबके साथ मिलकर नमाज पढ़ते। जो डाक नमाज मे शामिल न होता उसे वह अपने दल से निकाल देते। उनके रोज़े-नमाज बराबर चलते और बड़ी लगन के साथ।

एक बार उस तरफ एक बड़ा काफ़िला आ निकला। फ़जील का नाम सुनकर लोग बहुत चिन्तित हुए। एक आदमी के पास बहुत-सी नक़दी थी। उसने सोचा, इस जंगल मे इसे गाड़ दूँ तो लुटने से बच जायगी। वह लेकर चला तो देखा एक संत खेमे में मुसल्ला बिछाए माला फेर रहे है। उसके मन मे कुछ ऐसा लगा कि संत इशारे से कह रहे है कि रुपया रख दो। वह रुपया रखकर आया तो काफ़िला लुट चुका था। उसने सोचा जो कुछ बचा है वह भी उन्ही संत के पास रख जाऊँ, मगर जब वह वहाँ पहुँचा तो देखा कि लुटेरे लूट का माल बांट रहे है। वह दिल में अफ़सोस कर ही रहा था कि फ़ज़ील की उस पर नज़र पड़ी।

पुकारा, "कौन है ?" सहमा हुआ-सा वह आगे आया। फ़ज़ील

ने पूछा, "यहाँ क्यों आया ?" वह बोला, "अपनी अमानत लेने।" फ़ज़ील ने कहा, "जहाँ रखी है, ले ले।" वह रुपया लेकर जब चला तब डाकुओं ने फ़ज़ील से कहा, "यह आपने क्या किया ? इस लूट में नक़दी बिल्कुल न मिली और आपने घर से नक़दी वापिस कर दी।" फ़ज़ील न उस समय जो उत्तर दिया वह एक बहुत ही ऊँचे संत के हृदय से निकला हुआ उद्‌गार कहा जा सकता है। वह बोले, "उसने मुझ पर नेक-गुमान (सद्‌-विचार) किया और मैं अल्लाह पर नेक-गुमान करता हूँ। मैंने उसके गुमान (भ्रम) को सच्चा किया ताकि खुदा मेरे गुमान को अपनी मेहबानी से सच्चा करे।"

एक दूसरे काफ़िले को लूटकर जब डाकू कुछ दूर पर खाना खाने बैठे तो काफ़िले के एक आदमी ने आकर पूछा, "तुम्हारा सरदार कहाँ है ?" बोला, "दरिया किनारे नमाज़ पढ़ रहे है। वह खाना नहीं खाते। वह रोज़ा रखते है।" कहा, "न रमज़ान है और न वक्ते नमाज़ !" लुटेरे बोले, "वे नफ़्ल पढ़ते है।" यहाँ नफ़्ल पढ़ने का आशय यह है कि फ़ज़ील ईश्वर की प्रार्थना और प्रेम में मग्न होकर रमज़ान न होने पर भी रोज़े रखते और पंज-वक्ता नमाज़ के अलावा भी रात-दिन अक्सर नमाज़े पढ़ा करते थे।

उस आदमी को यह सुनकर बहुत आश्चर्य हुआ। पता पूछकर वह फ़ज़ील के पास आया और कहा, "चोरी और डाके के साथ नमाज़ और रोज़े का मेल कैसा ?" फ़ज़ील कुंठित न हुए। उन्होंने एक आयत पढ़कर सुनाई, जिसका आशय यह था कि लोगों ने अपने पापों को स्वीकार किया और साथ ही अपने पुण्यों को भी मिला दिया। फ़ज़ील में हिम्मत और मुरव्वत उस समय भी थी। उनका यह नियम था कि जिस काफ़िले में कोई औरत होती उसके पास जाते भी नही। जिसके पास थोड़ा माल होता उसे न लूटते और जिसे लूटते उसके पास छोड़ अवश्य देते। तब भी उनका ध्यान नेकी की ओर ज़्यादा रहता।

फ़ज़ील का एक स्त्री से प्रेम था। वह लूट का अपना हिस्सा उसी

के पास भेज देते और कभी-कभी खुद भी उसके पास जाते ? ऐसे समय एक रात को एक काफ़िला आया और उस काफ़िले मे किसी आदमी ने यह आयत पढी "क्या नही आया ऐसा वक्त ईमानवालों के लिए कि उनके दिल अल्लाह के ख़ौफ से डरे ?" यह सुनकर वह बाणविध-व्यक्ति की भांति तड़प उठे। कहने लगे, "अफ़सोस है कि लूट-मार मे अपनी उम्र जाया कर रहा हूँ। वक्त आ गया है कि मै खुदा की राह पर चलूँ।" वह सब-कुछ छोडकर इबादत मे लग गए। फिर जिनको उन्होंने सताया था उनसे जाकर माफी भी मागी। औरों ने तो माफ़ कर दिया पर एक यहूदी ने उन्हे माफ़ करना मंजूर न किया।

जब उससे बहुत कहा गया तो उसने शर्त रखी कि मै तब माफ करूँगा जब तुम यह सामने का टीला यहाँ से हटा दो। फ़ज़ील ने मिट्टी और रेत को ढोना शुरू किया। इतने मे ज़ोर की आधी आयी और वह टीला उड़ गया। यहूदी पर इस आकस्मिक घटना का बडा प्रभाव पड़ा और वह फ़जील से बोला, "मैने कसम खा ली है कि जबतक तुम मेरा लूटा हुआ माल वापिस न दोगे तबतक मै तुम्हे माफ़ न करूँगा। मेरे सिरहाने अशर्फियो की थैली रखी हुई है, तुम मुझे वह उठा कर दे दो ताकि मेरी कसम पूरी हो जाय।" फजील ने ऐसा ही किया। अब वह मुसलमान हुआ और बोला, "जानते हो मै मुसलमान क्यों हुआ ? तौरेत मे मैंने पढ़ा कि जिसकी तौबा सच्ची होती है उसके हाथ से मिट्टी भी सोना हो जाती है। उस थैली मे थी मिट्टी, निकली अशर्फ़ियाँ।"

फजील ने अपने एक मित्र से कहा कि मैंने बहुत से गुनाह किये है। उनकी सफाई के लिए तुम मुझे बादशाह के पास ले चलो। बादशाह ने उनकी इज़्ज़त की और कहा, "तुम बहुत ही भले आदमी हो।" जब वह घर आए तो बीवी को आवाज दी, पर उनके स्वर में इतनी पीड़ा थी कि बीवी ने डर कर पूछा, "क्या कही चोट लगी है ?" बोले, "हाँ।" पूछा, "कहाँ, किस अंग पर ?" बोले, "दिल पर।" फिर हज का इरादा किया। बीवी ने भी चलने का आग्रह किया और साथ हो ली। मक्का पहुँच

कर वहाँ मुजाविर (दरगाह के सेवादार) बन गए। बहुत से सिद्धों और संतों के दर्शन किये और इमाम अबु हनीफ़ा के सत्संग से खूब लाभ उठाया। रिश्तेदार मिलने आये तो द्वार न खोला। उनके बहुत हठ करने पर छत से कहा, "अल्लाह तुम्हे अक़्ल दे। नेक काम मे लगाए।"

उनके रिश्तेदारो पर इस बात का कुछ ऐसा असर हुआ कि वह बेहोश होकर गिर पडे। जब होश में आये तो घर की ओर रवाना हुए? फजील तो बालाखाने पर खडे होकर रोया किये; पर न उतर कर आये और न उन्हें ही आने दिया। दुनियादारों के प्रति उनकी इस बेएतिनाई (उपेक्षा) ने एक बार हारूँ रशीद को भी खूब रुलाया। फजील बरमकी को साथ लेकर पहले सफियान सूरी के पास पहुँचे। वहाँ खलीफा के लिए अत्यधिक आदरभाव देख कर खिन्नता से बोले, "अजी तुम मुझे कहाँ ले आए हो?" फिर इन्ही एकांतवासी फजील-बिन-अयाज के यहाँ आए कि जिनकी चर्चा यहाँ चल रही है। फजील उस समय यह आयत पढ़ रहे थे, "क्यो वे लोग इस बात की उम्मीद करते है कि जिन्होंने बुरे काम किये है, हम उन्हे उन लोगों के बराबर कर दे जिन्होने नेक काम किये है।"

खलीफा हारूँ रशीद बडे ही प्रभावित होकर बोले, "भला इस आयत से बढ़ कर और क्या नसीहत हो सकती है।" फिर दरवाजा खटखटाया। अन्दर से आवाज आयी, "तुम कौन हो?" बरमकी ने कहा, "अमीर-उल्मोमनीन तशरीफ लाए है।" जवाब मिला, "मुझे उनसे क्या, और उन्हे मुझसे क्या मतलब? जाओ मुझे मशगूल (प्रवृत्त) मत करो।" बरमकी ने रौब जमाया, "हाकिमे वक्त की इताअत बाजिब (आज्ञापालन उचित) है।" और सुना, "देखो, मुझे रज मत दो।" बरमकी ने कहा, "आने की इजाज़त दो नही तो बिना इजाज़त ही अन्दर चले आयंगे।" बोले, "इजाज़त तो है नही। वैसे तुम आज़ाद हो।" दोनों के अन्दर आते ही चिराग़ बुझा दिया ताकि खलीफा की सूरत न दिखे। अंधेरे में खलीफ़ा का हाथ संत के हाथ से छू गया। बोले, "कितना मलायम है यह हाथ अगर दोज़ख से बच सके।"

यह कह कर ध्यान-मग्न होकर नमाज़ पढ़ने लगे और हारूँ रशीद थे कि बैठे रो रहे थे। नमाज से निवृत्त होने पर हारूँ ने बडी नम्रता से कहा कि कुछ नसीहत कीजिए। बोले, "तुम्हारे पिता रसूल-अल्लाह के चाचा थे। उन्होंने कहा कि मुझे किसी कौम का सरदार बना दीजिए। रसूल ने जवाब दिया कि तुम्हे नफस (इंद्रिय) का सरदार बनाया। (आत्म-शासन लोक-शासन से कही अच्छा है।) हुकूमत से कयामत मे नदामत (लाज-हया) हासिल होगी।" खलीफा ने कहा, "कुछ और कहिए।" बोले, "हज़रत उमर जब खलीफ़ा हुए तो उन्होंने कुछ बुजुर्गों को बुलाकर सलाह माँगी। एक ने कहा—अगर नजात (मुक्ति) चाहते हो तो बूढों को पिता, जवानों को भाई, छोटों को पुत्र और स्त्रियों को माँ-बहन समझो और उनसे ऐसा ही बर्ताव करो।"

हारूँ रशीद ने कहा, "कुछ और कहिए।" बोले, "मुस्लिम सल्तनत की अपने घर की तरह देख-रेख रख और खल्क को बेटे की तरह हिफाज़त कर।" कहा, "कुछ और कहिए।" बोले, "बुजुर्गो के साथ मेहरबानी और भाइयो के साथ और औलाद के साथ नेकी कर।" फिर कहा कि मुझे डर है कि तेरी यह सुन्दर सूरत कही दोज़ख में जलकर बुरी न हो जाय। आयत सुनाई, "बहुत अच्छी सूरते कयामत के दिन दोजख में बुरी हो जायंगी और बहुत अमीर वहाँ क़ैद हो जायगे।" यह सुनकर हारूँ रशीद रोने लगा और कहा—कुछ और कहिए। बोले, "खुदा से डर और उसके जवाब के लिए तैयार रह क्योंकि तेरी सल्तनत के एक-एक मुसलमान के लिए तुझसे सवाल किया जायगा और खुदा हर बंदे की बात सुनकर तेरे और उसके साथ ठीक-ठीक इन्साफ़ करेगा।" इसके बाद हारूँ रशीद के दिल पर गहरी चोट करनेवाली बात फजील ने कही। वह बोले, "याद रख कि सल्तनत के ज़माने में अगर कोई बुढ़िया ग़रीबी के कारण अपने घर मे भूखी सो रही होगी तो वह कयामत में तेरा दामन पकड़कर खुदा से इन्साफ़ की तालिब होगी।" कहते है यह बाते सुनकर हारूँ रशीद रोते-रोते बेहोश हो गया और फ़ज़ील से बरमकी ने कहा, "बस, कीजिए, आपने

तो अमीर-उल्-मोमनीन को मार डाला।" बोले, "चुप रह आ'मा (ज्ञान-रहित) ! मैंने नहीं, तूने और तेरे जैसों ने इसे मारा है।"

इस आ'मा के ख़िताब मे जो ध्वनि थी उसने तो हारूँ रशीद को और भी बेकरार कर दिया। रोकर बोले, "ऐसा लगता है कि वह मुझे फ़रऊन समझते है।" फ़रऊन मिस्र का एक बडा ही अनाचारी, घमडी और नास्तिक राजा हो गया है। अंत मे हारूँ रशीद ने पूछा, "आप पर किसी का कर्ज तो नही है ?" बोले, "है, मुझ पर खुदा का कर्ज है, मैं उसे चुका नही पाता। जिस इताअत (सेवा भाव) के लिए उन्होने पैदा किया वह मुझसे बन नही पाती।" खलीफा ने कहा, "किसी इंसान का कर्ज तो नहीं है ?" बोले, "अल्लाह ने इतनी नेमतें दी है कि इन्सान से कर्ज लेने की हाजत (आवश्यकता) नही।" नजराने (भेट) के तौर पर एक हजार दीनार की थैली भेट कर खलीफा ने कहा :

"यह माले हलाल है। मुझे अपनी माँ से विरासत मे मिला था। आप इसे मंजूर कीजिए।" इस पर फ़ज़ील बोले, "अफसोस है कि मेरी नसीहते बेकार गयी। तूने उनसे फायदा न उठाया।" मैंने तो कहा, "जिसका हक (अधिकार) है उसको दे और तू गैर-हक़दार को दे रहा है। और देख तूने कैसा जुल्म करना शुरू किया है। कितनी हैरत की बात है कि मैने तो तुझे जन्नत की ओर माइल किया और तू है कि मुझे दोज़ख में डालने का ख़याल कर रहा है।" यह कहकर हारूँ रशीद को विदा करके द्वार बंद कर लिया। हारूँ रशीद बरमकी से बोले, "दरअस्ल सच्चा ज़ाहिद (संत पुरुष) यही है।"

संत फ़ज़ील एक दिन अपने लडके को गोदी मे लिये प्यार कर रहे थे। उस छोटे बच्चे ने पूछा, "आप मुझे दोस्त रखते है ?" फ़ज़ील ने कहा, "हाँ।" बच्चे ने फिर कहा, "और खुदा को भी दोस्त रखते है। मगर दो की दोस्ती एक दिल में नही रह सकती।" फ़ज़ील समझ गए। यह चेतावनी खुदा ही दे रहे हैं। तुरंत ही लड़के को गोदी से उतार कर आराधना में लीन हो गए। एक रोज इर्फ़ान (ब्रह्म-ज्ञान) में लोगों के दुःख दर्द की बातें

सुन रहे थे कि अचानक बोल उठे, "या अल्लाह ! अगर किसी कजूस से भी कोई इतनी आजिजी के साथ दौलत माँगता तो वह भी उन्हे नाउम्मीद न करता। तू तो बडा ही मेहबान है, अपनी मेहर से इनकी ख़ाहिश पूरी कर।"

लोगों ने पूछा, "क्या बात है कि खुदा से डरने वाले कही दिखायी नहीं देते?" बोले, "तुम खुद डरने वाले नही हो इसीलिए वह तुमसे पोशीदा है। अगर यह बात तुम में पैदा हो जाए तो वे तुमसे छिपे नही।" क्योकि यह क़ायदा है कि धर्म-भीरु को धर्म-भीरु और निर्भीक को निर्भीक दिखायी देता है। लोगो ने पूछा, "अस्ल यानी बुनियाद दीन की क्या है?" बोले, "अक़्ल!" पूछा, "अक़्ल की अस्ल क्या है?" बोले, "हिल्म यानी सहनशीलता!" पूछा, "अस्ल हिल्म क्या है?" बोले, "सब्र अथवा संतोष—आत्मतुष्टि।" पूछा, "जुहद (मुनिवृत्ति) अच्छा है कि रजा (संतुष्ट)।" बोले, "रज़ा, क्योंकि राजीबरजा (दूसरे के किये पर संतुष्ट) है, वह अपनी ओर से अच्छी चीज भी नही चाहता फिर बुरी क्यो चाहने लगा।"

संत सफियान सूरी एक रात को फजील के पास आए और प्रेमपूर्वक आध्यात्म-चर्चा करते रहे। जब चलने को हुए तो संतुष्ट स्वर में बोले, "आज की रात सब रातो से अच्छी और आज का जल्सा सब जल्सों से अच्छा रहा।" प्रत्युत्तर में फ़ज़ील ने कहा, "आज की रात सब रातो से बुरी और आज का जल्सा सब जल्सों से बुरा है।" "यह कैसे", सफ़ियान ने पूछा। फ़ज़ील बोले, "तमाम रात तुम इस फिक्र मे रहे कि ऐसी बात कहूँ जो मुझे पसंद आए और मै इस फ़िक्र में था कि ऐसी बात कहूँ जो तुम्हें पसंद आए। हम दोनों अल्लाह से गाफ़िल (लापर्वाह) रहे। बंदे के लिए तन्हाई (एकांत) ही अच्छी कि जहाँ उसका खुदा के साथ सीधा वास्ता रहे।" इसी विचार से अब्दुल्ला-बिन-मुबारक नामक संत को आता देखकर कहा, "पलट जाओ, नही तो मै चला जाऊँगा। तुम इसीलिए आये हो न कि तुम मुझसे बातें करो और मै तुमसे बाते करूँ।"

एक आदमी ने कहा कि मैं इसलिए आया हूँ कि आपके चरणों में बैठकर

प्रेम और भक्ति की कुछ बाते सीखूं, कुछ आध्यात्मिक लाभ उठाऊँ। कसम खाकर फ़ज़ील ने कहा, "यह काम वहशत (त्रास) और खतरे से भरा हुआ है। तुम वही लौट जाओ जहाँ से आए हो; क्योंकि तुम इसलिए आए हो कि तुम मुझे झूठ और फ़रेब दो और मै तुम्हे झूठ और फ़रेब दू।" सत्संग उतना ही अच्छा, जितने मे राही को राह बतायी जाय।

सच्चा सत्संग तो भक्त और भगवान का है। इसलिए वह चाहते कि बीमार हो जाऊँ ताकि जमात की नमाज में न जाना पड़े और न किसी को देखू। वह कहते कि इंसान को ऐसी जगह अकेले में बैठना चाहिए जहाँ उसे कोई देखे नही। कहते—मै बड़ा ही एहसानमद हूँ उन लोगों का, जो आकर मुझे सलाम नही करते और न बीमार पड़ने पर मुझे देखने आते है; क्योंकि उनका खयाल था कि उसकी अच्छाई दूर हो जाती है कि जो तन्हाई में नहीं रहता और लोगो से मिलता है। कहते—अपने ऐमाल (कर्म) का जिक्र न करो जबतक कि जरूरत न हो। खुदा से डरनेवाले की जुबान गूगी हो जाती है। जिस बंदे को अल्लाह दोस्त रखता है उसे गम देता है और जिसको दुश्मन रखता है उसे ऐशे-दुनिया (सासारिक ऐश्वर्य) देता है। जिसको अल्लाह का खौफ़ होता है, बेकार बात नही करता और दुनिया की मुहब्बत उसको नही होती। जो अल्लाह से डरता है तमाम चीजें उससे डरती हैं। जो अल्लाह से नही डरता खुद तमाम चीजों से डरता है।

कहते—तीन तरह के लोग दुनिया मे मुश्किल से मिलेगे। १. आलिमे बाअमल (कर्मवेत्ता), २. आमिल बाइख्लास (निष्कपट जीवी) ३. बिरादर बेऐब (निर्दोष भाई)। जो शख्स अपने भाई का बजाहिर (प्रकट में) दोस्त और बातिन (पृष्ठ) में दुश्मन होता है उसपर अल्लाह लानत करता है और वह खतरे में है। दुनिया को दिखाने के लिए अमल को दोस्त रखना और दिखावे के लिए अमल करना शिर्क है। शिर्क के मानी है खुदा की जगह किसी और को पूजना और ऐसे आदमी खुदा को नहीं दुनिया को पूजते है। इख्लास उसका नाम है जो इन दोनों बुराइयों से दूर हो। भगवान के लिए ही काम करना और भगवान के प्रेम में मस्त

रहना ही इख़्लास अर्थात् निष्कपट जीवन है। कहते—बहुत से लोग ग़ुसलखाने से पाक (पवित्र) होकर आते है और बहुत से मन के मैले काबा से भी नापाक होकर (अपवित्र) आते है। कोई जानवर को गाली देता है तो जानवर कहता है—लानत है उस पर जो ज़्यादा गुनाहगार है।

एक बार कहा—अगर मुझे मालूम हो कि मेरी दुआ कबूल होगी तो मै बादशाह के लिए दुआ-ए-ख़ैर (शुभकामना) करूँ ताकि तमाम ख़ल्क को फ़ायदा हो, अपने लिए दुआ माँगने से सिर्फ अपना फ़ायदा है। मालूम होता है फ़ज़ील की माली हालत अच्छी थी, क्योंकि प्रार्थना के समय वह कहते—या अल्लाह, तू अपने दोस्तों के बाल-बच्चों को भी भूखा-नंगा रखता है, इतनी गरीबी देता है उन्हे कि रात को उनके घर मे चिराग़ भी नही जलता। फिर तूने यह दौलत क्यो दी है? क्या इसलिए कि तू मुझे अपने दोस्तों के मर्तबे का नही पाता। फिर रोते और कहते—अल्लाह, मेरे हाल पर रहम कर, मुझे अज़ाब (पीड़ा) से महफ़ूज (सुरक्षित) रख। तीस साल तक वह न हँसे, हँसे तो पुत्र की मृत्यु पर और वह भी इसलिए कि ख़ुदा इस मौत से राज़ी था।

जब उनका अंत समय आया तो फ़ज़ील ने मार्के की बात कही। वह बोले—मुझे न तो पैगम्बरो पर रश्क (ईर्षा) है, क्योकि उन्हे भी कब्र और क़यामत, दोजख़ और पुल्सरात के मरहले (मार्ग) तय करने पड़ते है और न फरिश्तो पर ही रश्क आता है, क्योकि उन्हे इनसे भी अधिक ग़म रहता है। मुझे रश्क आता है उन लोगो पर जो माँ के पेट से पैदा ही न हुए और न होगे। उनकी जो दो अविवाहित कन्याएं थी उनके सम्बन्ध मे बीवी को यह वसीयत की कि उन्हे जबल (पहाड) पर ले जाकर अल्लाह से कहना कि फ़ज़ील ने मरते वक्त कहा है, "जिन्दगी भर मैने इनकी परवरिश (पालन) की, अब यह तेरे हवाले है।"

आज्ञानुसार उनकी बीवी रोरोकर पहाड़ पर दुआ कर ही रही थी कि शाहे यमन अपने दो बेटो के साथ आये और लड़कियों को माँ से माँगकर ले गए और अपने बेटो के साथ धूमधाम से उन्हें ब्याह दिया।

: ३ :

इब्राहीम-बिन-अदहम

इब्राहीम बलख़ के बादशाह थे। मगर फ़कीरी का रंग उन पर इतना गहरा और पक्का चढा कि मक्का मे लकड़हारा बन कर अपनी रोजी कमाते और दूसरों को खिलाते। शाही लकड़हारे के रूप में उनकी कहानी किसी भी देश और जाति के लिए अत्यन्त मनोरंजक प्रतीत होगी। मनोरंजक ही नही, उनके जीवन मे तीव्र आध्यात्मिक संवेग, निस्सीम त्याग और बलिदान के साथ सद्भावनाओं और सद्-उपदेशों की धारा भी बहती दिखाई देती है।

उनकी कहानी की शुरुआत (आरंभ) उनके महल ही से होती है। एक रात जब वह सो रहे थे, उन्हे छत पर किसी की आहट मालूम हुई। पुकारा—ऊपर कौन है? आवाज आई—तेरा कोई वाकिफ़ ही हूँ। पूछा—वहाँ क्या कर रहा है? जवाब मिला—मेरा ऊँट खो गया है, उसे ढूढ रहा हूँ। इब्राहीम ने स्वभावतः व्यंग किया—ऊँट क्या वहाँ छत पर तुझे मिलेगा? आवाज आई—यह बात तो तू ठीक कहता है; मगर क्या शाही लिबास पहन कर और तख्त पर बैठकर खुदा को पाना भी कुछ आसान है?

कहते हैं ये हज़रत खिज्र थे, और एक बार दिन-दहाडे भरे दरबार में आकर उन्होंने इब्राहीम के दिल पर इससे भी गहरी चोट की। दरबार लगा हुआ था कि एक आदमी निहायत बेख़ौफ़ी (निडरता) और शान के साथ घुसता चला आया। किसी की हिम्मत न हुई कि उसे रोके। सिंहासन के पास वह बड़े ग़ौर से जब इधर-उधर देखने लगा तो इब्राहीम ने पूछा,

"क्या तलाश कर रहे हो ?" वह बोला, "मै यहाँ ठहरना चाहता था पर देखता हूँ कि यह एक सराय है, इसलिए न ठहरूँगा।" इब्राहीम ने बडी शान से कहा, "यह सराय नहीं मेरा महल है !"

वह बोले, "अच्छा ! तो क्या तुमसे पहले भी यहाँ कोई रहता था ?" इब्राहीम ने कहा, "जी हाँ। मेरे पिता रहते थे !" वह बोला, "और उससे पहले !" इब्राहीम ने कहा, "उससे पहले मेरे दादा व परदादा रहते थे।" बड़ी ही बेनियाजी (उपेक्षा) से वह बोला, "अरे जिस घर मे इतने लोग आये और रह-रह कर चले गए, वो सराय नहीं तो और क्या है !" यह कह कर वह चल दिया। इब्राहीम को जब होश आया तो वह उसे ढूँढने निकले। बड़ी मुश्किल से वह मिला। इब्राहीम ने पूछा, "तुम्हारा नाम क्या है ?" उसने बताया, "खिज्र !" यह नाम सुनकर इब्राहीम के दिल पर वहशत-सी तारी (त्रास छा गया) हो गई।

दिल बहलाने के लिए वह घोडा मंगा कर सैर व शिकार के लिए जंगल की ओर निकल गए। बियाबान (जगल) मे साथियों के छूट जाने से जब वह अकेले पड़ गए तो रह-रह कर उन्हे एक आवाज सुनाई देने लगी जो कह रही थी, "बेदार (सचेत) हो जा पेश्तर इसके कि मौत आकर तुझे बेदार करे।" यह सुना ही था कि कही से एक हिरन उधर आ निकला। इब्राहीम ने उसका शिकार करना चाहा ; मगर हिरन बोला, "तू मेरा नहीं मैं तेरा शिकार करूँगा। तुझे शर्म नही आती, क्या खुदा ने तुझे इसी काम के लिए यह जिन्दगी दी कि जो तू कर रहा है।" हिरन से मुंह फेरा तो ज़ीनपोश (घोड़े की काठी) भी यही बोला।

जो साधक है उन्हे अपने जीवन में ऐसे अनुभव हुए होंगे कि संसार की सभी चीजे जड और चेतन बोलती हुई-सी, उपदेश देती, राह दिखाती, मन में घुसे हुए चोर को ज़ाहिर करती हुई-सी मालूम पड़ती हैं। उस समय ऐसा लगता है, प्रत्येक शब्द और स्वर का एक उपयुक्त अर्थ है, प्रत्येक कम्पन और प्रगति में कोई सार्थक संकेत है ! यह स्थिति निश्चय ही बड़ी आनन्दमय हो सकती है ; पर अति हो जाने पर मन में परेशानी

भी होने लगती है। इब्राहीम को इस स्थिति से, कि जो देखो वही उसे मौत की याद दिलाकर बेदार कर रहा है, पहले तो परेशानी हुई, मगर, फिर उसका दिल विद्रोह छोडकर इसी भाव मे बह गया और वह रोया इतना कि जामा (कपडा) भीग गया।

वह अकेला चला जा रहा था, क्या-क्या भाव-तरंगे उसके दिल में उठ रही थी। आत्म-लोक के कितने ही दृश्य सामने आए, देवत्व के-से दर्शन उन्हे प्रत्यक्ष हो रहे थे। उसी समय उन्हे एक चरवाहा मिला। अपना शाही-लिबास उसे देकर उसके कपडे पहन लिये। इसी मस्ती की हालत मे वे जगलों में घूमते रहे—कभी अपने पापों को याद करके रोते तो कभी दिल के भावों से सिहर उठते। घूमते-फिरते वह नेशापुर पहुँचे जहाँ एक प्रसिद्ध गुफ़ा थी। इसी गार में रह कर उन्होंने नौ वर्ष तक तप किया। हफ़्ते में एक बार नेशापुर लकडियाँ बेचने जाते और उसीसे दान-धर्म और गुज़र-बसर करते।

कहते है, उस गार मे रहते समय एक रात उन्हे बडी सरदी महसूस हुई। बर्फ़ गिरी थी। उसीको तोड़ कर उन्होने स्नान किया और फिर नमाज में मशगूल (व्यस्त) हो गए। ठंढ लगने पर खयाल आया कि आग होती तो अच्छा था। अचानक उन्हे मालूम हुआ कि उनकी पी के पास कोई गरम चीज़ किसी ने रख दी है। इसी हालत में वह सो गए। आँख खुली तो देखा कि वह अज़दहा था, जिसने उन्हे ठंढ से बचाया था। भयभीत होकर बोले, "मेह्र बनकर जो आया वही अब तकलीफ़देह हो रहा है!" अजगर ने सर जमीन पर रक्खा, और वह गुम हो गया। शोहरत हो जाने पर वह ग़ार छोड़ कर मक्का चले गए। शेख अबु सईद को उस ग़ार में तपोजनित सुरभित आनन्द की अनुभूति हुई।

बियावान में घूमते हुए खिज्र के भाई इलियास ने इब्राहीम को नाम का जप करना सिखाया और फिर स्वयं देवदूत खिज्र से उन्होंने नियमित रूप से दीक्षा ली। उन्हीं की कृपा और ईश्वर के अनुग्रह से उन्हें इतना ऊँचा दरजा मिला; मगर कोई कहीं भी पहुँच जाय उसे अपने से ऊपर भी कुछ

दिखाई देता है। इब्राहीम को भी ऐसा ही माजरा पेश आया। देखा कि खून से तर सत्तर गुदडीपोश दरवेश मरे पडे हैं। उनमें से एक में अभी कुछ जान बाकी थी। इब्राहीम ने उससे पूछा, "यह क्या माजरा है ?" वह बोला, "ऐ अदहम के बेटे ! मुहब्बत की राह बडी मुश्किल है, ज़रा संभल कर कदम रखना।" इब्राहीम ने पूछा, "तुम कौन हो और यह क्या हादसा (दुर्घटना) पेश आया है ?" वह बोला, "ऐसे दोस्त से डर, जो हाजियों को रोम के काफिरो की तरह हलाक करता है। दूर न जा कि महजूर (विरह-ग्रस्त) हो जायगा और नज़दीक भी न आ कि रंजूर (दुःखित) हो जायगा। गुस्ताखी हुई कि सलामती (खैर) नही। सुन कि हम सभी सूफ़ी थे। कस्द (संकल्प) था कि सिवा उसके हम किसी से वास्ता न रक्खेंगे—सब उसीके है और उसीके लिए वक्फ (ईश्वरार्पण) होगा। जब हम काबा पहुँचे तो खिज्र हमारे इस्तिक़बाल को आये। हमने सलाम कहा और खुश हुए कि एक बुजुर्ग हमे मिले। इसी पर अतब (वध) नाजिल हुआ और कहा कि ऐ कौल से मुकरनेवालो ! क्या यही तुम्हारा अहद (निश्चय) था कि हमें भूल कर दूसरों से बात करो।"

"ऐ इब्राहीम !" वह बोले, "ये सभी उसी के मारे हुए है कि जिन्हें तू यहा बेहिस्सोहिरकत (जडवत्) पडा देखता है। होशियार होजा हमारी हालत देखकर, अगर इतना दम हो तो कदम आगे बढ़ा वरना यहीं से वापस होजा।" इब्राहीम हैरान थे, पर उन्होंने पूछा, "यह तो बताओ तुम किस तरह बच गए।" वह बोला, "यह सब पुख्ता थे मैं कच्चा हूँ; पर चाहता हूँ कि मैं भी पुख्ता हो जाऊँ और इनका पैरौ (अनुसरण) बनूं।" और यह कहकर जान दे दी। देखने मे यह एक बड़ा खतरा है पर ऐसा खेल वे उन्ही के साथ करते है जो पक्के है, ताकि कच्चे मारे डर के उधर आये ही नही।

चालीस बरस वे इधर-उधर घूमकर मक्का आये; मगर उनकी शोहरत यहाँ पहले ही पहुँच चुकी थी। इसलिए बहुत से लोग उनके स्वागत के लिए आये। उनमें से कुछ लोगों ने, जो आगे थे, खुद इब्राहीम से पूछा,

"क्या हजरत इब्राहीम को तुमने देखा है ? काबे के बुजुर्ग उनके इस्तिक़बाल के लिए आ रहे है।" इब्राहीम ने कहा, "क्या मिलेगा तुम्हे उस ज़िन्दीक (नास्तिक) से ?" छूटते ही उनमें से एक ने तमाचा मार कर कहा "ज़िन्दीक तू है जो ऐसे बुजुर्ग को ज़िन्दीक कहता है।" इब्राहीम ने जवाब दिया, "मै भी तो यही कहता था कि मै जिन्दीक हूँ।"

आगे बढ़ कर उन्होंने अपने मन से कहा, "ऐ नफ़्स, तूने चाहा कि लोग तेरा स्वागत करे, चख लिया न मज़ा तूने इन ख़ाहिशों का !" लोगों ने जब उन्हे पहचाना तो लज्जित हो बड़ी इज्ज़त से उन्हे ले गए ; मगर इब्राहीम, जो कभी राजा थे, अपनी रोज़ी लकड़ियाँ बेच कर या खेतों की रखवाली करके अपनी मेहनत से कमाते और उसमें से कुछ फ़कीरों को बाँट देते।

इब्राहीम जब घर छोड़कर निकले उस वक्त उनका एक दूध पीता बच्चा था। जब वह बडा हुआ तो उसने माँ से पूछा, "मेरे पिता कहाँ है ?" और चार हजार हाजियों को साथ लेकर उनकी तलाश मे वह मक्का आया। माँ भी साथ थी। जंगल मे लकडियाँ बीनते देख वह बहुत रोया ; मगर बोला नही कि कही भाग न जायं। शहर मे आकर इब्राहीम ने आवाज लगाई, "कौन है जो पाक (पवित्र) माल के एवज़ में पाक माल ले !" एक आदमी ने खाना देकर वह लकडियाँ ले ली। इब्राहीम ने उसमें से कुछ हिस्सा फ़कीरों को दे दिया और मुकाम पर लौट आए। लड़का जो उनके पीछे हो लिया था, यह सब देखता रहा।

काबा की प्रदक्षिणा करते हुए खुद इब्राहीम की नज़र उस लडके पर पडी और वह हैरत में आकर उसे देखते रहे। एक साथी दरवेश को इस पर आश्चर्य हुआ। उसके पूछने पर इब्राहीम ने कहा मुझे शक है कि यह लड़का वही न हो, जिसे मै बलख़ में छोड़ आया था। साथी पता लगाते हुए उसके खीमे पर पहुँचा। वह कुरान पढ़ रहा था। उसने कहा, "मैं इब्राहीम का बेटा हूँ। कल उन्हे देखा, मगर पूछा नहीं।" दरवेश ने कहा, "आओ, मै तुम्हे उनसे मिला दूं।" माँ और बेटा इब्राहीम से

मिलकर बहुत रोए मगर यह मिलन ससार का एक हसरत भरा दुखान्त दृश्य है ।

जब प्रेम से छलकते हुए हृदय यह सुन्दर दृश्य उन खुशकिस्मत काबा के हाजियों और दरवेशो के सामने उपस्थित कर रहे थे, तभी लोगों ने देखा कि इब्राहीम गभीर हो, हाथ उठा कर कुछ दुआ कर रहे है, और उनकी दुआ खत्म होते ही वह भला-सा पितृ-भक्त किशोर बालक तड़प कर गिरा और जान दे दी । दुःख और आश्चर्य से स्तब्ध लोगों ने पूछा, "क्या माजरा है ?" बोले, "लड़के को छाती से लगाने पर दिल मे प्यार उमड़ आया, तो खुदा ने शिकायत की—'तू कहता तो है बड़ी-बड़ी बाते, मगर करता है कुछ और !"

लोगो से कहता है कि बेटे और नातेदारों की मुहब्बत मे न फसो और खुद बीवी और बेटे से बाते कर रहा है । कहता तो है कि मै दुनिया मे तेरे सिवा किसी को दोस्त नही रखता और अब बेटे के प्यार मे मगन हो रहा है । उनकी शिकायत वाजिब थी । मुझे शर्म आई । मैने दुआ की, "ऐ अल्लाह ! तू हम दोनो मे से, जिसे चाहे उठा ले ताकि शिर्क (अनेकता) पैदा न हो ।" मेरी दुआ लड़के के हक मे कबूल हुई । अत्तार का कहना है कि यह बात हजरत इब्राहीम के लिए कुछ अजीब नही कि जिन्होने राहे-हक (सन्मार्ग) मे अपने प्यारे बेटे को भी कुर्बान कर दिया ।

इब्राहीम ने लोगो मे कहा, मै ऐसा मौका तलाश करता था कि जब रात को खान-ए काबा खाली हो,; मगर ऐसा मौका न मिलता था । एक रात को जब वर्षा हो रही थी तब वह मौक़ा मिल गया । मैंने दुआ कीऔर गुनाहों की माफ़ी चाही । आवाज़ आई, कि तू जो चाहता है वही तमाम मखलूक (सृष्टि) चाहती है । अगर मै सबको पाक कर दूं तो मेरी कृपा, दया, अनुकम्पा और अनुग्रह और क्षमाशीलता की जो नदियाँ बह रही हैं उनका क्या होगा ? अच्छा हो कि कोई मुहलगा मनचला सन्त मौका पाकर यह कह दे, "अच्छा, तो यह पाप ही अनुकम्पा की भूख है ।" (इसका

आशय यह है कि कृपा, दया और अनुकंपा और क्षमाशीलता की विद्यमानता ही पाप का कारण तो नही है ?)

वह कहते, "ऐ खुदा ! तूने जो मेहर मुझ पर की है, उसके मुकाबले में आठों बहिश्त कोई चीज़ नही और जो प्यार, जो मजा मुझे तेरी याद में मिलता है वह जन्नत को भी नसीब नही।" अक्सर दुआ मे कहते, "मुझे मासियत यानी पापों की जिल्लत से बचाकर अतीयात (अनुदानों) की इज्जत अता (प्रदान) कीजिए", और कहते, "जो तुझे जानता है, नही जानता कि उसका हाल क्या होगा जो तुझे नहीं जानता।" एक बार कहा कि पन्द्रह साल कठिन तप करने पर सुना कि कोई कह रहा है, "अरे तू आराम मे पडा है। जरा दिल लगा कर उसकी बन्दगी कर और उसका हुक्म बजा लाने के लिए जी-जान से हमेशा तैयार रह।"

लोगों ने पूछा, "तुम्हे क्या हुआ जो बादशाही छोड दी।" बोले कि एक दिन सिहासन पर बैठा हुआ था। एक शीशा मेरे सामने था। मैंने ध्यान से देखा तो ज़िदगी का अन्त कब्र में दीखा। आगे की यात्रा बड़ी लम्बी थी। न कोई दयार, यानी कोई देश है, न पास में तोशा (यात्रा मे खाने-पीने का सामान); हाकिमे आदिल (न्यायवान्) और मुन्सिफ ! उसे समझाने और सन्तुष्ट करने के लिए मेरे पास कोई ज़रीआ भी नही। बस मुल्क मेरे दिल पर सर्द हो गया। लोगो ने पूछा, "आप खुरासान से क्यों चले आए ?" बोले, "लोग आकर पूछते, कल आपका मिज़ाज कैसा था और आज कैसा है !" कहते, "अल्लाह के साथ इख्लास (निष्कपट प्रेम) यही है कि नीयत साफ़ हो। उसमे कुछ न हो मासिवा (केवल मात्र प्रभु) उनके।"

लोगों ने पूछा, "आप बीवी क्यों नही करते ?" इब्राहीम ने जवाब दिया, "क्या औरत इसलिए खाविन्द करती है कि वह पॉव से नगी और भूखी रहे। मेरी हालत यह है कि अगर हो सके तो मैं खुद अपने को तलाक़ दे दू। फिर दूसरे को अपने में बाँध कर क्यों किसी को धोखा दू !" किसी दरवेश से पूछा गया कि क्या तेरे पास औरत है तो उसने जवाब दिया, नही। फिर पूछा, क्या कोई औलाद है ? दरवेश ने कहा, नही। लोगों ने कहा,

तब तू नेक हालत में है। दरवेश ने कहा, यह सच है ; क्योंकि जिसने औरत की वह मानो किश्ती में बैठा और औलाद हुई तो समझो कि डूब गया।

किसी दरवेश को अपने साथी दरवेश की शिकायत करते हुए देखकर इब्राहीम ने कहा, "तूने बेकार दरवेशी अख्तियार (धारण) की और मालूम होता है कि मुफ़्त ख़रीदी है।" वह बोला, "क्या कोई दरवेशी भी ख़रीद सकता है ?" इब्राहीम ने कहा, "मुझे देख कि दरवेशी मुल्क बलख के बदले में ख़रीदी है। तब भी इस सौदे में मुझे ही फ़ायदा है क्योंकि यह बलख की बादशाहत के मुक़ाबिले कही ज्यादा कीमती है।" इब्राहीम को जब कोई आध्यात्मिक चमत्कार दीखता तो वह कहते, "कहाँ है दुनिया के बादशाह, वे आये और देखे कि क्या कारोबार है ताकि वह मुल्कगीरी (देशों को जीतना) से शर्म खायं।"

एक आदमी ने हज़ार दीनार पेश किये तो इब्राहीम ने कहा, "ग़रीबों से मै कुछ नही लेता।" वह बोला, "मै अमीर हूँ फ़क़ीर नहीं।" इब्राहीम ने कहा,"अच्छा यह बता, जितनी दौलत तेरे पास है उससे ज्यादा तू चाहता है कि नहीं !" वह बोला, "चाहता हूँ।" इब्राहीम ने कहा, "तब तो तू भिखमंगों का सरदार है। तू यह जो-कुछ लाया है, वापस ले जा। ग़रीब की भूख तो मिट सकती है मगर अमीर की कोई हद नहीं !" वह कहते-- आरिफ़ (ब्रह्मज्ञानी) वह है, जो आत्म-चिन्तन में मग्न रहे। स्तुति-प्रार्थना करे, जिसके सारे कर्म ईश्वरार्पित हों, हर चीज़ से शिक्षा लेकर मन को सुसंस्कृत करता रहे।

एक बार कहीं जा रहे थे कि रास्ते में एक पत्थर पड़ा हुआ मिला। उस पर लिखा था उलट कर पढ़ो। उसे उलटा तो यह लिखा पाया, "जब तू कर सकता है तो क्यों नहीं वह करता जो तुझे मालूम है। क्यों उस चीज़ की तलब में फिरता है जो तू नही जानता और कोई चीज़ किताबे जुदाई से सख्त नहीं है। इसलिए उससे बच।" अर्थात्, कोई ऐसा काम न कर, न किसी ऐसे विचार को ही अपने मन में जगह दे, जो तुझे भगवान से दूर करे; क्योंकि भक्त के लिए इससे अधिक दर्द भरी बात और कोई

नही कि उसे भगवान के असन्तोष का पात्र बन कर विरहाग्नि में जलना पड़े ।

वह कहते—तीन हिजाबों यानी पर्दों, आवरणों के हट जाने से दैवी सम्पदा की प्राप्ति होती है। एक यह कि त्रैलोक का राज मिलने पर भी खुश न हो, अर्थात्, केवल ईश्वर से प्रेम; और सभी छोटी-बडी, ऊँची-नीची चीजों से वैराग्य। दूसरा यह कि बन्धन में डाले तो दु.खी न हो, क्योंकि खुश होना लोभी होने का सबूत है, और दुखी होना गुस्से का निशान है और साथ ही कमीना होने की दलील है, और कमीनापन अज़ाब (पाप-कष्ट) के काबिल है। तीसरा यह कि किसी की तारीफ़ करने या बख़शिश (पुरस्कार) करने पर माइल (आसक्त) न हो क्योंकि जो बख़शिश पर खुश होता है वह पस्त हिम्मत है, और बुलन्द हिम्मती (साहसिकता) अच्छी चीज़ है ।

इब्राहीम ने किसी से पूछा, "क्या तू औलिया (संतो) के गिरोह (दल) में शामिल होना चाहता है ?" उसने कहा, "हाँ ।" तब रास्ता बताया कि लोक और परलोक की सभी वासनाएँ त्याग दे और अपने मन को ईश्वर-प्रेम के सिवा सभी चीज़ों से खाली कर दे । बस, ईश्वर से अपना वास्ता रख । व्रत और उपवास न हों तब भी भोजन शुद्ध—सात्विक और पवित्र कर। रोज़ी हलाल है कि नही, इसका हमेशा ध्यान रख; क्योंकि किसी को भी मर्दों का दरजा रोज़ा, नमाज़ और हज और जिहाद (धर्म-युद्ध) से नही मिलता; मगर उस शख्स को, जिसने यह जान लिया कि वह क्या खाता है। भोजन की अशुद्धता ही नैतिक और मानसिक पतन का कारण होती है ।

रोज़ी हलाल (अर्वाजित) हो यह उनके जीवन और उनकी शिक्षा का एक प्रमुख आधार था । एक जवान के तप और प्रेम की तड़प की लोगों ने बड़ी तारीफ़ की । जब वह उसे देखने गये तो जितना सुना था उससे भी ज्यादा लौलीन और बेकरार पाया । यहाँ तक कि उन्हे लगा कि उनसे कहीं आगे निकल गया है ; पर जब उन्होंने ध्यान से उसके जीवन का

अध्ययन किया तो मालूम हुआ कि उसकी रोज़ी अच्छी नही। उसे अपने घर लाकर जब हलाल की रोजी खिलाई तो उसकी वह दर्द भरी तड़प, लगन और बेचैनी बहुत कम हो गई। उनका कहना था कि खाने के साथ शैतान उसके अन्दर जाता था।

सन्त सफियान से इब्राहीम ने कहा, "अगरचे तू इल्म मे ज़्यादा है. मगर थोडे से यकीन का मुहताज (इच्छुक) है।" एक रोज़ शफ़ीक सन्त ने पूछा, "क्यो खल्क से भागते हो?" तो बोले, "मै अपने दीन को शैतान के हाथो से बचाकर मौत के दरवाजे से बाहर साबित हालत (सत्य स्थिति) मे ले जाना चाहता हूँ।" रमजान के दिनों मे जंगल से घास लाकर बेचते और जो-कुछ मिलता फकीरो को खैरात कर देते और खुद रातभर भगवान के ध्यान मे मगन रहते। लोगों ने पूछा, "आप रात को सोते क्यो नही?" बोले, "जिन आँखो से बराबर आँसू बहते हों, उनमें भला नीद कंसे ठहरे।" इब्राहीम अपनी ही मेहनत की पाक कमाई खाते। न मिलती तो भूखो रहते; न किसी से माँगते; और न बुरी रोजी लेते। एक बार सफ़र मे थे। चालीस दिन तक मिट्टी खा कर गुजर की और एक मौके पर पन्द्रह दिन रेत खाकर गुजार दिए। मगर एक बार मजेदार घटना हुई। सात दिन तक बराबर खाना न मिलने पर वह चार सौ रक्अत (नमाज विशेष) शुक्राने की रोज़ पढा किये। आठवें दिन बहुत भूख लगी, तो एक आदमी ने आकर खाने को पूछा, और अपने साथ ले गया। वह उनका पुराना गुलाम निकला। पहचान कर बोला, "यह सब जायदाद आपकी ही है, इसे कबूल करे।"

इब्राहीम बिना खाए ही लौट पडे और उस गुलाम से कहा, "मैंने तुझे आज़ाद किया और यह सब माल तुझे दे दिया।" फिर मन-ही-मन खुदा से कहा—"मै वादा करता हूँ कि अब तेरे सिवा किसी से कुछ नहीं चाहूंगा। मैंने खाने का एक टुकड़ा माँगा, और तूने दुनिया ही मेरे सामने कर दी!" इसी खयाल से उन्होंने आबे ज़म-ज़म (मक्का के एक पवित्र कुएं का पानी) भी कभी इसलिए न पिया क्योंकि

उसपर शाही डोल से ही पानी निकालना पडता था। इब्राहीम अपने साथियों का बडा खयाल रखते। एक पुरानी मस्जिद के दरवाजे पर, जिसमे कुछ लोगो के साथ वह रहते थे, एक बार रात भर खड़े रहे ताकि ठडी हवा से दूसरे बचे रहे।

जब कोई उनके पास रहने को कहता तो वह उसके सामने कुछ शर्तें रखते—"सब की खिदमत करना, अजा देना, जो चीज मिले सबको बराबर बाँट देना।" एक ने कहा "मुझे इनका पाबन्द होने की ताकत नही।" खुश होकर बोले, "मुझे तेरी सचाई पर हैरत है।" एक व्यक्ति बहुत दिनों तक साथ रहकर जब जाने लगा तो बोला, "आपने मुझ में जो ऐब देखे हों वह बता दे ताकि उन्हे दूर करने की कोशिश करूँ।" बोले, मुझे तुम्हारा कोई ऐब नजर नही आया क्योकि मैने तुम्हे दोस्ती की नजर से देखा। ऐब उसे दीखता है जो दुश्मनी की नजर से देखे।"

एक सन्त ने पूछा. "आपका पेशा क्या है?" बोले, "मैने दुनिया और बहिश्त को उनके तालिबो (अभिलाषियो) के लिए छोडा और अपने लिए दुनियामे खुदाका नाम और अखीर मे उसीका दीदार पसंद किया है।" इसी सवाल के जवाब मे एक दूसरे सत ने कहा, "खुदा के कारकुनों (सेवकों) को पेशे की जरूरत नही।" एक दिन का जिक्र है कि एक आदमी को कोई काम न मिला। शाम को बाल-बच्चों की चिन्ता मे परेशान जा रहा था। इब्राहीम को देखकर कहा, "तुम खुशहाल हो, मै परेशान।" बोले, "तू मेरा सारा सबाब ले ले और आज की अपनी परेशानी मुझे दे दे।"

राजा होने का प्रायश्चित इब्राहीम को फ़ज़ील से भी अधिक करना पड़ा। फ़जील का डाकू-जीवन भी एक साधक का जीवन था; पर इब्राहीम कभी बादशाह थे। इसके लिए वह अपने को शायद कभी क्षमा न कर सके और न दूसरो ही ने इस बात को भुलाया। उन्होंने अपने को ज़िन्दीक (नास्तिक) कहकर जो मार खाई और बार-बार निहायत बेरहमी से ज़लील होने पर जो उन्हे सच्ची खुशी होती थी, उसमें बादशाहत का कफ्फ़ारा (प्रायश्चित) होता है। शायद यही खयाल काम कर रहा था। उन्हें खुशी

ऐसे मौकों पर हुई जब उनके बाल नोचे गए और घूंसे लगे; जब कान पकड़ कर किश्ती मे से दरिया मे डालने की कोशिश हुई और सबसे ज्यादा खुशी तब हुई जब मस्जिद के जीने से ढकेले जाने पर उनका सर फट गया।

लकडी और घास बेचकर रोजी कमाना और बहुत ही फटे-पुराने कपड़े पहनना, जिनमें जुएँ पड़ गई थी और जमजम के शाही डोल से पानी तक न पीना—यह सब एक अति से दूसरी अति तक जाकर समत्व प्राप्त करने की कोशिशे मालूम होती है। वह कहते है, "मस्जिद की हर सीढ़ी पर ज्यों ही लुढ़कता हुआ गिरता एक नयी रौशनी—एक नया चमत्कार दिल मे ज़ाहिर होता!" यहाँ तक कि सर फटने की परवाह न होकर उन्हे अफ़सोस था इस बात का कि क्यो सीढ़ियाँ ज्यादा न हुईं ताकि कुछ और भी हासिल होता। वह कहते, "ने'मत मिलने पर शुक्र (कृतज्ञता) की, बन्दगी की दशा मे इख्लास (निष्कपट प्रेम) की, और बुरा काम होने पर तौबा की सवारी पर बैठ कर उनके सामने जाता हूँ।"

अपने ही गुलाम से उन्होंने एक बडी ही गहरी नसीहत ली। एक गुलाम उनके पास आया तो उससे पूछा, "तेरा नाम क्या है?" बोला, "जिस नाम से आप पुकारे।" पूछा, "खाता क्या है?" बोला, "जो आप दे।" पूछा, 'पहनता क्या है?" कहा, "जो पहनाएँ।" पूछा, "क्या काम करता है?" कहा, "जो आप बताएँ।" पूछा, "क्या चाहता है?" कहा, "जो आपकी मर्ज़ी हो। बन्दे को अपनी राय से क्या सरोकार!" इब्राहीम ने मन में सोचा—यदि मै भी इसी तरह खुदा की मर्जी पर चलनेवाला होता तो कितना अच्छा होता! कहते, "कोई शख्स मर्दो (तपस्वी) की सफ़ (चटाई) में नही बैठ सकता जबतक कि दुनिया की सब चीज़े छोडकर अपने को एकदम मिटा नही देता।"

एक बार लोगों ने इब्राहीम से पूछा, "आप किसके बन्दे है?" यह सुनकर वह काँपने लगे और गिर पड़े। देर तक बेकरारी (व्याकुलता) के साथ ज़मीन पर लोटते रहे। फिर उठ कर एक आयत पढ़ी, जिसका

अर्थ है—"वो सब चीजे जो आस्मान और जमीन से बन्दे को मिलती हैं, खुदा की ही दी हुई है।" लोगो ने पूछा, "पहले ही यह आयत आपने क्यों न सुनाई!" बोले, "यह खौफ हुआ अगर मै अपने को उसका बन्दा कहता हूँ तो वो अपना हक तलब (अधिकार की माँग) करेगा, और यह कह नही सकता कि उसका बन्दा नही हूँ।" किसी पहुंचे हुए संत से इब्राहीम ने पूछा, "खाते कहाँ से हो?" बोला, "उसी से पूछो। यह काम जिसका है, वही जाने।"

लोगों ने पूछा, "दिलों पर अल्लाह से क्यों पर्दा है?" बोले, "इसलिए कि जिसे खुदा दुश्मन जानता है दिल उसको दोस्त रखता है। दुनिया की खातिर आखिरत (परलोक) को भूला हुआ है।" उपदेश माँगने पर एक आदमी से कहा, "खालिक (सृष्टिकर्त्ता) को दोस्त बना और मखलूक (सृष्टि) को छोड दे।" दूसरे से कहा, "बंधे को खोल दे और खुले को बन्द कर दे।" पूछने पर मतलब यह बताया, "दौलतमंदी को छोड़कर थैली का मुह खोल दे और खैरात कर। और जुबान पर पाबन्दी लगाकर उसे बुरी बाते कहने से रोक। काबा का तवाफ़ (प्रदक्षिणा) करते हुए जबतक तू जोम (अहकार) और इज्जत, नीद, और चाह को छोड़कर मेहनत और ज़िल्लत (अपमान), बेदारी (जागृतावस्था) और दरवेशी का दरवाजा न खोलेगा तबतक बाहर का ही रहेगा।"

लोगों ने पूछा, "हमारी दुआ कबूल क्यों नहीं होती?" बोले, "तुम खुदा है यह जानते तो हो; मगर बन्दगी नहीं करते; रसूल और कुरान को पहचानते हो, मगर इताअत (फ़र्माबर्दारी) नही करते, उसकी ने'मत खाते हो; मगर शुक्र नही करते। बहिश्त (स्वर्ग) और दोज़ख (नरक) है यह मानते हो; पर एक के मिलने का और दूसरे से बचने का सामान नही करते। शैतान को दुश्मन समझते हो; मगर उससे दूर नहीं रहते। जानते हो कि मौत आयगी; पर उसकी तैयारी नही करते। माँ-बाप, भाई-बिरादर को कब्र मे पहुँचा कर भी कुछ सीखते नहीं। जानते हो कि मुझमे ऐब है; फिर भी दूसरों के ऐब निकालते हो। भला ऐसे आदमी

की दुआ कैसे कबूल हो। बेहतर है कि ज़ाहिर और बातिन (कर्म और मन) एक हो ।"

हज के सफ़र मे एक दिन खाने को कुछ मिला नही। भूखे ही रह गए। शैतान ने आकर कहा,"बलख की सल्तनत छोडकर तुम्हे यह मिला कि भूखे-प्यासे हज कर रहे हो।" इब्राहीम ने दुआ की, "ऐ अल्लाह ! तूने दुश्मन को दोस्त पर तैनात किया है।" अन्तर मे आदेश आया, "तुम्हारी जेब मे जो-कुछ है, उसे फेक दो तो गैब (परलोक) तुम पर जाहिर (प्रकट) हो।" जेब मे हाथ डाला। उसमे कुछ चादी थी जो भूले से पडी रह गई थी। उसे फेकते ही शैतान भाग गया और गैबी ताकत (पारलौकिक शक्ति) मिल गई। किसी ने पूछा, "जो शख्स भूखा हो वह क्या करे ?" कहा, "सब्र करे; यहाँ तक कि मर जाय और खूबहा (प्राणों का मूल्य) क़ातिल (कत्ल करने वाला) पर हो," अर्थात्, यदि संतोष की अति के फलस्वरूप प्राण निकलेंगे तो इसका प्रतिकार प्रभु करने वाला है। दाता की जिम्मेदारी कोई अपने सर क्यो ले !

एक बार इब्राहीम खुरमे चुनने गए। दामन (झोली) भरते ही लोग उनसे छीन लेते, और पूरे चालीस बार ऐसा ही हुआ। इकतालीसवी बार किसी ने खुरमे न छीने। गैब (परोक्ष) से आवाज़ आई, "ये ४० बार का खेल उन सोने की ढालो की वजह से हुआ, जो तुम्हारी बादशाहत के वक्त लोग तुम्हारे आगे लेकर चलते थे।" ये खुरमा छीनना तो खैर एक अच्छा-खासा मजाक ही था ; मगर इस सल्तनत के मामले ने एक बार काबा के बुज़ुर्गो की मजलिस (सभा) मे उन्हे बेतरह रुसवा (अपमानित) किया। वयोवृद्ध सन्त कही बैठे ज्ञान-चर्चा मे लीन थे। इब्राहीम ने भी शामिल होना चाहा। उन्हे मना किया गया। कहा, "तुममे अभी बादशाहत की बू आती है।"

कह नही सकते कि इनमे से कितने ऐसे थे, जो इब्राहीम को अपने पास बैठने देने से इन्कार कर देते अगर वह उस वक्त आते जब वह बलख के बादशाह थे। जीवनी-लेखक अत्तार ने लिखा है--कि जब इन लोगों ने हज़रत

इब्राहीम को ऐसा कहा तो दूसरे लोगों के लिए न जाने क्या कहते ? और उनका अपना क्या दर्जा था यह तो अल्लाह ही जानता है। मगर इस अपमान को भी उसी शान्ति के साथ पी गए जैसे अन्य अनेक कष्टों को उन्होंने धीरता-पूर्वक ही नही, बल्कि प्रसन्नता पूर्वक सहन किया हालाकि जानकार का अपमान ज्यादा खलता है बनिस्बत उस अपमान के, जो अज्ञानियों द्वारा किया जाता है। मन्सूर हँसते थे जब नादान (मूर्ख) लोग पत्थर मारते और एक आलिम के एक ककडी मारने पर ही उन्होंने आह की।

एक बार एक नदी के किनारे बैठे अपनी गुदडी सी रहे थे। एक आदमी ने आकर पूछा कि बलख की सल्तनत छोड कर आपको क्या मिला ? इब्राहीम ने सुई दरिया मे डाल दी और इशारा किया—हजारों मछलियाँ मुह मे एक-एक सोने की सुई लिये सामने आईं। "मुझे यह सुइएँ नहीं चाहिएँ, अपनी सुई चाहता हूँ।" एक छोटी मछली सामने आई। उसके मुह में वही सुई थी, जो फेकी थी। वह सुई लेकर पूछने वाले से कहा, "सल्तनत छोड़कर जो छोटी-सी एक बात मुझे हासिल हुई वह यह है कि एक बार कुएँ में डोल डाल कर खीचा तो उसमे सोना भरा निकला, फिर चादी निकली, फिर मोती निकले।" बोले, "मुझे तो पानी चाहिए वही दे दे।"

एक मस्त आदमी कही पडा हुआ था। उसका मुह मिट्टी में सना हुआ था। देखकर बोले कि जिस मुह से खुदा का जिक्र होता है उसे इस हालत में नही रहना चाहिये और पानी लेकर उसका मुह धो दिया। जब वह मस्त होश मे आया तो लोगों ने उससे वह सब बाते कही। उस पर इसका अच्छा असर हुआ। उसने तौबा की और खुदापरस्ती मे लग गया। इधर इब्राहीम ने स्वप्न देखा कि फ़रिश्ते कह रहे है "तुमने अल्लाह के वास्ते उसका मुह धोया। अल्लाह ने तुम्हारा दिल धो दिया।" एक बार पहाड़ पर थे। किसी ने पूछा, "कमाल (पूर्णता) की क्या पहचान है !" बोले, "पहाड़ से कहे चल, तो वह चल दे।" कहते है कि वह पहाड चल पड़ा और तब रुका जब वह बोले, "मैंने तो मिसाल दी थी हुक्म नही।"

एक बार जब यह किसी बाग की रखवाली कर रहे थे तो मालिक ने आकर कहा, "कुछ मीठे अनार ले आओ।" इब्राहीम कई पेड़ों से तोड़ कर अनार लाये; मगर सब खट्टे निकले। मालिक ने कहा, "इतने दिन तुम्हे बाग मे रहते हो गए; मगर अभी तक मीठे अनारों का पता नही।" इब्राहीम बोले, "बिना खाए कैसे मालूम हो।" मालिक बोला, "तो क्या तुमने अभी तक अनार खाए ही नही?" इब्राहीम ने कहा, "आपने रखवाली के लिए मुझे यहाँ रखा है न कि अनार खाने के लिए।" उनकी ईमानदारी से चकित होकर मालिक बोला, "मालूम होता है तुम इब्राहीम हो!" इसके बाद वह वहाँ से चले गए।

एक बार मुहम्मद मुबारक सूफी के साथ हज के सफ़र में थे। किसी जगल में एक अनार के पेड़ के नीचे कयाम किया। उस पेड़ से कुछ आवाज आई। सूफ़ी ने कहा, "आपने कुछ सुना।" इब्राहीम ने कहा, "हां।" और फिर उसमे से दो अनार तोड़ कर एक सूफी को दिया दूसरा खुद खाया। सूफ़ी का कहना है कि जब हज करके मक्का से वापस आए तो वह अनार का पेड़ बढ कर खूब बड़ा हो गया था और उसके अनार, जो पहले खट्टे थे, अब मीठे होने लगे और एक खास बात यह हुई कि वह साल मे दो बार फल देने लगा। इस विचित्र परिवर्तन के कारण लोगो ने उसका नाम "रुमान-उल-आबदीन" अर्थात् भक्तों का चमत्कार रख दिया और सन्त लोग आकर उसकी छाया में बैठते।

एक बार किश्ती पर सवार होने लगे तो मल्लाह ने पैसा माँगा। दुआ की, "या अल्लाह! मल्लाह पैसे माँगता है।" तमाम रेत सोने की हो गई। उसमें से एक मुट्ठी रेत उसे दे दी। एक बार हज करते समय लोगों ने कहा, "खाने के लिए कुछ नही है।" बोले, "खुदा पर यक़ीन रक्खो और अगर दौलत की चाह है तो इस पेड़ को देखो।" वह सारा पेड़ सोने का हो गया था। एक बार किश्ती में जा रहे थे कि बड़े ज़ोर का तूफ़ान आया। लोग डरे मगर आवाज आई कि डरो मत, इब्राहीम तुम्हारे साथ है और वह तूफ़ान रुक गया।

वह लोगों से सदा दूर ही रहना पसन्द करते। इसी कारण जीवनी-लेखक को इसका ठीक पता नहीं कि वह अपने अन्त समय में कहाँ पर थे। कहते है कि जब उन्होंने अपनी भौतिक लीला सम्वरण की तो लोगों को आकाशवाणी सुनाई दी "आज अमां ने वफात पाई", अर्थात शान्ति-रक्षा के देवदूत का आज स्वर्गवास हो गया। ईश्वर की सृष्टि मे जिन्होंने सिहासन छोडकर अपने को मिट्टी मे मिलाया, अपनी अहंता को सुरमे की तरह बारीक पीसा, उनमें इब्राहीम का दर्जा बहुत ऊँचा है।

: ४ :

ज़ू-उल-नून मिस्री

ज़ू-उल-नून मिस्र के रहने वाले थे। मगर वहाँ के लोग उन्हे ज़िन्दीक यानी (नास्तिक) समझते थे। उनको लोग ज़ू-उल-नून इसलिए कहने लगे थे कि एक बार उन्होंने चमत्कारिक ढग पर मोती निकालकर दिया था। बात यह हुई कि एक बार किश्ती में सफर करते हुए एक व्यापारी का मोती खो गया। सबने इन्ही को चोर समझ कर मारना शुरू किया। इन्होने दुआ की कि ऐ खुदा, तू जानता है कि मैं चोर नही हूँ। तभी लोगो ने देखा, बहुत-सी मछलियाँ एक-एक मोती लिये हुए निकलीं। एक मछली से मोती लेकर उन्होंने उस व्यापारी को दे दिया। सबने लज्जित होकर उनसे माफी माँगी और तबसे उनका नाम ज़ू-उल-नून पड़ गया।

किसी ने उन्हे एक तपस्वी भक्त के विषय में सूचना दी तो वे उसे देखने गए। उन्होने देखा कि वह एक पेड़ पर उल्टा लटका हुआ कह रहा है, "ऐ जिस्म, जबतक तू खुदापरस्ती मे मेरा साथ न देगा तबतक मै तुझे इसी तरह तकलीफ दूगा।" उसकी बात सुनकर ज़ू-उल-नून रोने लगे। वह तपस्वी बोला, "कौन है, जो एक बेशर्म गुनाहगार की हालत पर रोता है?" ज़ू-उल-नून उसके पास गये और सलाम करके बोले कि मैंने समझा था कि आपने कोई बड़ा गुनाह किया, जिसके कुफ़्फ़ारा के लिए आप अपने जिस्म को इतनी तकलीफ़ दे रहे हैं। वह बोला, "दुनिया वालों से वास्ता रखने से ज्यादा और कोई गुनाह नही है।"

ज़ू बोले, "आप बड़े ज़ाहिद है।" तपस्वी ने कहा, "बड़े परहेज़गार (इन्द्रिय-निग्रही) को देखना हो तो उस पहाड़ पर देख। वहाँ उन्होंने एक

जवान को देखा जिसका पैर कटा हुआ था। पूछा, "यह क्या माजरा है?" उसने जवाब दिया, "एक दिन मेरा मन एक औरत को देखकर विचलित हो गया। जैसे ही मै उसकी ओर चला अदर से आवाज आई, "ऐ खुदा की इबादत करनेवाले, आज तू शैतान की इबादत करने चला है।' मुझे होश आया और वह पैर, जो बुरी राह मे पहले उठा था, काट डाला।" जू बोले, "सचमुच आप बडे जाहिद (त्यागी) है।" वह जवान बोला, "जाहिद देखना हो तो और ऊपर पहाड़ की चोटी पर जाओ। वहाँ एक बुजुर्ग है, जो नेक कमाई न होने की वजह किसी आदमी से कुछ नही लेते। मधु-मक्खियाँ उन्हें शहद दे जाती है।

जू-उल-नून के दिल पर इसका बहुत अच्छा असर पडा पर पहाड से उतरते समय एक दृश्य जो उन्होंने देखा, उससे ईश्वर की अनन्त कृपा का उनके हृदय मे दृढ़ विश्वास जम गया। उन्होने देखा कि एक पेड से एक अन्धा पक्षी उतरा। जू-उल-नून सोच ही रहे थे कि यह बेचारा किस तरह अपनी रोजी पायगा कि उस पक्षी ने चोंच से जमीन को खोदना शुरू किया। एक सोने की प्याली निकली, जिसमें तिल थे और फिर एक चादी की प्याली निकली, जिसमें गुलाब जल था। उसने तिल खाकर गुलाब-जल पिया और उडकर वृक्ष पर आ बैठा। वे प्यालियाँ वही गायब हो गईं। इस घटना ने उनके मन में ईश्वर-विश्वास को दृढ कर दिया। सोचा कि जिसे ईश्वर का भरोसा है उसे कोई चिन्ता नही।

वहाँ से वह जंगल मे घूमने निकल गए, जहाँ उनके कुछ पुराने दोस्त अचानक मिल गए। घूमते हुए इन लोगों को एक खजाना मिला, जिसके ऊपर एक तख्ता लगा था। उस तख्ते के ऊपर अल्लाह का नाम लिखा था। और दोस्तों ने तो खज़ाने का माल आपस मे बाँट लिया मगर जू ने उस तख्ते को, जिसपर खुदा का नाम लिखा था, चूमा, सर और आँखों से बडी इज्ज़त से लगाया। उसी रात को जू ने स्वप्न देखा कि कोई कह रहा है, "ऐ जू-उल-नून, तूने हमारे नाम की इज्ज़त की। माल के बजाय हमारे नाम को पसन्द किया। इसके बदले में हमने

इल्म और हिकमत (यानी ज्ञान और विज्ञान) के दरवाजे तेरे लिए खोल दिए।"

एक बार वह किसी नहर पर वुजू करने गये। पास ही एक आलीशान महल था, जिसके मीनार पर एक सुदर औरत खडी उनकी ओर गौर से देख रही थी। कहा, "यदि कुछ कहना हो तो कहिए।" वह औरत बोली, "ऐ जू-उल-नून, जब मैंने तुम्हे दूर से देखा तो समझा कि कोई दीवाना है; जब नजदीक से देखा तो समझा कि कोई आलिम (विद्वान) है, जब और नजदीक से देखा तो समझा कि कोई आरिफ (ब्रह्मज्ञानी) है, मगर अब समझ में आया कि न तुम दीवाने हो, न आलिम हो और न आरिफ।" जू ने पूछा, "तुम्हारे ऐसा समझने का क्या सबब है ?" वह बोली, "तुम अगर दीवाने होते तो वुजू न करते, आलिम होते तो परायी औरत को न देखते, और आरिफ यानी ब्रह्मज्ञानी होते तो अल्लाह के सिवा किसी की ओर ध्यान न देते।" जू ने समझा यह गैबी चेतावनी है।

एक बार एक पहाड पर गये तो देखा कि हजारों मरीज बैठे है। कुछ देर बाद एक बहुत ही बूढा साधु गुफा मे से निकला। आस्मान की तरफ देखकर उसने दुआ की और फिर फूक मारी तो सब अच्छे हो गए। जब वह साधु जाने लगा तो जू ने दामन पकड़ कर कहा, "आपने बाहरी बीमारों को अच्छा किया है। मेरी बातिनी (आन्तरिक) बीमारी को भी दूर कर दीजिए।" वे बोले, "ऐ जू-उल-नून, शर्म कर कि तू अल्लाह के सिवा दूसरे का दामन (पल्ला) पकडे है। वह देखता है, कही ऐसा न हो कि तुझे मेरे और मुझे तेरे हवाले कर दे।" यह कहकर और दामन छुड़ाकर वह गुफा मे चले गए। वह सुन्दर स्त्री और यह वृद्ध सन्त दोनों एक ही बात जू के मन पर अंकित करने को प्रकट हुए—'अल्लाह के सिवा किसी दूसरे से वास्ता न रखो।'

एक दिन जू-उल-नून को लोगों ने रोते देखा। कारण पूछा तो बोले; "कल रात में मेरी आँख झपक गई। सपने में देखा कि खुदा ऐसा कह रहे है—जब मखलूक (मनुष्य जगत्) को पैदा किया तो मैंने उनके सामने

दुनिया पेश की। नौ हिस्से तो दुनिया पर माइल (आकर्षित) हुए मगर उनका एक हिस्सा नही। फिर उन लोगों के सामने जो दुनिया पर माइल नही हुए, मैंने बहिश्त (स्वर्ग) को पेश किया तो उनमें भी नौ हिस्से लोग माइल हुए, एक हिस्सा नही। फिर उस एक हिस्से वालों के सामन मैंने दोजख (नरक) को पेश किया तो नौ हिस्से लोग भाग गए मगर उनका एक हिस्सा नही भागा। मैंने उनसे पूछा, तुम न दुनिया पर माइल हुए, न बहिश्त पर, और न इन लोगों की तरह दोज़ख से डरे। फिर बताओ तुम चाहते क्या हो? उन्होंने सर झुकाकर कहा, हम जो चाहते है वह तू जानता है।"

ऊपर की घटनाओं के द्वारा ज़ू-उल-नून को बनाने वाली ईश्वरीय-प्रतिभा ने ईश्वर के सिवा और किसी की कामना अपने मनमें न रखने का दिव्य-सन्देश उनकी आत्मा को और उनके द्वारा संसार के अन्य भक्तों को दिया। उनका एक शिष्य था, जिसे एक लाख दीनार विरासत में मिले थे। उसने चाहा कि उनकी सेवा मे वह उन्हे खर्च करे; पर उन्होंने कहा कि जबतक बालिग न हो जाय, इन्हे खर्च करना जायज (उचित) नही। बड़ा होने पर उसने वे दीनार फ़कीरों में बाट दिए। एक दिन ज़ू को कुछ ज़रूरत हुई तो उसे खैरात कर देने का अफ़सोस हुआ। ज़ू ने तीन गोलियाँ बनाकर उन पर फूक मारी तो वे याकूत (एक रत्न) हो गईं। कीमत सौ दीनार लगी। मगर ज़ू ने पिसवाकर पानी मे उन्हे फिकवा दिया और कहा, "फ़कीर माल के भूखे नही होते।" शिष्य के दिल को यह बात लग गई। और वह पूर्णतः विरक्त हो गया।

ज़ू-उल-नून ने कहा, "तीस वर्ष से मै लोगों को नसीहत करता आ रहा हूँ, मगर सिर्फ़ एक शख्स उसकी वजह से खुदा तक पहुँचा और वह एक शाहज़ादा था। वह मेरी मस्जिद के पास से जा रहा था जब मैं कह रहा था, "उस कमजोर आदमी से ज्यादा बेवकूफ़ कोई नही जो ज़बर्दस्त से लड़ता है।" उसने रुककर कहा, "ज़रा साफ़-साफ़ कहिए ताकि मै भी समझ सकूं।" मैंने कहा, "उससे ज्यादा बेवकूफ़ कोई नही जो खुदा से लड़ता है।" उस वक़्त तो वह यह सुनकर चला गया मगर दूसरे रोज़ आकर उसने पूछा,

"खुदा से मिलने का कौन-सा रास्ता है ?" मैंने कहा, "दो रास्ते है : (१) छोटा (२) बडा। दुनिया, गुनाह और खाहिश को छोड़ना छोटा रास्ता है, और अल्लाह के सिवा सबसे अलग हो जाना बड़ा रास्ता है।" वह बोला, "मैंने बडा रास्ता पकड़ा।" और आगे चलकर वह बहुत ऊँचा उठा।

लोग जू-उल-नून को धर्म-भ्रष्ट समझते थे। उन्होने खलीफ़ा से जाकर उनके बारे मे कहा भी। खलीफा ने उन्हे बुलाया तो लोग उनके पैरों मे बेडियाँ डालकर दरबार मे ले गए। रास्ते मे एक बुढ़िया मिली। उसने कहा, "ऐ जू-उल-नून, तू खलीफा से मत डर क्योकि वह भी तेरी ही तरह खुदा का बन्दा है।" फिर एक भिश्ती मिला, जिसने उन्हे ठण्ढा पानी पिलाया। जू ने अपने साथी से उसे एक दीनार देने को कहा; मगर भिश्ती ने लेने से इन्कार कर दिया। कहा, "कैदी से लेना जवांमर्दी के खिलाफ है।" खलीफा ने उन्हे चालीस दिन कैद मे रखा। उनकी बहन रोज एक रोटी उन्हे दे आती थी; मगर जब वह जेल से निकले तो वे रोटिया वैसी ही रखी हुई मिली।

बहन ने कहा, "वे रोटिया हलाल कमाई की थी, क्यो नही खाईं ?" बोले, "दारोगा बत्तीन्नत (बुरे स्वभाव) था। उसके हाथ से छूकर आती थी इसलिए नही खाईं।" जब खलीफा के पास गये तो उसने कई सवाल किये। उनके वाजिब जवाब सुनकर खलीफा बहुत खुश हुआ और उनके हाथ को बोसा देकर बडी इज्ज़त के साथ मित्र वापस भेज दिया। उन्हे लोग जिन्दीक क्यों कहते थे इसका कुछ अदाज अपने एक मुरीद को ही दी हुई नसीहत से मिलता है। ४० साल तक मिहनत करने पर भी जब इस शिष्य को दीदारे-इलाही और इल्मे तसव्वुफ (वेदान्त का ज्ञान) का लाभ न मिला तो दुखी होकर जू से ज़िक्र किया। उन्होंने उसे एक अजीब सलाह दी। कहा, "खूब खा, मजे से सो, और नमाज न पढ़।" उनकी दो बाते तो उसने मान ली मगर नमाज न छोड़ी।

रात को उसने मुहम्मद को स्वप्न मे देखा कि उससे कह रहे है,

"अल्लाह ने बाद सलाम के फ़रमाया है कि हमारी राह मे जल्दी थककर बैठनेवाला नापसन्द है। तुम्हारी चालीस साल की मिहनत का बदला तुम्हे मिलेगा और जू-उल-नून से कहना कि अल्लाह कहता है कि मै तुम्हें शहर में रुसवा (अपमानित) करूँगा ताकि फिर कभी तू मेरे मुरीदों को मक्कारी न सिखाए।" इस शिष्य ने जू-उल-नून से जब यह सब हाल जाकर कहा, तो वे मारे खुशी के रोने लगे। उन्होंने ऐसे मौके पर सलाह तो बडे मार्के की दी और वह काम भी कर गई पर लोग ऐसी उल्टी-सीधी बातों के लिए उन्हे भला कब माफ़ कर सकते थे। नमाज़ न पढना, पेटभर खाना, नीद भर सोना यह भी क्या किसी सन्त को शोभा देने वाली सलाह है!

जीवनी-लेखक अत्तार ने स्वयं इस प्रश्न को उठाया है और लिखा है कि जैसे हकीम ज़हर से इलाज करते है वैसे ही सन्त आवश्यकता पडने पर आत्मलाभ की दृष्टि से ऐसी सलाह देने से भी नही झिझकते, जो देखने में खिलाफे शरीअत (धर्म-शास्त्र विरुद्ध) मालूम हो। एक बेहद दुबले आदमी को प्रदक्षिणा करते हुए देखकर जू ने पूछा, "तू खुदा को दोस्त रखता है?" उसने कहा, "हाँ।" पूछा, "तेरा दोस्त नज़दीक है या दूर।" बोला, "नज़दीक।" पूछा, "वह तेरे मुखालिफ़ (प्रतिकूल) है या मुआफ़िक (अनुकूल)?" बोला, "मुआफ़िक।" जू ने कहा, "जब तू खुदा का दोस्त है, वह तेरे नजदीक है और मुआफिक भी, फिर तू इतना कमज़ोर क्यों है?" वह बोला, "उनके नजदीक रहना कुछ दिल्लगी नही है। जो उनके नज़दीक रहने वाले है, वे जानते है कि दूरी से नज़दीकी कितनी ज्यादा सस्त है।"

मुहब्बत यानी ईश्वर-प्रेम के विषय में सन्तों की जीवनी मे भी चर्चा हुई है। मिसाल के लिए, राबिआ ने कहा, "मुहब्बत अजल से आई और अबद से गुज़री, मगर कोई ऐसा न मिला जो उसका एक घूट पिये," आखिर वह वासिले हक़ हुईं। सन्त यहिया ने प्रसिद्ध सन्त बायजीद बस्तामी को लिखा कि उस शख्स के बारे में आप क्या कहते है जो अज़ल (अनादिकाल) के एक प्याले से ऐसा मस्त हुआ कि अबद (अनंतकाल) तक

उसकी मस्ती दूर न हुई। उत्तर में बायज़ीद ने लिखा, "यहाँ एक ऐसा इंसान है कि रात-दिन में दरिया-ए अज़ल और अबद पीकर भी कहता है—क्या कुछ और है ?" ज़ू-उल-नून ने फिर किसी औरत से मुहब्बत की चर्चा करते हुए पूछा, "मुहब्बत की इन्तिहा यानी हद क्या है ?" वह बोली, "मुहब्बत इन्तिहा नही क्योंकि दोस्ती की कोई इन्तिहा नही।" (अर्थात् ईश्वर अनन्त है इसलिए प्रेम भी अनन्त है।)

हज़रत अबु-ज़ाफ़र का कहना है कि एक दिन ज़-उल-नून इस बात की चर्चा कर रहे थे कि बेजान चीज़े भी पहुँचे हुए सन्तों की आज्ञा का पालन करती है। यहाँ तक कि अगर वह इस तख्त से कहे कि इस मकान के गिर्द घूम तो वह घूमने लगेगा। ज़ू का यह कहना था कि तख्त मकान के गिर्द घूमा और फिर वापस आ गया। एक कर्ज़दार आदमी को एक पत्थर उठाकर दे दिया, वह जमुर्रत का हो गया। उसे चार सौ दीनार में बेंचकर उसने अपना कर्ज़ चुका दिया। एक आदमी सतों को मूर्ख समझता था। उसे अपनी अंगूठी देकर कहा, "नानबाई के पास ले जाकर एक दीनार में बेच आ।" नानबाई ने कहा, "कीमत ज़्यादा है।" तब ज़ू ने कहा, "अब इसे सर्राफ़ के पास ले जा।" सर्राफ़ ने उसकी कीमत एक हज़ार दीनार लगाई। ज़ू ने कहा, "उस नानबाई की तरह तू भी सन्तों की बड़ाई को नहीं जानता।" उस दिन से सन्तों की अवमानना करना उसने छोड़ दिया।

एक बार वह एक ऐसे व्यक्ति से मिलने गये, जो अपने को ईश्वर का प्रेमी समझता था। वह बीमार था। ज़ू को देख कर बोला, "वह शख्स हर्गिज़ खुदा का दोस्त नही जो उसके दिये हुए दर्द से रंज माने।" ज़ू ने कहा, "जो शख्स अपने को खुदा का दोस्त मशहूर करता है वह हर्गिज़ खुदा का दोस्त नहीं।" यह सुनकर वह बहुत लज्जित हुआ और कहा, "अब मैं ऐसा न करूँगा।" इसी तरह जब एक व्यक्ति बीमार होने पर उन्हे देखने आया और बोला, "दोस्त का दर्द भी प्यारा होता है" तो वह नाराज़ होकर कहने लगे कि अगर तुम उन्हें जानते होते तो ऐसी बेअदबी (अशिष्टता) से उनका नाम न लेते। अपने एक दोंस्त को उन्होंने ख़त में लिखा कि अल्लाह

मुझको और तुझको दुनिया की बातों से बेख़बर रखे, अपनी मर्ज़ी से काम कराये और राज़ी रहे ।

मगर एक बार उन्होंने अपने अल्लाह के काम मे दखल दिया और परिणाम में फटकार पायी । बरफ के दिनों में उन्होंने एक यहूदी यानी गैरमुस्लिम को चारों ओर बरफ के ऊपर दाना छिडकते हुए देखा तो पूछा कि क्या कर रहे हो ? बोला, "आज बरफ की वजह से चिड़ियों ने दाना नहीं पाया; उनके लिए दाना छिडक रहा हूँ । शायद अल्लाह मुझे इसका सबाब दे ।" मुसलमानियत के अभिमान मे ज़ू बोले, "गैर का दाना वहाँ पसन्द नही ।" यहूदी ने कहा, "न सही । मेरा काम अल्लाह देखता है, मेरे लिए यही काफ़ी है ।" इसके बाद हज के दिनों मे उसी यहूदी को बडे उत्साह से काबा की प्रदक्षिणा करते हुए उन्होंने देखा । वह बोला, "देखिये, कितना अच्छा नतीजा मुझे उस काम का मिला ।" ज़ू ने ख़ुदा से कहा "नाअहल (अयोग्य) के लिए आपने इस चीज़ को इतना सस्ता क्यों कर दिया ?" जवाब मिला, "मेरी मर्ज़ी जिसे चाहूँ जो दू !"

उनकी कुछ प्रसिद्ध आध्यात्मिक सूक्तियाँ यहाँ दी जाती है ताकि भक्त लोग उन पर मनन और आचरण करके लाभ उठावें:—

उससे अधिक कोई खुशहाल (आनदमय) नही जो पर्हेज़-गारी (सयम-नियम) का लिबास (वेश) पहने हो ।

कम खानेवाले का जिस्म तन्दुरुस्त रहता है और कम गुनाह करनेवालों की रूह (आत्मा) तन्दुरुस्त (स्वस्थ) रहती है।

जो शख्स बला (दैवी कोप) पर सब्र (संतोष) करे उससे ताज्जुब नही बल्कि ताज्जुब उससे है जो बला पर खुश हो ।

ख़ुदा से डरनेवाले सीधी राह पाते है और उससे न डरनेवाले गुमराह होते है । इस सम्बन्ध में एक दूसरे सन्त का कथन है—जो ख़ुदा से डरता है उससे दुनिया की सब चीज़े डरती है । जो ख़ुदा से नही डरता वह ख़ुद सब चीजों से डरता है । अल्लाह का ग़ज़ब (कोप) उस पर होता है जो दरवेशी यानी सीधी-सच्ची बन्दगी की

ज़िन्दगी से दूर रहता है। इन्सान पर ६ चीजों से खराबी आती है: नेक ऐमाल (सत्कर्म) मे कोताही (उपेक्षा) करना; शैतान की इताअत (आज्ञापालन) करना; मौत को भूल जाना ; खुदा की रज़ामन्दी छोडकर मखलूक की रजामन्दी अख्तियार (ग्रहण) करना; मन की मौज मे आकर सही रास्ते को छोड देना; नेक मर्दो की भूलों को सबूत मानकर उनपर चलना और उनकी अच्छाइयों पर ध्यान न देना और इस बुराई से जब तकलीफ हो तो उनपर इल्ज़ाम लगाना।

साहबे हिम्मत (साहसी व्यक्ति) सलामती से नजदीक होता है और साहबे इरादत मुनाफिक होता है, अर्थात्, धर्मानुकूल आचरण करने का जिसमे साहस है उसका कल्याण होता है और जो एषणाओं की प्रेरणा पर चलता है वह ईश्वर-विमुख हो जाता है। यह कि हिम्मत-वाला किसी से सवाल नही करता और इरादत (श्रद्धा) वाला थोडी-चीज पर फिसल पडता है।

पर्हेजगारो की सोहबत (सगति) मे जिन्दगानी (जीवन) का लुत्फ (सुख) मिलता है।

ऐसे शख्स से दोस्ती पैदा करनी चाहिए जो तेरे नाराज होने से राजी न हो, अर्थात्, जो तुम्हारे क्रोध की पर्वाह न करके सच्ची सलाह दे। मुहब्बते इलाही (प्रभु-प्रेम) की अलामत (पहचान) यह है कि उसके हबीब (प्यारे) [illegible] (विरोध) न करे—सदाचार से रहे।

खुदा की मुआफ़क़त (मित्रता), खल्क को नसीहत (उपदेश), नफ्स (कामवासना) की मुखालिफत (विरोध) और दुश्मन यानी शैतान से अदावत (वैर) करे। उससे ज्यादा कोई बेवकूफ हकीम नही जो मस्तो का इलाज मस्ती की हालत में करता है। यानी उन लोगों को नसीहत करना बेकार है जो दुनिया के नशे मे चूर हो। होशियार होने पर ही मस्त से तौबा कराना ठीक होगा।

नेक वह है जो बुरी तरफ नजर न करे और न कोई बुरी बात सुने।

गोशानशीनी से ज्यादा इख़्लास (निष्कपट प्रेम) की राह दिखानेवाली मैंने कोई चीज़ नही देखी। जो एकान्त मे रहता है वह सच्चे प्रेम और भक्ति के स्तम्भ को पकडकर खडा होता है।

पहले कदम पर तू अल्लाह को नही पा सकता।

जब कोई सच्चे दिल से तौबा करता है तो उसके सब गुनाह माफ हो जाते है।

अच्छा होता कि अल्लाह अपने प्यारे को उस वक्त मुहब्बत अता (प्रदान) करता जब उसके दिल से खौफे फिराक (वियोग का भय) दूर कर देता।

हर चीज की सजा मुकर्रर (नियत) है और याद से ग़ाफिल (प्रभु-स्मरण को भूलना) होना मोहब्बत की सजा है।

सूफी वह है जो ऐसी नसीहत करे, जिसपर खुद अमल कर चुका हो।

खुदा से डरनेवाले को आरिफ (ज्ञानी) कहते है। जो खुदा के जितना ही करीब होता है उसे खुदा का खौफ़ भी उतना ही ज्यादा होता है। आरिफ का हाल हमेशा एक-सा नही रहता क्योंकि हर वक्त गैब (परोक्ष) से उस पर इस्रार (रहस्य) जाहिर (प्रकट) होते है, जिनके मुताबिक उसकी हालत बदलती रहती है।

आरिफ़ उसे कहते है, जो बग़ैर इल्म के अल्लाह को जान ले, बग़ैर आँख के देखे, बगैर कान के सुने, वाकिफ हो, बगैर सिफ्त (तारीफ) के उसे पहचान ले, बगैर कश्फ़ (प्रकट होना) और हिजाब (संकोच) के उससे मुलाकात करे। इसलिए कि आरिफ फना-फ़िल्लाह (ब्रह्मलीन) हो जाता है। अल्लाह ने कहा है कि जिसे मै दोस्त रखता हूँ उसके लिए कान हो जाता हूँ ताकि मुझसे सुने;

आँख हो जाता हूँ ताकि मुझसे देखे; ज़ुबान हो जाता हूँ ताकि मुझसे बात करे ; हाथ हो जाता हूँ ताकि मुझसे पकड़े ।

आख़िरत (परलोक) के बादशाह ज़ाहिद (विरक्त) हैं और जाहिदों (विरक्तों) के बादशाह आरिफ़ हैं ।

सोहबते-इलाही (प्रभु-संगति) के मानी हैं कि जितनी चीज़ें उससे दूर करने वाली है उन सबसे दूर रहे ।

बीमार दिल की चार निशानियाँ हैं :— इबादत (उपासना) मे मज़ा न पाना ; खुदा का ख़ौफ़ न करना ; दुनिया की चीज़ों से इबरत (शिक्षा) हासिल न करना; इल्म (ज्ञान) की बात सुनकर उसपर अमल न करना ।

खिलवत वह अच्छी नही जिससे खुदबीनी—गरूर पैदा हो ।

मेरी जान की गिज़ा (खुराक) जिक्रे इलाही (प्रभु-चर्चा) है ।

तक़्वा यानी (संयम) उसे कहते है जो ज़ाहिर को गुनाह (पाप) और नाफर्मानी (अवज्ञा) से नापाक (अपवित्र) न करे और बातिन को बेहूदा बातों से बचाये और हर वक्त अल्लाह का तसव्वुर (ख़याल) करे ।

जो शख़्स ऐसे काम मे तकलीफ उठाता है जो उसके काम न आये तो वह उस चीज़ को बर्बाद करता है जो उसके काम की है। इसी तरह जो शख़्स उस चीज की तलाश करता है जिससे उसे लाभ नही हो सकता तो वह ऐसी चीज को खो देता है जो उसे फायदा पहुँचा सकती है ।

जिसके जाहिर (प्रत्यक्ष) से उसके बातिन (अंतस्) का हाल मालूम न हो उसकी सोहबत न करनी चाहिए ।

जो दिल से खुदा को याद करता है वह और सबको भूल जाता है ।

किसी ने पूछा—आपने अल्लाह को कैसे पहचाना तो जवाब दिया कि मैंने उसे उसी की वजह से पहचाना ।

किसी ने पूछा—खल्क के बारे में आपका क्या विचार है ? तो बोले—खल्क ग़ैर की वहशत (त्रास) है।

बहिश्त (स्वर्ग) का हकदार (अधिकारी) होने के लिए ५ बातों की ज़रूरत है :— मज़बूती से सच्चाई पर डटा रहना; बुराइयों से डर कर जूझना ; अन्दर और बाहर खुदा को ही देखे; मौत का इन्तज़ार और आखिरत की तैयारी रखे; कयामत से पहले अपना हिसाब खुद करे।

किसी ने पूछा—तवक्कुल यानी प्रभु-निर्भरता क्या है तो कहा—खल्क से किसी तरह की उम्मीद या ख़ाहिश न रखना। गोशानशीनी और सभी दुनियाबी चीज़ों को छोड़कर दिल को खुदा में लगाना है।

किसी ने पूछा—दुनिया किसे कहते है ? तो बोले—जो चीज़ अल्लाह से ग़ाफ़िल कर दे, वही दुनिया है। जो अल्लाह की राह न जानता हो और दूसरे से पूछे भी नही, वही कमीना है।

हज़रत यूसुफ-बिन-हुसैन के पूछने पर कहा—मोहबत ऐसे लोगों की करनी चाहिए जिनके आगे मैं और तू का झगडा न हो। फिर कहा—नफ़्स की मुखालिफ़त करके अल्लाह के मुआफ़िक बन नकि नफ़्स का साथ देकर अल्लाह से मुखालिफ़त पैदा कर और किसी को हक़ीर (घृणास्पद) न समझ, चाहे वह मुशरिक यानी ईश्वर के बजाय किसी और को ही पूजने वाला क्यों न हो, क्योकि मुमकिन है, वह राह पर आकर खुदा का प्यारा हो जाय।

सूफी वह है, जो सबसे हटकर सिर्फ़ अल्लाह से वास्ता रखे।

किसी ने उपदेश के लिए प्रार्थना की तो कहा—अपने ज़ाहिर को खल्क (सृष्टि) के, और बातिन को खालिक (सृष्टि कर्त्ता) के हवाले कर दे और अल्लाह की मुहब्बत पैदा कर ताकि अल्लाह तुझे खल्क से बेनियाज़ (बेपर्वाह) कर दे। शक (संदेह) को यकीन (विश्वास) पर हावी न होने दे और जब कोई मुसीबत आये तो सब्र कर और खुदा की बन्दगी में ज़िन्दगी बसर कर।

भावी और भूत के झगडे मे अपने मन को मत डाल, अर्थात् जो हो गया है और जो होने वाला है उसको भूल कर इस समय जो तेरा फर्ज है बस उसी पर ध्यान दे।

किसी ने मारिफत (विरक्ति) की हद पूछी तो कहा—जिसको मारिफत की हद मालूम हो जाती है वह खुद गुम हो जाता है। कहा—आरिफ को हर हाल मे अल्लाह की याद और यकीन हासिल रहता है।

जू-उल-नून का अन्त समय आया तो उन्होंने यह फिकरा पढा—खौफ़ ने मुझे बीमार कर डाला और शौक ने मुझे बचाया। मुहब्बत ने मुझे मारा और अल्लाह ने मुझे जिलाया। बेहोश हो जाने के बाद जब फिर होश मे आये और हजरत यूसुफ ने वसीयत चाही तो बोले, "इस वक्त मुझे बातो मे न लगाओ। मै उनकी अनगिनत मेहबानियो की याद करके हैरान हो रहा हूँ।" कहते है उनकी मृत्यु हो जाने पर उनकी पेशानी (छाती) पर लोगों ने यह लिखा देखा, "यह अल्लाह का प्यारा है। उसीकी मुहब्बत मे इसे मौत आई। यह अल्लाह का मारा हुआ है, उसीकी तलवार ने इसे कत्ल किया है।" जब किसी ने यह आयत पढी "अशहदम इल्लिल्लाह" तो जनाजे (अर्थी) मे से उनकी एक उंगली उठी और उठी ही रही।

उस खुदा के सिवा दूसरा और कोई खुदा नही है। जब मस्जिद मे से अजान की यह आवाज आई तो इस महान सत्य की पुष्टि मे जू-उल-नून की उंगली उठी। लोगो ने समझा अभी वह जिन्दा है। जनाजा उतार कर देखा तो जान न थी मगर वह उगली कोशिश करने पर भी बराबर न हुई, उठी ही रही। मिस्रवालो को जब यह सब हाल मालूम हुआ तो उन्हे अपने किये पर बडा अफसोस हुआ; क्योंकि जिन्दगी भर वे उनसे अदावत (शत्रुता) ही करते रहे। उनकी वह अन्तिम उठी हुई उंगली इस बात का प्रमाण है कि प्रियतम के सिवा उन्हे किसी से कुछ वास्ता न था और उनके उपदेशों में भी दुनिया के प्रति हद से बढ़ी हुई लापर्वाही दिखाई देती है, जिसके भीतर से उनका ईश्वर-प्रेम और भी अधिक तेज़ी से चमकता हुआ दीखता है।

: ५ :

दाऊद ताई

जब पकडने वाला किसी को किसी छोटी-सी बात से पकड कर अपनी ओर खीचता है तो दुनिया की एक मजेदार कहानी बन जाती है। नानक नाज तोल रहे थे। जब तेरह पर आये तो तेरा कहते-[illegible] उसीके हो गए। दाऊद ताई के जीवन मे भी क्राति कुछ अचानक आई। किसी गानेवाले ने अरबी का एक पद गाया, जिसका भाव यह था—"कौनसे तेरे चेहरे खाक मे न मिले और कौनसी तेरी आँख जमीन पर न बही।" बस तीर लग गया, बेखुद और बेकरार हो गए। इसी हालत मे इमाम अबु हनीफा के पास पहुँचे और उनकी सलाह मे गोशानशीनी (एकात सेवन) इख्तियार की।

जब उनकी बेचैनी कुछ कम हुई तो इमाम अबु हनीफा ने उन्हे अपने समकालीन साधुओ और सतो के सत्सग का आदेश दिया और कहा, उनकी बाते सुनो और मनन करो। एक बरस तक उन्होने यही किया। चुपचाप लोगों की बाते सुनते और खुद कुछ न बोलते। इसी बीच हबीब राई नाम के सत से इनका परिचय हुआ और उनसे प्रभावित होकर यह उनके शिष्य हो गए। भगवत-भक्ति और तप के द्वारा इनके अतर-पट खुल गए और धीरे-धीरे आध्यात्मिक उत्कर्ष प्राप्त करके ऊँची श्रेणी के संत हो गए।

इनको पैतृक सम्पत्ति मे बीस दीनार मिले थे। उन्ही से २० बरस तक इन्होने अपना ख़र्च चलाया और न किसी से कुछ लिया और न माँगा। मगर कहने वाले चूकते कब हैं! संतों ने आक्षेप किया कि दीनारों का संग्रह त्यागवृत्ति के प्रतिकूल है। किन्तु दाऊद ने उन्हे यह कहकर चुप कर

दिया कि यह दीनार जीवन भर के लिए पर्याप्त है और बाधक होने के बजाय निर्विघ्नता पूर्वक भगवत्-भक्ति करने में सहायता दे रहे है । ईश्वर-भक्ति के अतिरिक्त उनकी अन्य किसी ओर रुचि न थी। दिन रात ईश्वर-स्मरण मे ही लीन रहते थे।

उनकी तल्लीनता का यह हाल था कि भोजन करना भी उन्हे भार-सा प्रतीत होता था। इसीलिए वह उसे पानी मे घोल कर पी जाते। कोई पूछता तो कहते कि ग्रास बनाकर खाने मे जितना समय जाता है उतने समय में तो पचास आयतों का पाठ कर सकता हूँ। इधर हलाल रोजी (धर्मानुकूल कमाई) का भी बड़ा खयाल रहता। एक रोज सत अबु बकर मिलने आये तो देखा कि रोटी का एक टुकड़ा हाथ मे लिये है। पूछा, "यह क्या माजरा है ?" कहा, "मै इसे खाना चाहता हूँ, मगर मालूम नही कि यह हलाल कमाई का है या नही।" पानी का घडा धूप मे रखा था। किसी ने छाया में रखने को कहा तो बोले, "इसके लिए उसका नाम छोड़ ? ऐसा करते शर्माता हूँ।"

जिस मकान मे वह रहते थे, बहुत बडा और पुराना था। उसका एक हिस्सा गिर गया तो वह दूसरे हिस्से मे रहने लगे। जब वह भी गिर गया तो दरवाज़े मे रहना शुरू किया। उसकी छत भी मुद्दत से बे-मरम्मत और पुरानी थी। किसी ने कहा, 'मकान बनवा लीजिए, दरवाज़े मे न रहिये क्योंकि इसकी छत भी टूटी हुई है।" बोले, "मै खुदा से ऐसा वादा कर चुका हूँ कि नया मकान तामीर न करूँगा। खुदा की इबादत मे लगे रहने की वजह से मैंने कभी छत की ओर देखा भी नही। मुमकिन है, तुम्हारा कहना सच हो कि छत गिरनेवाली है।" और कहते है, उनकी मृत्यु के बाद वह छत गिर गई।

किसी ने पूछा, "आप निक़ाह (विवाह) क्यो नही करते ?" बोले, "निक़ाह में औरत के लिए खाना और कपड़ा देने का वादा करना होगा और देने वाला सच पूछो तो अल्लाह के सिवा और कोई नहीं हो सकता। इसलिए मै किसी को धोखा देना नही चाहता।" किसी ने पूछा,

"दाढ़ी में कंघी क्यों नही करते ?" बोले, "खुदा से फुर्सत मिले तब न !"

एक दिन का ज़िक्र है कि रोज़ा था और गरमी के दिन थे, धूप में बैठे इबादत कर रहे थे। माता ने प्यार से कहा, "धूप से छाया में चले आओ।" तब उसे भी वही उत्तर दिया जो घड़ेवाली घटना के समय दिया था। कहा, "जब यहाँ बैठा था तब छाया थी; अब मुझे शर्म आती है कि नफ़्स की खातिर क़दम उठाऊँ और दम भरके लिए उन्हे भूलू।" कहा, "बग़दाद मे लोगों ने जब परेशान किया तो मैंने खुदा से दुआ की तुम मेरा खिर्का (फटा-पुराना लिबास) ले लो, ताकि ज़माने की नमाज़ में मुझे न जाना पड़े, और दुनिया मुझ से न लिपटे। खुदा ने वह गुदड़ी ले ली और अब मुझे गोशानशीनी और खुदा के नाम के सिवा कुछ अच्छा नही लगता।"

एक बार चांदनी रात को सैर के लिए छत पर चढे। उस सुदर कुदरती नज़ारे से ऐसे प्रभावित हुए कि बरबस बेखुद होकर गिर पड़े। आवाज़ सुनकर पड़ोसी ने समझा, कोई चोर है और तलवार लेकर ऊपर दौड़ा हुआ आया। दाऊद को देखकर हैरत से पूछा, "आप यहाँ कैसे पड़े है ?" बोले, "मुझे कुछ होश नही, मालूम नही किसने मुझे यहाँ फेक दिया।" लिखा है कही—वह बड़े ज़ालिम है। छत देखने की जिसे फुर्सत न थी वह चादनी देखने क्यों आवे ? राबिआ रात को बैठी याद में लीन थी। उसकी सखी ने तारों-भरा आसमान देख कर पुकारा, "अरी, बाहर आकर उसकी (खुदाकी) सन्अत (कारीगरी) तो देख।" राबिआ बोली, "सन्अत का क्या देखना सानिए (कलाकार यानी प्रभु) को देख।" कलाकार को भूलकर कला देखने के कारण ही दाऊद शायद फेके गए।

दाऊद का रोना प्रसिद्ध है। उनसे कोई गुनाह हो गया था। उसके लिए वह बहुत रोए और पछताए। यों तो रोना, जागना, भूखे रहना, पैर न फैलाना, संतों के मानो आभूषण हैं। फिर भी दाऊद रोने में बाजी ले गए।

गमगीन तो हमेशा रहते और कहते जिसको हर वक्त मुसीबतों का सामना हो वह भला खुश कैसे हो सकता है ? लेकिन एक दिन आदत के खिलाफ उन्हें हँसता हुआ देखकर लोगो ने आश्चर्य से पूछा, "आज हँसने की क्या वजह है ?" बोले "आज मुहब्बत की शराब उन्होने मुझे पिलाई है। इसलिए मै खुश हूँ और हँस रहा हूँ।" हजरत अबु वास्ती ने जब नसीहत चाही तो एक आयत सुना कर दाऊद ने कहा, "दुनिया से रोजा रक्खो और आखिरत (परलोक) से अफ्तार करो।" शायद इसका मतलब यह भी हो कि दुनिया की बातो से तो दूर रहो ही, मगर आखिरत से भी उतना ही वास्ता रक्खो जितना कि रोजे वाला कुछ थोडा-सा खाकर अपना रोजा खोलता है। किसी और संत ने कहा है, "या अल्लाह, दोजख अपने दुश्मनो को दे, जन्नत दे अपने दोस्तो को, मेरे लिए तो तू ही बस है।" दाऊद ने किसी दूसरे के नसीहत माँगने पर कहा, "जबान को बुरी बातो से बचाओ, लोगो से दूर रहो, हो सके तो उनका खयाल एकदम दिल से निकाल दो और दुनिया की अच्छी चीजो से दीन की अच्छाई को ज़्यादा अच्छा समझो।"

किसी ने उपदेश माँगा तो कहा, "तू दुनिया के लिए जितनी कोशिश करता है उतनी ही दीन के लिए करे तो बेहतर।" मगर एक दूसरे व्यक्ति से कहा कि दीन और दुनिया दोनो को तर्क करने से आदमी आरिफ हो जाता है। फजील, जो पहले डाकू थे, और जिनका जिक्र पहले आ चुका है, इनसे परिचित थे और इन्हे इस बात का फख्र हासिल था कि वह दो बार इनसे मिले। एक बार तो उसी टूटी छत के नीचे बैठे देखकर फ़जील ने कहा, "अलग हट जाइये कही छत के गिरने से चोट न लगे।" दाऊद बोले, "मैंने आज तक छत को देखा ही नही।" दूसरी बार मिलने पर संत फजील ने जब कुछ नसीहत चाही तो दाऊद बोले, "दुनिया में लोगों से मिलना छोड़ दो।"

मारूफ़ करखी नाम के संत का कहना है कि मैंने हजरत दाऊद से ज़्यादा दुनिया से नफ़रत करनेवाला किसी को न देखा। विरक्त और

और उदासीन होने के अलावा उनकी एक याद रखनेवाली बात यह थी कि जब वह कपड़े धोते तो कहा करते कि अगर मैं इसी तरह मलमल कर अपना दिल धोता तो बहुत अच्छा होता।

इमाम मुहम्मद और इमाम अबु यूसुफ दोनो ही संत दाऊद के परिचितों मे थे और जब इन दोनो मे किसी विषय पर मतभेद पैदा हो जाता तो उसका फैसला दाऊद ही अक्सर करते और जो यह कहते उस पर दोनो अमल करते। लेकिन वह इमाम मुहम्मद का अदब अबु यूसुफ की निस्बत ज्यादा करते। लोगो ने इसका सबब पूछा तो कहा, "इमाम मुहम्मद ने दीन के लिए इल्म हासिल किया है और इमाम अबु यूसुफ ने इल्म को इज्जत का जरीआ बनाया है और काजी का दर्जा मजूर करके वह अपने उस्ताद इमाम अबु हनीफा के मार्ग से हट गए।

हारू रशीद इमाम अबु यूसुफ के साथ एक बार जब इनसे मिलने आये तो इन्होंने मिलने से इन्कार कर दिया और कहा, "मैं दुनियादार और जालिमों से मिलना नही चाहता।" फिर मा के खास इसरार करने पर उन्हे आने दिया। कुछ देर बैठकर चलते समय हारूं रशीद ने एक अशर्फी भेट की पर उन्होंने उसे वापिस कर दिया और कहा, "मैंने अपना मकान हलाल रुपए के एवज बेच दिया है और उसीसे मैं अपना खर्च चला रहा हूँ। और मैंने यह दुआ की है कि वह जब खर्च हो जाय तो अल्लाह दुनिया से उठा ले।"

वे दोनों लाचार उनके पास से चले आये मगर अबु यूसुफ ने उनके नौकर से पूछा कि अब हजरत दाऊद के पास खर्च के लिए कितनी दौलत शेष है? नौकर ने बताया, दस दिरम चादी बाकी है। अबु यूसुफ़ ने हिसाब लगा कर समझ लिया कि इतने दिन वह और जिदा रहेगे और उतने दिन गुज़रने पर लोगों से कह दिया कि अब वह दुनिया मे उठ गए। लोगों ने जाकर उनकी वालिदा से पूछा। मालूम हुआ कि रात भर उन्होंने मस्जिद मे इबादत की और सिज्दे (नमाज पढ़ते हुए) की हालत मे दम छोडा। खुदा ने अपने मुरीद की यह दुआ भी कबूल की।

एक आदमी ने स्वप्न में हज़रत दाऊद को हवा में उड़ते और यह कहते देखा कि आज मैंने कैदखाने से रिहाई पाई। सबेरा होते ही वह आदमी दाऊद से ताबीर (स्वप्न फल) पूछने आया और वहाँ आपके इन्तिक़ाल का हाल सुनकर खुद ही समझ गया कि उसके स्वप्न का क्या फल था। आस्मान से, कहते है, आवाज़ आई, "खुदा अपने मुरीद दाऊद से राज़ी है।"

: ६ :

अबु मुहम्मद जरेरी

उनकी कुछ सूक्तियाँ नीचे दी जाती हैं :—

इख़्लास (सच्चा प्रेम) शजरे यक़ीन (विश्वास रूपी वृक्ष) का फल है और रिया (आडंबर) शक का समर (नतीजा) है।

दिल का असली काम कुर्बते-हक (सत्य से संपर्क करना) और मुशाहिद-ए-सन्अत (प्रभु की कारीगरी को पहचानना) है।

नफ़्स (विषय) की पैरवी करनेवाला कैदी है।

नफ़्स की राहत (चैन) के लिए मेहनत और नेंमत मे फ़र्क न करना, यह सब्र है।

सब्र बला पर सक़ून (विपद् में धैर्य) को कहते है।

बडा शुक्रिया यह है कि बन्दा शुक्र (कृतज्ञता प्रकाशन) करने से अपने को आजिज़ (विनम्र) जाने।

ईमान की सलामती (सुरक्षा), दीन और तन की दुरुस्ती तीन चीजों में है—किफ़ायत करने में,; मुनहियात से परहेज़ करने मे, और गिज़ा (ख़ुराक) कम खाने में।

किफ़ायत करने वाले का बातिन दुरुस्त होता है और पहेंज़गारी से रहनेवाले का बातिन रोशन होता है और ग़िज़ा कम खाने वाले का नफ़्स मेहनतकश (श्रमशील) हो जाता है।

जिस बन्दे को अल्लाह अपने अनवार (प्रकाश पुज) से ज़िन्दा करता है वह कभी नहीं मरता।

आरिफ (ज्ञानी) इब्तिदा (प्रारभ) मे ही अल्लाह को याद करते हैं और अवाम (जनसाधारण) तकलीफ मे।

उपरोक्त विचार अबु मुहम्मद जरेरी के है। कहते है इनको तमाम उलूम (ज्ञान) जाहिरी और बातिनी मे आला दर्जे का कमाल हासिल था। अदब से बेहद वाकिफ थे। खुद इनका ही कहना है कि अल्लाह के अदब की वजह से बीस साल तक कभी खिलवत में भी पैर नही फैलाए।

एक साल मक्का मे इस तरह से रहे कि अदब के लिहाज से न सोये, न बात की, न दीवार का तकिया लगाया और न पैर फैलाए। अबु बकर ने पूछा, "इतने बर्दाश्त की ताक़त आपमे कैसे आई?" कहा, "मेरे सिद्क बातिन (अंतस्) ने मेरे जाहिर को बर्दाश्त (सहन) की कुव्वत (शक्ति) दी।" कहते है, जुनैद के बाद यही उनके कायम-मुकाम (उत्तराधिकारी) हुए।

एक फ़कीर नगे पैर बाल खोले हुए आया, वुजू किया और नमाज़े अस्र पढ़कर मगरिब तक सिर झुकाए बैठा रहा। इनके साथ मग़रिब की नमाज पढ़कर फिर सिर झुकाकर बैठ गया। उस दिन खलीफा के यहाँ सूफ़ियों की दावत थी। इन्होने साथ चलने को कहा तो वह बोला, "मुझे खलीफा से क्या मतलब? हाँ, तुम चाहो तो थोडा-सा हलुवा ला दो।"

अबु मुहम्मद ने समझा यह कोई नौ-मुस्लिम है और उसकी बात पर कुछ ध्यान न दिया। वह दावत से वापिस आये तो देखा कि वह शख्स उसी तरह सिर झुकाए बैठा है। जाकर सो रहे। ख्वाब में देखा कि मुहम्मद की दाई जानिब इब्राहीम और बाईं जानिब मूसा है, साथ मे २०१०० नबी हैं।

अबु मुहम्मद सामने गये तो रसूल ने मुह फेर लिया। सबब पूछा तो बोले, "हमारे एक दोस्त ने तुझसे हलुवा माँगा और तूने उसकी बात पर ध्यान न दिया—टाल गया।" अबु मुहम्मद जागे और उसके पास गये। वह जा रहा था। रोकने से भी न रुका। यह कहकर चला गया—अब २०१०० नबियों की सिफ़ारिश पर हलुवे को कहता है, पहले कहाँ था!

अपनी जीवनी की एक घटना उन्होंने यों बताई है। जामा मस्जिद बग़दाद में एक बुजुर्ग रहते थे। वे हमेशा एक ही लिबास पहने रहते।

मैंने सबब पूछा तो उन्होने कहा, "मैंने एक बार ख्वाब देखा कि जन्नत में कुछ लोग अच्छे कपडे पहने दस्तरख्वान पर बैठे है। मै भी बैठ गया मगर मुझे उठा दिया और कहा तू यहाँ बैठने लायक नही।"

वह बुजुर्ग बोले, "हाथ पकड कर उठानेवाले फरिश्ते ने कहा कि ये वह लोग है, जिन्होंने तमाम उम्र एक ही लिबास पहना है। उसी दिन से मैंने इरादा कर लिया कि अब मैं भी आइन्दा सिवा एक लिबास के दूसरा न पहनूगा। उस दिन से आज तक मैंने अपना लिबास नही बदला।"

: ७ :

हज़रत अबु हमज़ा ख़ुरासानी

अबु हमजा खुरासान के बहुत बड़े संतों में हुए हैं। इबादत (उपासना) और रियाजत (तपस्या) तो और संतों की तरह इन्होंने भी खूब की मगर तवक्कुल (ईश्वर-भरोसा) इनके जीवन की सबसे बड़ी चीज है। अबु तराब और जुनैद से इनका मिलना हुआ था।

जुनैद की शैतान को देखने की इच्छा थी और वह उन्हे मिला भी। मगर शैतान पर जुनैद की इतनी हैबत तारी (आतंकछाया हुआ) थी कि उसने जुनैद के कहने पर यह वचन दिया था कि वह बगदाद में कभी क़दम न रखेगा।

इस शैतान को एक बार जुनैद ने देखा कि लोगों के सिर पर नंगा सवार हो रहा है। जुनैद बोले, "अबे ओ नालायक, तुझे शर्म नही आती?" शैतान बोला, "यह आदमी नहीं जिनसे मै शर्म करूँ, आदमी वह है जो मस्ज़िद शौनीज़ा मे बैठा है।"

जुनैद उसकी बात सुनकर मस्जिद शौनीजा पहुँचे और वहाँ उन्होंने इन्ही संत अबु हमज़ा को बैठे पाया। उन्हे देखते ही अबु हमज़ा बोले, "वह झूठा है, क्योंकि खुदा के नज़दीक औलिया (संत) का मर्तबा (दर्जा) उससे अधिक है, जिससे शैतान वाक़िफ़ हो?"

एक बार अल्लाह पर तवक्कुल (मात्र प्रभु का भरोसा) करके सफ़र को निकले और यह प्रण किया कि किसी से कुछ न मांगेगे। चलते समय बहन ने कुछ दीनार गुदड़ी में रख दिए थे कि समय पर काम आवें; मगर उन्ह जब याद आई तो दीनार निकाल कर फेंक दिए।

उनमें ईश्वर का विश्वास कितना गहरा है यह प्रमाणित करने के लिए एक अघटनीय घटना घटित हुई—वह कुएँ मे जा गिरे।

गिरे तो सही ; पर चोट न आई। ईश्वर-विश्वासी थे इसलिए न चीखे, न चिल्लाए, न किसी ग़ैर से मदद लेने की इच्छा ही अपने मन मे की। नफ़्स ने, यानी अन्तःकरण का वह भाग, जो अपने को शरीर से सम्बद्ध समझता है, बहुत द्वन्द्व मचाया।

नफ़्स तो अन्तर मे अपनी शक्ति पर उखाड-पछाड़ मचाए ही रहा; मगर अबु हमज़ा उसकी परवाह न करके भगवान के भजन में अपनी सात्विक वृत्तियों को लेकर लीन हो गए। विवशत', नफ़्स को चुप हो जाना पडा।

इतने मे कोई मुसाफ़िर उधर से गुजरा तो उसने सोचा यह कुआँ रास्ते मे है, कही अन्धेरे-उजालेमें कोई गिर न पड़े इसलिए उसने जहां-तहाँ से इकट्ठे करके कुएँ की जगत पर काटे बिछा दिए।

कुएँ के अन्दर पडे हुए अबु हमजा की आँखों ने यह देखा और नफ्स ने इस बार और भी बावेला मचाया; मगर उसकी परवाह न करके अपने परम-हितैषी परमात्मा के विश्वास पर ही निश्चल पडे रहे।

कहते है, थोडी देर मे एक शेर आया और उसने कुएँ पर से काँटे हटाकर अपने दोनो पजे मज़बूती के साथ जगत पर जमाये और अपने पैर कुएँ में लटका दिए। निश्चय ही यह एक विचित्र प्रसग था।

अबु हमजा ने यह सब देखा ; मगर मन मे कहा, मैं बिल्ली का अहसान न लूगा। तब इल्हाम हुआ, "इसे हमने भेजा है। इसके पाँव पकड कर ऊपर चढ़ आओ।" ईश्वर की ऐसी आज्ञा है, ऐसा समझ कर उन्होंने पैर पकड लिये और शेर के साथ ऊपर आ गए।

तब सुना, कोई कहता है, "तूने हम पर तवक्कुल किया तो हमने तेरे क़ातिल (ख़ूनी) के जरीआ तुझे निजात (मुक्ति) दी।" इतना ही नहीं, कहते है शेर ने अबु हमजा के पैर चूमे और फिर धीरे-धीरे वहां से चलकर आँखों से ओझल हो गया।

अबु हमजा हर साल एहराम (हाजियों का वस्त्र) बाँधते और दूसरे साल तक न खोलते, वह कहते थे उन्स अर्थात् ईश्वर-प्रेम यह है कि खल्क के साथ रहना-सहना, बातचीत करना बुरा मालूम हो। सच भी है। ईश्वर-प्रेम से जिसका मन भरा हो उसे अन्य से सम्बन्ध रखना भार मालूम होता है।

वह कहते है, गरीब वह है जिसे अपने सगे-संबंधियो और प्रेमी-मित्रों से विरक्ति हो, जिसकी लगन अपने मालिक से लगी हो। कहते, मौत को जाननेवाला सिवा ईश्वर के और किसी को अपना दोस्त नही समझता।

तवक्कुल—ईश्वर-विश्वास, जो उनके जीवन का खास अग था, उनकी दृष्टि मे यह है कि मनुष्य सुबह का शाम को और शाम का सुबह को खयाल न करे। वह इस पर जोर देते—तोश-ए-आकिबत मुहैया करो, अर्थात्, अच्छे कर्म करो, जो परलोक मे काम आवे।

: ८ :

अबुल हसन ख़िरक़ानी

ख़िरक़ान के रहनेवाले अबुल हसन एक बहुत ही ऊँचे दर्जे के सन्त हुए है। इतने ऊँचे कि एक बात को निहायत ही बेतकल्लुफी (निःसंकोच) से कह गए हैं। उसकी कहानी यों है : यात्रियों का एक दल हज को जा रहा था। रास्ता खतरनाक था। सबने आकर ख़िरकानी से कहा कि कोई ऐसी दुआ बता दीजिए कि जिसकी वजह से हमारे ऊपर सफर में कोई मुसीबत न आये। उन्होने इसके उत्तर मे इतना ही कहा कि जब कोई मुसीबत आये तो तुम अबुल हसन को याद करना।

उस ज़माने मे भी सभी विश्वासी रहे हो ऐसी बात तो न थी। लोग मन-ही-मन मुस्कराए और यात्रा पर चल पड़े। राह मे डाकुओं ने घेर लिया। एक व्यक्ति को, जो अधिक धनवान था और जिसे लूटने के लिए डाक भी विशेष आतुर थे, अबुल हसन का वचन स्मरण हो आया। उसने सच्चे जी से उन्हे याद किया। तत्काल वह ओझल हो गया। डाकू बड़े चकित थे। औरों को लूटकर जब डाकू चले गए तब वह नजर आया। अपने माल-असबाब के साथ सही-सलामत वह जहाँ था, वही खडा दीखा।

स्वभावतः ही लोगों ने पूछा, "तुम कहाँ ग़ायब हो गए थे ?" उसने ज़वाब दिया, "मैंने शेख अबुल हसन को याद किया था। ख़ुदा की कुदरत से मै सबकी नज़रों से ग़ायब हो गया।" जब यह दल लौटा तो अबुल हसन से पूछा, "शेख ! यह क्या माजरा है कि हम ख़ुदा को याद करते रहे और लूटे गए और इस शख़्स ने आपको याद किया और बच गया ?"

वह बोले, "तुम लोग अल्लाह को जुबान से याद करते हो और अबुल

हसन दिल से। बस तुम अबुल हसन को यानी ईश्वर को सच्चे जी से याद करनेवाले उसके किसी भी पहुंचे हुए मुरीद को याद करो ताकि वह तुम्हारे लिए खुदा को याद करे और तुम महफूज हो। और सिर्फ़ जुबान से हज़ार बार भी याद करोगे तो कुछ फ़ायदा न होगा।"

सन्तो मे परस्पर खासी चुहल होती है और यहाँ ऐसी दो घटनाएँ दी जाती है। शेखो के शेख़ हजरत अबु-उल-उमर-अबु-अब्बास ने एक दिन इनसे कहा कि आओ हम और तुम इस दरख्त पर चढ़कर फांदे और वह इतना बडा था कि हजार जानवर उसकी छाया में आराम से बैठते थे। अबुल हसन ने जवाब दिया, "आओ हम लोग अल्लाह के लुत्फ का हाथ पाकर दोनो जहान से फांदे। न बहिश्त की ओर देखे न दोजख की जानिब!"

अबकी बार इन्ही शेख़ ने कुछ व्यावहारिक विनोद किया। अबुल हसन के सामने जो पानी भरा रखा था उसमे हाथ डालकर शेख ने एक ज़िन्दा मछली निकालकर उनके सामने रख दी। अबुल हसन ने जलती हुई आग मे हाथ डालकर एक ज़िन्दा मछली निकालकर उनके सामने रखते हुए कहा, "पानी से मछली निकालने की बनिस्बत आग से मछली निकालना कम सहल है।" शेख बोले, "आओ इस आग मे कूदे, देखे कौन जिन्दा निकलता है?" हसन बोले, "नही, हम अपनी नेस्ती मे गोता लगावे (अपना अस्तित्व नष्ट कर ले) और देखे कौन अल्लाह की हस्ती (सामर्थ्य) से जिन्दा होकर आता है।"

इन्ही शेख ने कहा कि मै अबुल हसन खिरक़ानी के कारण बीस साल से नही सोया हूँ। और जिस मर्तबे में (दर्जे) मै कदम रखता हूँ इन्हे दो-चार कदम अपने से आगे ही पाता हूँ। मैंने दस साल यह कोशिश की कि बायज़ीद बस्तामी के मजार (कब्र) की जियारत (दर्शन) को इनसे पहले पहुँचू मगर ऐसा न हो सका। अल्लाह ने इन्हे यह कुदरत दी है कि तीन फ़र्संग[1] की मंजिल को दमभर में तय करके बस्ताम मे जा पहुँचते है।

---

१. एक फर्संग—लगभग चार हज़ार गज़ या करीब सवा दो मील।

एक बार एक शिष्य ने लेबनान पर्वत पर जाकर क़ुत्ब आलम की जियारत करने की इजाजत चाही तो उसे मिल गयी। जब वह वहाँ पहुँचा तो मालूम हुआ कि क़ुत्ब आलम नमाज के लिए आनेवाले है। शिष्य ने देखा कि इस नमाज के इमाम क़ुत्ब आलम[1] और कोई नही खुद अबुल-हसन ही हैं। उस पर कुछ ऐसी दहशत (आतंक) तारी हुई कि वह बेहोश हो गया। जब होश मे आया तो पूछा—सच कहो वे इमाम कौन है? मालूम हुआ कि हसन ही है और पाँचों वक्त नमाज के लिए यहाँ आते है।

खिरकान में वह रहते है, यह वह जानता ही था और पाँचों वक्त की नमाज के लिए वह रोज लेबनान पर्वत पर आते है। यह सुनकर शिष्य को बडा आश्चर्य हुआ। इस बात की तस्दीक (पुष्टि) के लिए दूसरी नमाज तक वहाँ ठहरा रहा। वह आये। नमाज के इमाम बने और जब वह जाने लगे तो शिष्य ने उनका दामन पकड लिया। अबुल हसन चुपचाप उस शिष्य को एक ओर ले गए और उससे कहा कि किसी पर वह इस बात को जाहिर न करे।

उनका जीवन आश्चर्यजनक घटनाओ से परिपूर्ण है। एक चमत्कार, जो उनके जीवन से सम्बन्धित है, इस प्रकार है: कुछ मेहमान आये; मगर बीवी ने कहा, "सिवा चन्द रोटियों के घर मे कुछ नही है।" बोले, "रोटियों पर एक कपडा डाल दो और फिर जितनी जरूरत हो उसमे से निकाल-निकाल कर मेहमानों के सामने रखती जाओ।" अतिथियो ने खूब तृप्त होकर भोजन किया। तब नौकर ने कपडा उठाकर देखा—कुछ न था। बोले, "गलती की, वरना कभी कमी न पडती।"

एक अत्यन्त रोचक ऐतिहासिक घटना का उल्लेख उनकी जीवनी में आता है। गजनी का बादशाह सुल्तान महमूद एक बार उनके दर्शनों को आया। उसने दूत के द्वारा यह कहला भेजा कि बादशाह सलामत गजनी

---

१. ऐसे मुसलमान ऋषि, जिनके सिपुर्द कोई बड़ा इलाका होता है।

से सिर्फ़ आपकी जियारत के लिए यहाँ तक आये है। बड़ी कृपा होगी यदि आप खीमे पर चलकर उन्हे दर्शन दे। यह भी कह दिया कि आने पर राजी न हो, तो यह आयत सुना देना—इताअत (आज्ञा-पालन) करो अल्लाह की और उनकी, जो कौमी हाकिम है।

दूत के आने पर अबुल हसन ने क्षमा चाही। जब उसने वह आयत सुनाई तो हसन बोले, "महमूद से कह देना कि मै अल्लाह की इताअत (सेवा) मे इतना मसरूफ़ हूँ कि रसूल की इताअत के लिए भी कोई वक्त नही। फिर दुनियावी (सासारिक) हाकिमों का तो जिक्र ही क्या?" उनका यह उत्तर सुनकर महमूद प्रसन्न हुआ और कहा, "मै उनको जितना ऊँचा सूफी समझता था उससे भी वह ऊँचे है।"

महमूद ने अबुल हसन के इम्तिहान की ठानी। अयाज़ नाम का उसका एक मुह-लगा गुलाम था। किसी दिन तरंग मे आकर उसने यह वचन दिया था कि एक रोज वह अपना शाही लिबास उसे पहनाएगा। उसका वेष धारण करके वह गुलाम की तरह उसके पास खड़ा होगा। आज उसने वही खेल खेला। अपने कपडे अयाज को पहनाकर उसे अपनी जगह बैठाया और दस दासियों को मर्दाना लिबास पहनाकर खुद गुलाम बनकर उन दासियों मे शामिल होकर सन्त के दर्शनों को चला।

खानक़ाह में पहुँचकर महमूद ने सन्त को प्रणाम किया। अबुल हसन ने प्रणाम का उत्तर तो दिया पर उसके सम्मान मे वह उठे नही, और महमूद की ओर, जो गुलामों के लिबास मे था, अपनी नजर फेरी; पर अयाज की तरफ. कि जो शाही लिबास मे था, उन्होंने अपना रुख भी न किया। महमूद बोला, "आपने बादशाह की ताज़ीम (सम्मान) क्यों नही की?" हसन बोले, "यह तो सब रचा-रचाया जाल है।" महमूद ने कहा, "हा, पर ऐसा नही जिसमे आप फँसे।"

हसन ने आगे बात करने से पहले महमूद से कहा कि इन अनावश्यक लोगों को बाहर कर दो। महमूद का इशारा पाकर जब सब चले गए तो उसने कहा, "हज़रत बायजीद बस्तामी की कोई बात सुनाइए।" हसन

बोले, "बायजीद ने कहा है कि जिसने मुझे देखा बदबख्ती (दुर्भाग्य) से मुक्त हो गया।" महमूद बोला, "क्या इनका मर्तबा रसूल से भी ज्यादा है, क्योंकि बहुतों ने उन्हें देखा, मगर बदबख्त (अभागे) के बदबख्त ही बने रहे!"

बोले, "अय महमूद! जरा अदब (शिष्टाचार) का लिहाज रख और अपनी सल्तनत को खतरे में न डाल। सच्ची बात तो यह है कि सिवा चार खलीफाओं और असहाब (व्यक्तियों) के किसी ने उन्हें नही देखा। और इसका सबूत यह आयत है—'अय मुहम्मद, तू उनको देखता है जो तेरी तरफ नजर करते है। हालाकि वह तुझे नही देख सकते।" सुल्तान महमूद इस आयत को सुनकर बहुत खुश हुआ और फिर सन्त हसन से नसीहत चाही।

अबुल हसन बोले, "जो चीजे हराम है उनसे दूर रहो। जमाअत (समह) के साथ नमाज अदा करो। सखावत (उदारता) इख्तियार करो। और खुदा की बनायी हुई खल्क से प्यार रखो।" महमूद बोला, "मेरे लिए दुआ कीजिए।" बोले, "मै हर वक्त अल्लाह से दुआ करता हूँ—अल्लाहहुम, अगफरउल मोमनीन व अलमोमनात, अर्थात्, ऐ खुदा, तू मुसलमान औरत-मर्दों को बख्श दे।" महमूद बोला, "कोई खास दुआ मेरे लिए कीजिए।" हसन ने कहा, "ऐ महमूद, तेरी आकबत (परलोक) महमूद (श्रेष्ठ) हो।

अब सन्त और शाह में कुछ चोटे हुई। महमूद ने अशर्फियों का एक तोड़ा सन्त हसन को भेट किया। सन्त ने एक सूखी जौ की टिकिया सुल्तान के सामने रखी और कहा, "इसे खाओ।" महमूद ने एक टुकड़ा तोड़कर मुह मे रखा और देर तक चबाया किया; मगर वह हलक (गले) से नीचे न उतरा। बोले, "शायद यह निबाला (ग्रास) तेरे गले मे अटकता है।" बोला, "हाँ"। हसन ने कहा, "क्या तू चाहता है इसी तरह अशर्फियों का तोड़ा मेरे हलक़ मे अटके?"

तोड़ा उठा ले जाने का आदेश जब हसन ने दिया तो महमद ने प्रार्थना

की कि इसमे से कुछ तो कृपा करके स्वीकार कर लें। हसन बोले, "बिला ज़रूरत कोई चीज लेना ठीक नही।" महमूद बोला, "अच्छा तो बतौर तोहफ़ा कोई चीज देकर मश्कूर कीजिए। हसन ने अपने पहनने का एक वस्त्र दे दिया। वस्त्र लेकर जब महमूद चलने लगा तो सन्त को खुश करने की आन्तरिक इच्छा से बोला, "हजरत, आपकी खानकाह बहुत उम्दा है।"

सन्त ने यह सुनकर शाह के दिल पर एक निहायत नफीस चोट की। बोले, "ऐ महमूद, अल्लाह ने तुझे इतनी बडी सल्तनत दी है फिर भी तेरे दिल से लालच नही गया। इस झोपडे का भी तालिब (इच्छुक) है!" महमूद बहुत ही लज्जित हुआ। यह मीठा तीर ठीक निशाने पर लगा। जब वह चलने लगा तो सन्त हसन उसकी ताजीम (सम्मान) मे खडे हुए। इतनी चोट खाया हुआ महमूद का दिल इस सम्मान से और भी चकित हुआ। बोला, "जब मैं आया तब आपने ताजीम न की अब क्यो ताजीम फरमा रहे है?"

सीधी-सच्ची बात हसन ने कह दी, "जब तुम यहाँ आये तब तुम्हारे दिल मे शाही रौब भरा हुआ था और तुम मेरा इम्तिहान लेने आये थे और अब यहाँ से अदब का खयाल लेकर जा रहे हो और फकीरी का नूर तुम्हारे चेहरे पर चमक रहा है। यही वजह है कि आते वक्त मैंने तुम्हारी ताजीम नही की और अब तुम्हारी ताजीम कर रहा हूँ।"

मन्सूर ने ठीक ही कहा था कि अपनी हकीकत हम खुद ही खूब जानते है। नीचे की घटना से पता चलता है कि बडे बडे चमत्कारी पुरुष भी खिलौने ही होते है किसी के हाथ मे। कोई खेल करनेवाला चुपचाप अपना खेल करता है और इसका श्रेय किसी के मत्थे मढकर गायब हो जाता है।

हसन ने एक रात लोगो से कहा कि उस बियाबान (जगल) मे डाकू एक काफ़ले को लूट रहे है। और बहुतों को जख्मी किया है और यह बात दरियाफ़्त करने पर सच निकली। मगर हैरत यह कि उसी रात मे डाकू उनके प्यारे बेटे का सर काटकर दरवाज़े पर रखकर चले गए और इसका उन्हे कुछ पता न चला। सुबह उठकर बीवी ने जब देखा तो

चीख कर रो उठी और बोली, "वह भी क्या आदमी जो दूर की बात जाने और घर का पता नही।"

एक बड़ी ही अच्छी और याद रखने योग्य घटना का उल्लेख उनके जीवन में आता है। हसन दो भाई थे और उन्होंने अपना काम इस तरह बाँट रखा था कि बारी-बारी से एक भाई रात को इबादत (उपासना) करता और दूसरा बीमार माँ की खिदमत। हसन के भाई की बारी माँ की खिदमत करने की थी मगर उसने हसन से कहा, "आज आप खिदमत करे और मै इबादत करूँगा।" हसन राजी हो गए। हसन माँ की खिदमत मे लग गए और भाई इबादत-खाने मे चला गया।

इबादत शुरू करते ही हसन के भाई को एक आवाज सुनाई दी। जगत को बहुत ही ऊँची, अच्छी और आवश्यक शिक्षा देने के विचार से किसी ने कहा, "हमने तेरे भाई को बख्श (मोक्ष) दिया और उसके तुफ़ैल मे (द्वारा) तुझे भी बँख्शा।" भाई को बडा आश्चर्य हुआ। वह तो खिदमत (सेवा) मे इबादत को अच्छा समझता था तभी तो काम की बदली की थी। बोला, "या अल्लाह, मै तेरी इबादत में हूँ; चाहिए तो यह था कि वह मेरे तुफ़ैल में बख्शा जाता।" आवाज आई, "तू हमारी इबादत करता है और हमे इसकी जरूरत नही। वह माँ की खिदमत मे है जिसकी वह मोहताज (जरूरतमंद) है।"

हसन की रियाजत (तपस्या-उपासना) का जिक्र इस तरह आया है। चालीस साल तक उन्होने तकिये पर सर न रखा, अर्थात् सोये नही और अशा के वुजू से फजर की नमाज अदा करते रहे। इतनी मुद्दत के बाद एक दिन उन्होंने तकिया माँगा तो शिष्यों को आश्चर्य हुआ। बोले, "आज मुझे अल्लाह की बेनियाजी (निस्पृहता) और रहमत का दीदार हुआ है। तीस साल से सिवा अल्लाह के कोई खतरा मेरे दिल मे नही गुजरा।"

एक बार सात रोज तक हसन अपने शिष्यों के साथ बिना कुछ खाये भूखे बैठे रहे। सात दिन के बाद एक आदमी आया और उसने दरवाज़े पर आवाज़ दी कि सूफ़ियों के लिए मै खाने का सामान लाया हूँ। हसन

बोले, "मैं तो सूफी होने की लियाकत अपने मे देखता नही, तुममें से जो सूफ़ी हो जाकर सामान ले ले।" किसी मे इतनी हिम्मत न हुई कि सूफ़ी होने का दावा करे। कोई सामान न लाया। सब भूखे बैठे रहे।

कहाँ तो उनकी यह विनम्रता और कहाँ उनका जलाली (तेजस्वी) रूप, जो एक पहुँचे हुए किन्तु अहमन्य सूफी की आकस्मिक भेट पर प्रकट हुआ। कहते है, हवा के रास्ते एक सूफी हसन के सामने आया और जमीन पर पैर पटक कर कहने लगा, "मै जुनैद-ए-वक्त हूँ, मै शिब्लि-ए-वक्त हूँ।" उसकी बात सुनकर हसन भी जमीन पर पैर मारकर बोले, "मै खुदा-ए-वक्त हूँ, मै मुस्तफा[1]-ए-वक्त हूँ।"

ग्रन्थकार अत्तार मानते है कि खुदा ही हसन की जुबान से बोला। एक रात को हसन नमाज पढ़ रहे थे कि एक गैबी आवाज़ सुनी, "ऐ अबुल हसन, क्या तू चाहता है कि जो कुछ हम तेरी निस्बत जानते है दुनिया पर जाहिर कर दे ताकि वह तुझे सगसार[2] करे?" हसन ने जवाब दिया, "ऐ अल्लाह, क्या तू चाहता है कि जो कुछ मै तेरी रहमत (दयालुता) के बारे मे जानता हूँ और तेरे करम से देखता हूँ, खल्क पर आशकारा (प्रकट) कर दू ताकि वह तेरी परस्तिश (पूजा) तर्क (त्याग) कर दे।" तब आवाज आई, "ऐ हसन, न हम कहे न तू कह।"

अबुल हसन प्रार्थना मे कहा करते थे कि, "ऐ अल्लाह, मुझे अपनी इबादत और जुहद (पवित्र--पहेंजगार) और इल्म और तसव्वुफ़ (आध्यात्मिकता) पर भरोसा नही है इसलिए न मै अपने को आबिद (तपस्वी) समझता हूँ, न जाहिद (संयमी) तसव्वुर करता हूँ, न आलिम खयाल करता हूँ, न सूफ़ी जानता हूँ। ऐ अल्लाह, तू यक़ता (अद्वितीय) है और मै तुझ जैसे यक़ता की मखलूक मे से एक नाचीज़ शय (महत्वहीन-वस्तु) हूँ।" कहते, "जो अल्लाह के सामने पहाड़ की तरह बेहिस (चेतना-

---

१. हजरत मुहम्मद साहब का खिताब।

२. पत्थरों से मार डालना।

शून्य) खडा नही हो सकता वह मर्द नही, बल्कि मर्द वह है जो अपने को नेस्त (मिटाकर) करके उसकी हस्ती (सत्ता) को याद करता है।"

कहते, जो साहिबे-करामत (चमत्कारी) होना चाहते है, वे एक दिन खाना खाकर तीन दिन भूखे रहे। फिर खाना खाकर चौदह दिन तक न खाएँ, फिर खाना खाकर तीस दिन तक फ़ाकाकशी (निराहार) की तकलीफ़ बर्दाश्त करें। फिर खाना खाकर चालीस दिन तक बिन खाए रहें। फिर खाना खाकर चार महीने का फ़ाका करे। फिर खाना खाकर पूरा एक साल फ़ाक़े पर गुज़ार दे। जब एक साल के फ़ाके बर्दाश्त करने लगेंगे, उस वक्त एक चीज जाहिर होगी, और उसके मुह में साँप जैसी चीज होगी, जो मुह मे दी जायगी और फिर कभी खाने की इच्छा न होगी।

बोले, जिन दिनों मै इस फ़ाक़ाकशी की रियाज़त (अभ्यास) करता था और भूख की गरमी से मेरा पेट सूख गया था, उस वक्त वह साप जाहिर हुआ। मैंने कहा, "ऐ अल्लाह, मै वास्ते और जरीआ से हरगिज किसी चीज का तालिब (इच्छुक) नही; पर जो कुछ देना चाहे वह बिला वास्ता, बिना किसी ज़रीआ के सीधे अपनी ओर से दे।" तब एक तरह की मिठास मेरे `दे में खुद ही पैदा हो गई जो मुश्क (कस्तूरी) से भी ज्यादा खुशबूदार और शहद से भी ज्यादा शीरी (मीठी) थी। पर वह राज (रहस्य) मेरे हलक़ (कंठ) से ज़ाहिर न हुआ।"

फिर नदाए ग़ैबी (आकाश वाणी) आई कि अबुल हसन हम तेरे लिए ख़ाली मेदे से खाना लायेगे और प्यासे जिगर से पानी देगे। और अगर उनका हुक्म न हुआ होता तो मै ऐसी जगह से खाना खाता और पानी पीता कि किसी तरह दुनिया को उसका हाल मालूम न होता।

हसन की जीवनी सबसे अधिक लम्बी है और उनके उपदेश भी बहुत है। इसलिये उनमें से कुछ का साराश ही यहाँ दिया जा सकता है। अपने सम्बन्ध में उन्होंने जो कुछ अभिव्यक्त किया है उससे उनकी निर्भीक-ऊंची उड़ानों का आनन्दमय आभास मिलता है। उदाहरणार्थ, एक जगह

कहते हैं कि उलमाए नेशापुर के सामने एक बात कह दूं तो सब वाज कहना छोड दे, मिम्बर पर न चढे ।

उन्होने कहा है कि जब तक मै सिवा अल्लाह के दूसरों को भी देखता रहा हर्गिज मैने अपने अमल (कर्तृत्व) मे इख्लास (निश्छलता) नहीं पाया । लेकिन जब मैने खल्क को तर्क (त्याग) करके सिर्फ अल्लाह की ओर देखना शुरू किया तो मेरे अमल में इख्लास बगैर मेरी कोशिश के पैदा हो गया ।

उनका कहना था कि दिन-रात मे चौबीस घडिया होती है और वह मेरे नजदीक एक दम के बराबर है और यह दम जो चौबीस घडियो के बराबर होता है, वह रोज है । जब मै हक (सत्य) के साथ होता हूँ, मेरा संबध खल्क के साथ नही होता । अल्लाह ने मुझे ऐसी हिम्मत अता की है कि अगर मै एक कदम अपनी हिम्मत से रखू तो उस मुकाम (स्थान) पर पहुँचू जहाँ फरिश्तो की भी गुजर नही ।

बोले—हर सुबह को आलिम (ज्ञानी) इल्म (ज्ञान) की, जाहिद (त्यागी संत) जुहद (संयम) की ज्यादती (अधिकता) अल्लाह से तलब (माँग) करते है लेकिन मै हर सुबह ऐसी बात तलब करता हूँ जिससे किसी मुसलमान (ईमानदार) भाई को खुशी और मुसर्रत (सुख-चैन) हासिल हो । उन्होने यह आवाज सुनी, "ऐ अबुल हसन, मेरे हुक्म को मान कि मै वह जिन्दा हूँ कि जिसे कभी मौत नही और अगर तू मेरे हुक्म को मानेगा तो मैं तुझे वह हयात (जीवन) दूगा जिसको कभी मौत न हो ।" ·

बोले, "अल्लाह की तरफ जाने के रास्ते बहुत है, जितनी मखलूक अल्लाह ने पैदा की है बस समझो उतने ही रास्ते है । हर मखलूक अपनी कुव्वत और कुदरत की हद तक उसकी तरफ जाता है और मै हर रास्ते से गया लेकिन किसी रास्ते को मैने खाली न पाया बल्कि हर रास्ते में एक मखलूक को चलते देखा । मैने दुआ की कि मुझे वह रास्ता बता जिसमे सिवा तेरे और मेरे दूसरे की गुजर न हो । गम और अन्दोह (कष्ट—शोक) का रास्ता बताया कि जहा कोई जा नही पाता ।

गम और अन्दोह मे शुक्र करने वाला अल्लाह का कुर्ब (समीपता) बनिस्बत ((अपेक्षाकृत)औरो के बहुत जल्द हासिल कर सकता है। बोले, "मुझे तन्हाई (एकात) से आफियत (सुख चैन) और ख़ामोशी (मौन) से सलामती (सुरक्षा) हासिल हुई। अल्लाह के नज़दीक मर्द वह है जिसे ख़ल्क नामर्द ख़याल करता हो और जो शख़्स ख़ल्क के नजदीक मर्द है अल्लाह के नजदीक नामर्द है। जन्नत और दोजख़ न हो तो पता चले कि अल्लाह के प्यारे कितने है।"

अल्लाह के साथ हर अमर में रास्ती अख़्तियार (सच्चाई धारण करना) करना जवामर्दी है। बोले--जिसने हर आलम मे मुझे ज़िंदा देखा वह बायज़ीद थे। दूसरी जगह कहा—जहाँ बायजीद का अंदेशा यानी चिंतन पहुँचा है वहाँ मेरा कदम पहुँचा है। बोले—मेरे पास मल्कुल मौत (यमदूत) को न भेजना, मैं अपनी जान उसे न दूँगा। जान मैंने उससे नही तुझसे पाई है। तेरी दी हुई जान मैं और किसी को नही दे सकता।

बोले—मैंने तमाम पीरो की ख़िदमत की लेकिन किसी को अपना उस्ताद नही बनाया क्योंकि मेरा उस्ताद अल्लाहताला है। जो शख़्स दुनिया का तालिब होता है दुनियां उस पर हाकिम होती है। फ़कीर वह है जो दुनिया और आख़िरत (परलोक) से सरोकार न रखे। जो नफ़्स (प्राण) बन्दे से निकल कर अल्लाह तक जाता है वह नफ़्स आसायिश (समृद्धि) देता है। जिस क़ौम मे से ख़ुदा किसी को सरफ़राज (बलिदान) करता है उसके तुफ़ैल मे अल्लाह तमाम क़ौम को बख़्श देता है।

बोले—सूफी मिस्ल उनके होता है मगर सूफी को आफताब की जरूरत नही होती इसलिए कि अल्लाह ख़ुद चाँद-सितारों से ज़्यादा रोशन और ख़ुद उसने सूफ़ी को आफ़ताब की तरह रोशन बनाया है। और कहा—जिसे अल्लाह राह दिखाना चाहता है उस पर राह की दराज़ी (दूरी) कोताह (कम) कर देता है। अल्लाह के दोस्तों का खाना और पीना अल्लाह का

जिक्र है। अल्लाह औलियों (त्यागी संतों) के दिल को नूर की बीनाई (दृष्टि) देता है और होते-होते वह खुद ही उनकी बीनाई बन जाता है।

बोले—बन्दे से अल्लाह तक हजार मंजिले है। इन मंजिलों में अव्वल मंजिल करामत है। जो बन्दे कम हिम्मत होते है वह वही रह जाते है आगे बढ़ नही पाते। आगे के मुकामात (स्थानों) से महरूम (वंचित) रह जाते है। कहा कि आलमे गैब (अदृश्यलोक) से जर्रे के बराबर इश्क आया और तमाम प्रेमियो के सीने को सूघा, किसी शख्स को महरम (मर्मज्ञ) नही पाया और वापिस चला गया।

कहा—हर सैकडे में एक कामिल पैदा होता है। अल्लाह के ऐसे बन्दे भी है जिनके सीने के गोशे मे इतनी वसअत (विस्तार) है कि उसके सामने जमीन-आस्मान की वसअत भी बेकद्र है। जिसे सिवा अल्लाह के दूसरे की मुहब्बत है वह कितनी ही इबादत करे, कबूल नही होती। और कहा—चालीस साल से तुम मुझ में और मेरे दिल में जुदाई है। तीन चीजे मुश्किल है; हिफाज़त अल्लाह के भेद की, हिफाजत जुबान की बदी (बुराई) से और हिफाज़त पाकीजा (पवित्र) अमल (कर्म) की।

कहा—बन्दे और अल्लाह के दरम्यान नफ़्स से ज्यादा कोई हिजाब (पर्दा) नही। सभी अच्छे लोग उसके (नफ्स के) शाकी (शिकायत करने वाला) रहे है हालाकि खुद रसूल ने अल्लाह से उसकी शिकायत की है। कहा—शैतान दीन को इस कद्र खराब नही कर सकता जैसा आलिमो हरीस (ज्ञानी किंतु लोभी) ज़ाहिदे बेअमल (अकर्मण्य त्यागी) खराब करता है। कहा—सबसे बड़ा काम अल्लाह का जिक्र है। कहा—मोमिन की ज़ियारत (दर्शन) का सबाब (पुण्य) हज़ार हज से और हज़ार दीनार का दान देने से भी ज्यादा है।

बोले—जब तक अल्लाह तुझे ढूढ़ने की तौफ़ीक (सामर्थ्य—शक्ति) न दे तू उसे न ढूंढ़; क्योंकि जिसको वह तौफ़ीक़ नहीं देता वह तमाम जिन्दगी ढूंढ़ा करे, कभी नही पाता। जो बन्दे अपनी इज्ज़त अल्लाह की राह से मिटा देते है वह अल्लाह की इज्ज़त से और भी अज़ीज़ होते हैं। कोई

अल्लाह को दिल के नूर से, दोस्त यकीन के नूर से और जवाँमर्द मानी (अर्थ) के नूर से देखते है। कहा—जहाँ मैंने अपने को न देखा, वहाँ अल्लाह को देखा।

हर वक्त और हर मुकाम पर इस तरह अल्लाह को मौजूद जान कि तेरी खुदी बाकी न रहे और जबतक तेरी खुदी बाकी रहेगी, हर्गिज तुझे उसकी हस्ती मालूम न होगी। अमल वही अच्छा है जो तेरे पर्दे मे कोई और करे। आबिदों की इबादत तीन किस्म की है—ताअतेदीन, (धर्मोपासना), ताअतेजुबां (रागोपासना), ताअते फिक्र (मनोपासना)। मार्फते इलाही जाहिरी (दिखावे की) इबादत या लिबास से हासिल नही होती जो ऐसा दावा करता है, वह झूठा है।

एक बार अल्लाह को याद करना हजार तलवार मुह पर खाने से ज्यादा सख्त है। दीदार (दर्शन) उसका नाम है कि सिवा खुदा के किसी को न देखे। कम हँसो, ज्यादा रोया करो और कम सोया करो। जब तू अपनी हस्ती अल्लाह को देकर फानी होता है तो अल्लाह तुझे अपनी हस्ती से ऐसी हस्ती अता करता है जिसकी फ़ना (क्षय) नही। अपने अल्लाह का दोस्त बन ताकि क़यामत में तुझे खुशी हो मिस्ल उस मुसाफिर के, जो मंजिल पर पहुंच कर अपने दोस्त को देखता है।

जिस दम में बन्दा अल्लाह से शाद (आनंदित) हो, बरसों के रोजे-नमाज से कहीं ज्यादा अच्छा है। जो मोमिन किसी को हानि नही पहुँचाता वह गोया उतनी देर रसूल की संगत में रहा और जिस दिन वह कष्ट पहुँचाता है उस दिन की उसकी पूजा को अल्लाह स्वीकार नही करता। सच्चे मोमिन को खुदा पाक दिल और सच्ची जुबान देता है। सूफी वह नही जो टाट पहनता है और जौ खाता है क्योंकि तब तो ऊनवाले और जौ खाने वाले जानवर सूफ़ी होते। सूफी वह है, जिसके दिल मे सच्चाई और अमल में इख्लास है।

चालीस साल से बैंगन खाने और एक घूट ठंडा पानी पीने की उनकी इच्छा थी। मगर न यह खाया न वह पिया। एक बार अपनी मा के ज़ोर

देने पर बैंगन खा लिया और यह वही दिन था कि जिस रात को उनके लड़के का सिर काट कर कोई उनके दरवाज़े पर रख गया था। जब सुना तो बुलन्द आवाज से कहा—बेशक वह हाडी कि हमने चढ़ाई उसमें इससे कमतर चीज़ न चढनी चाहिये।[1] फिर मा से कहा—देखो, मैंने पहले ही कहा था कि मेरा मामला उसके साथ ऐसा आसान नही मगर तुमने ज़िद करके बैंगन खिला ही दिया।

लगता है, यह बैंगन की नाफरमानी ही उनके लिये हिजाब (पर्दा) बन गई। क्योकि हसन की बीबी ने जब कहा कि 'दूर की बात तो जाने और घर का जिसे पता न हो, ऐसे आदमी को मै वली नही मानती' तो उन्होंने समझाया कि जंगल की घटना के वक़्त अल्लाह ने मेरा हिजाब उठा लिया था और पुत्र की हत्या के वक़्त मै हिजाब मे था। इससे बीवी की शांति न हुई और उसने अपनी एक लट काटकर पुत्र के सर पर डाल दी। तब हसन ने अपनी दाढी के कुछ बाल सिर पर डाल कर कहा, "यह बीज हमने और तुमने मिलकर बोया था, अब हम बराबर हुए।"

उनकी बहुत-सी सूक्तियाँ उनकी आध्यात्मिक उच्चता का दिग्दर्शन कराने वाली है। उन्होने अपनी मौत के बाद भी अपने मित्र मुहम्मद बिन हुसैन को उनकी जानकनी (प्राण निकलने) के समय सहायता दी। उनके मित्र मरणासन्न अवस्था मे अचानक उठ खडे हुए और अदब से कहा—"सलामालेकुम!" लडके ने पूछा, "आप किसको देखते है?" मुहम्मद-बिन-हुसैन बोले, "मै अबुल हसन को देखता हूँ। उनके साथ बहुत से बुजुर्ग है और मुझसे कह रहे है मौत से न डरो। मौत के वक्त आने का जो वादा उन्होने अपनी जिन्दगी मे किया था, वह पूरा किया।"

एक व्यक्ति ने आकर कहा कि मै हदीस पढ़ने ईराक जा रहा हूँ। अबुल हसन ने कहा, "क्या यहाँ हदीस पढ़ाने वाला कोई नही, जो ईराक जाते हो?"

---

१. उनके कथन का आशय यह है कि खुदा की अवज्ञा करके जो हाँडी चढ़ाकर बैंगन खाया, उसके बदले लड़के का सिर कटने से कम जुर्माना क्या हो सकता था!

वह बोला, "यहां हदीस जाननेवाला कोई नही है और वहां कोई मशहूर हदीस जाननेवाले है।" हसन ने कहा, "एक तो मै ही हूँ, अगरचे मैं बेपढ़ा हूँ। मगर अल्लाह ने सब इल्म मुझ पर ज़ाहिर कर दि है और हदीस तो मैंने ख़ुद रसूल से पढी है।"

उसको हसन की बात का विश्वास न हुआ। रात को उसने स्वप्न में देखा कि रसूल कह रहे है कि जवॉमर्द सच्ची ही बात कहते है। सुबह को वह उनके पास आया और हदीस पढना शरू किया। पढ़ाते-पढ़ाते हसन कभी-कभी कह बैठते कि यह हदीस रसूल ने नही फर्माई है। वह पूछता, "आपको यह कैसे मालूम हूआ ?" कहते, "जब तुम पढ़ते हो तो मै रसूल को देखता हूँ। सही हदीस पर वह ख़ुश होते है और जो सही नही होती उस पर उनके चेहरे पर शिकन (सिलवट) पड जाती है।"

हसन और अबु सईद ने एक दिन अपने ख़िरके बदले। उनकी हालत बदल कर एक दूसरे की-सी हो गई। हसन तो नारे लगाते रहे और अबुल सईद रात भर रोते रहे। सुबह अबु सईद ने खिरका वापिस मांगा। बोले, "मै इतना ग़म बरदाश्त नही कर सकता।" हसन ने खिरका देते हुए कहा, "ऐ अबु सईद, तुम मैदाने क़यामत (प्रलयकाल) में न आना जबतक मैं आकर कयामत का शोर बन्द न कर दूं। क्योंकि तुम उसे बर्दाश्त न कर सकोगे।"

अबुल हसन के जीवन की एक और घटना का उल्लेख कर देना ठीक होगा। उनकी बीवी मालूम देता है बहुत तेज़ मिज़ाज थी। शेख़ अबुल अली सीना जब उनके दर्शनों को आये और पूछा कि शेख़ अबुल हसन कहाँ हैं तो बीवी ने बहुत झुझलाकर कहा, "तू ऐसे जिन्दीक और बुरे आदमी को शेख कहता है ? मै शेख को नही जानती। हॉ, मेरा शौहर लकड़िया लेने जंगल में गया है।" हज़रत सीना जंगल में गये तो देखा कि शेर पर लकड़ियों का बोझ रखे चले आ रहे हैं। बोले, "यह क्या माजरा है ? बीवी तो यह कहती है और आप ऐसे हैं !"

सारी दास्तान सुनकर अबल हसन ने कहा, "अगर मैं अपनी बीवी की

तुनक-मिजाजी का बोझ न खीचू तो यह खूख्वार शेर मेरा बोझ क्यों ढोने लगा !" फिर उनको मकान पर लाकर देर तक बाते की। इसके बाद बोले,"अब मुझे मौहलत दीजिए क्योकि दीवार बनानी है और मिट्टी भिगो चुका हूँ।" वह दीवार पर जाकर बैठे ही थे कि वसूली हाथ से छट कर गिर गई। सईद ने चाहा कि उठा कर दे मगर वह उठे इससे पहले ही बसूली खुद-ब-खुद उठकर हसन के हाथ मे जा पहुँची।

कहा, "बाज ऐसे है कि ७० साल मे हकीकत से वाकिफ होते हैं और बाज़ ऐसे है जो अपने फजल से दम भर मे तमाम इसरार से वाकिफ होकर दुनिया से बेखबर हो जाते है। कुछ लोग काबा का तवाफ (परिक्रमा) करते है मगर जवाँमर्द वह है कि जो अल्लाह की एगानगी मे तवाफ करे। बोले, "मुसलमान नमाज पढते है और रोजे रखते है मगर मर्द वह है जो साठ साल तक इस तरह रहे कि फरिश्ते कुछ न लिखे और इस दर्जे तक पहुँचने पर भी अल्लाह से शर्माए और उसके सामने आजिजी करे।'

बोले—ऐसे भी बन्दे है कि जो अन्धेरी रात मे लिहाफ ओढकर लेटते है तो आसमान के चाद और सितारो की रफ्तार उन्हे दिखाई देती है। दुनिया की नेकी और बदी, रोजी का उतरना और फरिश्तो का आना-जाना वगैरा सब उन्हे मालूम रहता है। कहा—थोडी ताजीम (शिष्टता) बहुत इल्म, बहुत इबादत, और बहुत जुहद से अफजल (श्रेष्ठ) है। राहे तलब मे कदम रखने वाला बिना अल्लाह की मदद के कामयाब नही हो सकता। (सगत उसकी करनी चाहिये जो दोस्त हो और ईश्वर से बडा कोई दोस्त नही।)

मोमिन के लिए हर मखलूक एक हिजाब और दाम (फंदा) है। मालूम नही मोमिन किस हिजाब और दाम मे रह जाय। हन्तहाई मर्तबा, जो अल्लाह बन्दो को देता है, तीन है (१) दीदार से मुशर्रफ (सम्मानित) होकर अल्लाह कहे, (२) बेखुदी में अल्लाह कहे, (३) बन्दा अल्लाह से अल्लाह को अल्लाह कहे। अल्लाह को जानकर नफ्स की आफ़त (कष्ट) और शैतान के

फ़रेब से बेख़बर न हो, और जब तक शैतान के फरेब हैं, अल्लाह चुप है, और जब शैतान हार जाता है, अल्लाह करामत (चमत्कार) और उन्स (स्नेह) मे डालता है मगर जवाँमर्द वह है जो किसी पर नही रीझे।

बोले—न मेरे दिल है, न ज़ुबान, न जिस्म, और इन तीनो के ऐवज़ अल्लाह ही अल्लाह है। आशिक खुदा को पाता है। और उसको पाने वाला सब कुछ भूलकर खुद भी गुम हो जाता है। कुछ लोग कुरान की तफ़सीर (भाष्य) में मशगूल होते है। मगर जवाँमर्द अपनी तफसीर में मशगूल रहते है। किसी ने पूछा, "मक्र क्या है?" बोले, "मक्र अल्लाह का लुत्फ़ है लेकिन अल्लाह अपने वलियों के साथ मक्र (छल) नही करता।" पूछा, "मौत का खौफ है?" बोले, "मर्द को मौत से खौफ नही होता।"

बोले—जहाँ तक हो सके मेहमानदारी मे खर्च करो। क्योंकि मेहमान को तमाम आलम की नेमतो का एक निवाला बनाकर भी खिला दो तो भी मेहमानदारी का हक अदा नही हो सकता। अल्लाह को स्वप्न मे देखा तो कहा, "मै साठ साल से तेरी मुहब्बत मे मशगूल हूँ।" जवाब मिला, "तुम साठ साल के ही हो। मगर हम अबद (अनादि काल) से तुझको दोस्त रखते है।" बोले—एक बार मैने इबादत की कि मुझे मेरी हालत दिखला दो। देखा तो टाट पहने है। पूछा—क्या यही? कहा—हा। पूछा—मेरी वह मुहब्बत और शौक कहा? जवाब आया—वह! वह तो हमारा है!

स्वप्न मे अल्लाह ने पूछा—ऐ अबुल-हसन, क्या तू चाहता है कि मैं तेरा हो जाऊँ। हसन ने कहा—नही। फिर पूछा—क्या तू चाहता है कि तू मेरा हो जाय? कहा—नही। अल्लाह ने कहा—जितने भी लोग हैं, सब यही चाहते है कि मै उनका हो जाऊँ। फिर तेरी यह तमन्ना क्यों नही? स्वप्न में ही हसन माकूल मगर निहायत दिलेराना जवाब दे गए। बोले—ऐ अल्लाह, जो अख़त्यार (अधिकार) तू मुझे देना चाहता है, वह तेरा फ़रेब है। क्योंकि तू दूसरे की मर्ज़ी के काम नही करता।

किसी ने पूछा—बन्दगी किसे कहते हैं? बोले—अपनी उम्र को

नामुरादी (निराशा) मे बसर करने का नाम बन्दगी है। पूछा—बेदारी कैसे हासिल हो? बोले—तमाम उम्र को एक सास से ज्यादा तसव्वुर (कल्पना) न करे। पूछा—फ़क्र (साधुता) का क्या निशान है? बोले, दिल का ऐसा रंग जाना कि उसपर कोई रंग अपना असर न जमा सके। और कहा—तवक्कुल (ईश्वर-इच्छा) इसका नाम है कि शेर, साप, दरिया और आग सब तेरे लिए एक से हो जायं क्योंकि आलमे-तौहीद (ईश्वर को एक मानना) मे सब एक ही है। और कहा, मै तमाम दिन अल्लाह से इशारे करता हूँ और उसके सिवा और कोई खयाल दिल में आने नही देता।

मौत के वक़्त कहा—अच्छा होता कि मेरा दिल चीर कर खल्क को दिखाते तो मालूम होता कि अल्लाह के साथ खुदपरस्ती अच्छी नही। किसी ने इन्हे स्वप्न मे देखा तो पूछा—आपके साथ क्या सलूक किया? जवाब दिया—अल्लाह ने मेरा ऐमालनामा हाथ में दिया तो मैने कहा, "तू मुझे इसमें मशगूल करना चाहता है हालाकि मुझसे जो काम हुए उससे पहले ही तू जानता था कि मुझसे क्या काम सरज़द (घटित) होंगे। यह फरिश्तों को दे कि वह पढा करे और मुझे छुट्टी दे कि सदा तुझ से ही बाते करूँ।"

: ९ :

शिबली

आस्मान के रास्ते एक सूफी आकर अबुल हसन के सामने ज़मीन पर पैर पटककर कहता है, "मैं जुनैद-ए-वक़्त हूँ, मैं शिबली-ए-वक़्त हूं"। ऐसा चमत्कारी सूफी जिसका नाम लेकर उसकी तरह होने का दावा करे उसे कम-से-कम असाधारण सन्त तो मानना ही होगा। शिबली असाधारण तो थे ही पर जीवनी-लेखक अत्तार ने उन्हे मन्सूर की-सी विचारधारा-वाला कहकर उनकी असाधारण श्रेष्ठता को कुछ और भी अधिक आकर्षक बना दिया है।

मन्सूर की शानदार जीवनी पढ़ते हुए एक खयाल आया कि करनेवाला कोई और नहीं वही एक है, और वही, जिसे संसार में ऊँचा उठाना चाहता है, जिसके द्वारा दूसरों को प्रेरणा देने की उसकी इच्छा होती है, जिसके नाम को यशस्वी बनाकर लोगों के हृदय-सिंहासन पर समारूढ़ करके युगों-युगों तक सम्मानित बनाए रखने के लिए उत्सुक होता है; उन्हें ही वह ऐसी परीक्षाओं में समुत्तीर्ण होने के लिए प्रेरित करता है।

शिबली की किस्मत मे वह न था जो मन्सूर की क़िस्मत में बदा था। वह जेल में तो भेजे गए मगर शहीदों की मौत से बच गए और खुद शिबली ने ही इस बात का इक़रार इस तरह किया है कि मुझे नादान (मूर्ख) समझकर लोगों ने छोड़ दिया मगर मन्सूर को दाना (बुद्धिमान) समझकर सूली दे दी। निश्चय ही, इनके विचार अत्यन्त ऊँचे हैं, सीधे ईश्वर तक पहुँचने की उनकी तड़प स्तुत्य है। मगर ज्ञानावेश में उनकी कुछ बातें ऐसी हैं, जो साधारण रूढ़िवादियों को कष्ट दिये बिना नहीं रह सकतीं।

एक बार का जिक्र है कि शिबली एक जलता हुआ अगारा हाथ में लिये बडी शान से घूम रहे थे। लोगो ने पूछा, "यह अंगारा हाथ मे क्यों ले रखा है ?" बोले, "मै इस अगारे से खान-ए-काबा को जलाने जाता हूँ।" स्वभावत ही लोग यह सुनकर स्तम्भित रह गए। काबा—खुदा का घर—मुसलमानो का सर्वश्रेष्ठ मन्दिर, जहाँ दुनिया भर के लोग बडी श्रद्धा से जियारत (तीर्थ) को आयं, उसे एक मुसलमान जलाने की बात कहे—किसी भी मुसलमान के लिए इससे अधिक रोषप्रद बात और क्या होगी ?

लेकिन अपने इस विचित्र विचार का जो कारण उन्होने बताया, उससे किसी भी ज्ञानी-भक्त का हृदय उल्लसित हुए बिना न रहेगा। लोगों के पूछने पर वह बोले, "मै काबा को इसलिए जला देना चाहता हूँ कि लोग वासिता और जरीआ को छोडकर सीधे खुदा की ओर चले। काबा के बजाय लोग साहबे-काबा (काबा के स्वामी यानी प्रभु) की ओर मुत्तवज्जह (आकृष्ट) हों।" इसी विचार को लेकर उन्होने एक दिन ऐसी ही एक बात और भी की—दो जलती हुई लकडिया लिये घूम रहे थे।

देखनेवालों ने पूछा, "ये जलती हुई लकडिया आप क्यो लिये हुए है ?" बोले, "मै इन लकड़ियो से जन्नत (स्वर्ग) और दोजख (नरक) दोनों को जला दूगा, ताकि लोग बिला किसी सबब के अल्लाह की इबादत करे।" बात निहायत माकूल थी और अभिव्यक्त भी बडी ही नाटकीय शैली में की गई। निष्काम, निर्भय और निर्लोभ भक्ति ही सच्ची भक्ति है मगर अक्सर लोग इबादत की जानिब रागिब (आकर्षित) होते है या तो दोजख के डर से या जन्नत के लोभ से और ये दोनों ही विचार ठीक नही।

शिबली, कहते है, अपने प्रारम्भिक जीवन में निहाबन्द के अमीर थे और उनके मन मे ससारी जीवन से विरक्ति खलीफ़ा के दरबार मे एक घटना को देखकर अनायास ही उत्पन्न हुई। खलीफ़ा ने सब दरबारी अमीरो को एक-एक खिलअत[1] अता (भेट) की। जब लोग जाने लगे तो दैवयोग

१. राज्य की ओर से सम्मानार्थ दिये जानेवाले वस्त्र आदि, जो तीन से कम नहीं होते।

से एक अमीर को छीक आयी और उसने खलीफा की दी हुई खिलअत की आस्तीन से नाक साफ कर ली। खलीफा ने यह देखकर उसे बुलाया, खिलअत छीन ली और उसे गद्दी से उतार दिया।

खलीफा की दी हुई खिलअत पहने शिबली ने यह सब माजरा देखा तो उनकी आत्मा जाग उठी। वह खलीफा के पास जाकर बोले, "तू मखलूक है और नही पसन्द करता कि कोई तेरी दी हुई खिलअत की बेअदबी (अपमान) करे। तब वह, जो दोनो जहान का मालिक है, कब यह पसन्द करेगा कि उसकी दी हुई दोस्ती और मारिफत (परिचय) की खिअलत को मखलूक की खिदमत मे मैला करूँ जबकि यह जाहिर है कि उसकी खिलअत के सामने तेरी खिलअत की कोई कीमत नही।"

यह कहकर उन्होने खलीफा की दी हुई वह खिअलत खलीफ़ा को वापिस कर दी और घर न जाकर वह सीधे खैर निसाज नामक सन्त की शरण मे पहुँचे और कुछ दिन उनकी सगत मे रहकर उनसे यथासम्भव लाभ उठाया और फिर निसाज ने ही उन्हे अपने जमाने के प्रसिद्ध सन्त जुनैद बगदादी के पास आध्यात्मिक शिक्षा प्राप्त करने और उन्ही के यहाँ रहते हुए तपश्चर्या करने भेज दिया।

शिबली जब जुनैद के पास पहुँचे तो कहा, "लोगो ने आपके पास गौहर होने का पता दिया है। यदि वह रूहानी गौहर आप मेरे हाथ बेचना चाहे तो बेच दे और बेचना पसन्द न करे तो यो ही बिना मूल्य के मुझे अता करने की नवाजिश करे।" जुनैद बोले, "यदि मै इस मोती को बेचू तो तुम उसे खरीद नही सकते क्योकि तुममे वह ताकत नही कि उसकी कीमत चुका सको। और जो मै तुम्हे यों ही मुफ्त में दे दू तो तुम उसका मूल्य न समझ सकोगे क्योकि जो चीज़ मुफ्त मिल जाती है हर्गिज उसकी नजर मे उसकी कोई बकअत (महत्त्व) नहीं होती है।"

जुनैद के कथन का आशय यह था कि जिसके लिए मेहनत करनी पड़े, और लम्बी अवधि तक साधना करने और सुदीर्घ परिश्रम के पश्चात् जो चीज़ प्राप्त होती है, मनुष्य को उसी के मल्य का यथार्थ ज्ञान होता है।

इसलिए यदि चाहते हो कि वह मुक्ताफल तुम्हे मिले तो तौहीद (अद्वैतवाद) के समुन्दर में डूबकर फ़नाफिल्लाह हो जाओ। ईश्वर सब्र और इन्तज़ार के दरवाजे तुम पर खोल देगा। जब धैर्य और प्रतीक्षा के द्वार को तुम पार कर लोगे तब वह गौहर हाथ आयगा और तुम अपने अभीष्ट उद्देश्य तक पहुँचोगे।

शिबली ने पूछा, "अब मैं क्या करूँ ?" जुनैद ने इसके उत्तर मे जो एक लम्बी, कष्टमयी, अहन्ता को क्षीण करनेवाली साधनाओं की सूची उन्हे बताई उसे पढ़कर उपनिषद् के एक ऋषि का स्मरण हो आता है। उन्होंने अपने शिष्य को भिक्षा लाने का आदेश दिया पर जब वह भिक्षा मांगकर लाता तो सब ले लेते और उसे खाने को कुछ न देते। गौएँ चराने का आदेश दिया पर दूध पीने के लिए मना कर दिया। यहाँ तक कि बछड़े दूध पीते समय जो फेन छोडते उसे भूख से व्याकुल हो जब पीने लगा तो उसे भी निषिद्ध कह दिया।

जुनैद ने शिबली को पहले तो एक साल तक गन्धक बेचने का आदेश दिया। फिर कहा, अब तुम एक साल तक दरयूज़ागिरी (भिक्षा-वृत्ति) करो, और इस तरह पर कि किसी चीज के साथ मशगूल (आसक्ति) न हो। शिबली ने ऐसा ही किया, यहा तक कि बगदाद के हर मोहल्ले में जाकर उन्होने दरयूज़ागिरी की, मगर किसी ने उन्हें कुछ न दिया। शिबली ने जुनैद को जब यह हाल सुनाया तो उन्होंने हंसकर कहा कि अब तुम्हे पता चल गया न कि दुनिया की नजर मे तुम्हारी कितनी क़ीमत है ! बेहतर है, तुम खुद उससे अपना दिल न लगाओ।

इसके पश्चात् जुनैद ने शिबली से कहा, "देखो, तुम एक मुद्दत तक निहाबन्द के हाकिम रहे हो। बहुतों को तुमसे इज़ा (कष्ट—यंत्रणा) पहुँची होगी। इसलिए बेहतर है तुम वापिस निहाबन्द जाओ और एक-एक आदमी से मिलकर उससे अपने कसूर माफ़ कराओ।" शिबली ने वहाँ जाकर हर घर के मर्द-औरत और लड़के से माफ़ी मांगी। मगर एक व्यक्ति उस समय वहाँ था नहीं, उसके बदले में उन्होंने एक लाख

दिरम दान में दिये। फिर भी उनके दिल को चैन न पडा और वापिस आकर जुनैद की सेवा में उपस्थित हुए।

एक व्यक्ति से क्षमा-याचना न कर सकने के बदले में शिबली ने जो एक लाख दिरम ख़ैरात किये थे, शायद उसी बात को लक्ष्य में रखकर जुनैद ने कहा, "अभी तुम्हारे दिल में शानो-शौक़त की चाट बाकी है। इसलिए तुम एक साल तक भीख मांगो।" शिबली ने आदेशानुसार एक साल तक गदागरी (भीख) की। और गदागरी मे उन्हे जो कुछ मिलता वह सब जुनैद को लाकर दे देते। जुनैद उसे दरवेशों मे बॉट देते, उन्हे कुछ न देते—भूखा रखते। साल की समाप्ति पर जुनैद ने कहा, "अब तुम्हे मैं अपने पास रखूगा।"

एक साल तक शिबली जनैद के पास रहे और वहाँ जो दरवेश (संत-फ़कीर) जुनैद से मिलने आते उनकी प्रेमपूर्वक परिचर्या और सेवा-सुश्रूषा का सारा दायित्व, वर्षों से तरह-तरह की कसौटियो पर कसे जानेवाले उनके इसी होनहार शिष्य पर था। अब जुनैद ने पूछा, "कहो शिबली, तुम्हारे नफ्स (अहम्—अस्तित्व) का मर्तबा (दर्जा) अब तुम्हारी नज़रों में कितना है?" शिबली बोले "मैं अपने को तमाम खलक से कम मानता हूँ और कम देखता हूँ।" सन्तोष के स्वर में जुनैद बोले, "शिबली अब तुम्हारा खुदा दोस्त हो गया।"

फ़कीरी जीवन और दीवानेपन का कुछ दामन-चोली का साथ है। एक समय था जब शिबली का यह हाल था कि कोई उनके सामने अल्लाह का नाम लेता तो उसका मुह मीठा कर देते और हमेशा शकर का एक ज़खीरा (जमाव) साथ में रखते। बच्चों को बांटते ताकि वे उनके सामने उल्लास और उत्साह के साथ ईश्वर का नाम उच्चारण करे। अल्लाह का नाम उनके दिल को इतना प्यारा लगता कि कुछ दिनों में उनकी यह हालत हो गई कि जब कोई उनके सामने अल्लाह का नाम लेता तो वह उसे अशर्फी भेंट करते। मगर दौर पल्टा और लोगों ने देखा कि वह नंगी

तलवार लिये घूमते और कहते, "जो अल्लाह का नाम लेगा उसका सिर काट लूगा"।

लोगो ने पूछा, "ऐ हजरत, यह क्या माजरा है? एक वक्त था कि तुम लोगो को शकर बाटते थे, फिर जो अल्लाह का नाम लेता तुम उसे अशर्फी देने लगे, अब तुम नगी तलवार लिये सिर काटने की बात कहते हो।" शिबली ने जवाब दिया, "तब मै समझता था कि लोग अल्लाह का नाम मुहब्बत से लेते है, हकीकत और मार्फत आशना है (सचाई और साधन अभिन्नता पर पनपते है); लेकिन अब मालूम हुआ कि काहिली और गफलत मे यह लोग उसका नाम लेते है सिर्फ इसलिए कि इसका उन्हे रबत हो गया है और मै इसे बेजा समझता हूँ कि कोई उसका पाक नाम काहिली और गफलत से ले"।

कहते है कि पहले उनका ऐसा अभ्यास था कि जहाँ कही अल्लाह का नाम लिखा देखते तो उसे चूमते, उसकी ताजीम (सम्मान) करते। एक बार गैबी आवाज सुनी, "तू कब तक इस्म यानी नाम के साथ मशगूल (व्यस्त) रहेगा? अगर तलब है तो नामवाले को तलब कर।" यह सुनकर उनके दिल मे शौक की आग-सी लग गई और इश्के-इलाही के दीवानेपन मे आकर दज्ले (बगदाद के नीचे बहने वाली नदी) मे कूद पडे पर कोई ऐसी लहर आई कि उसने उन्हे लाकर साहिल (तट) को सौप दिया।

दज्ले के पानी से वह आग बुझी नही और आग को आग से शात करने के लिए वह जलती आग मे कूद पडे; पर आग ने उनका बाल भी बाका न किया। कहते है कि उनका वह दिली जनून (पागलपन) उन्हे जा-बजा (जगह-जगह) लिये-लिये घूमा। कभी वह पहाड पर से कूदे कि यह जिन्दगी जिसकी है, उसे ही सौप दे और कभी खूख्वार दरिन्दों (हिंसक जंतुओं) के पास पहुँचे पर वह हमेशा सही-सलामत ही वापिस आये। भावावेश मे वह चीख कर कहते, "अफसोस है ऐसे शख्स पर, जिसको न पानी ने डुबोया, न आग ने जलाया, न परिन्दों ने फाडा और न पहाड़ ने गिराकर मारा।" अपनी इस दर्दभरी पुकार पर उन्हें जवाब मिला,

"मक़तूल-उल-हक़ ला मकतला गैरे।" गैबी आवाज ने शिबली को यथार्थ बात बताई कि जो अल्लाह का मक़तूल—मानी मारा हुआ है, उसे सिवा अल्लाह के दूसरा कोई मार नही सकता।

शिबली जब कैदखाने मे थे तो कुछ लोग उनके पास गये। पूछा, "तुम कौन लोग हो ?" लोगो ने जवाब दिया, "हम सब आपके दोस्त है।" इस पर शिबली ने पत्थर उठा-उठाकर उनकी तरफ फेकना शुरू किया और वह सब भाग खडे हुए। शिबली ने कहा, "तुम लोग कैसे मेरे दोस्त हो कि मेरी बला (आपत्ति) पर सब्र (सतोष) नही कर सकते" ? उनके इस कथन से बडी सुन्दर और मार्मिक ध्वनि निकलती है कि जो लोग ईश्वर के प्रेमी होने का दावा करते है वह बडे झूठे है यदि उसकी भेजी हुई मुसीबतों को भी वह प्यार नही कर सकते।

लोगो के दिल मे अपनी बात उतारने की उनकी शैली मौलिक और मार्मिक प्रतीत होती है। काबा के लिए अगारा और दोजख और जन्नत को जलाने के विचार मे दो जलती हुई लकडियाँ लेकर निकलना तो अजीब है ही; पर ईद के दिन, जब कि दुनिया भर के मुसलमान खुशी मनाते है, सियाह मातमी लिबास पहनकर सडक पर आकर खडा हो जाना भी कुछ कम अजीब नही !

पूछने पर कहा, "मैने खलकत के मातम मे सियाह लिबास पहना। क्योंकि उसका दिल भर गया है और वह अल्लाह से गाफिल है।" ईश्वर की प्राप्ति के लिए जो संकेत पीछे आया है उसका उल्लेख शिबली की एक सूक्ति मे भी मिलता है। वह कहते है, "सूफी उस वक्त होता है कि जब तमाम खलकत को मिस्ल अपने इयाल (सतान) के समझकर सबका बार-बरदार (भारवाहक—जिम्मेदार) हो।" जो अपनी चोट से चमककर उसके दरबार मे पहुँचता है वह दुनिया की चोटों से चुटैल होकर तो तीर की तरह सीधा, बिना इधर-उधर देखे, सर्व दुःख-भजन परम-पिता प्रभु की ओर जायगा।

जब मन में श्रद्धा उतनी तीव्र है नही जितनी कि होनी चाहिये तब

उसका आह्वान कैसे किया जाय ? इस मार्मिक प्रश्न का उत्तर गुरु-शिष्य के शक्तिपूर्ण और स्मरणीय सम्वाद् से निकलता है। जुनैद एक बार पूछ बैठे, "जब तुम्हे यादे-इलाही (प्रभु-स्मरण) में सिद्क़ (सत्यता) और अहलियत (योग्यता) हासिल नही तो क्योंकर उसकी याद करते हो।" शिबली बोले, "मै मजाज़ (कल्पना) से उसकी इस क़द्र याद कर रहा हूँ कि वह मुझको हक़ीकत (सचाई) से एक बार याद करता है।" शिबली का कहना था कि जब मै सच्चे जी से उसे याद नही कर सकता तो जैसा कुछ मेरा मन है उसी को लेकर उनकी याद करता हूँ और तब दया करके एक बार वह मुझे हकीकत की नज़र से देखते है।

कहा जाता है कि शिबली ने जब तपस्या प्रारम्भ की तो नीद न आये इसलिए वह अपनी आँखों मे नमक भर लिया करते थे और लिखनेवालों ने लिखा है कि थोडा-थोडा कर सात मन नमक उन्होंने अपनी आखों में भरा। किसी ने यह कहकर मना भी किया कि आप नाबीना (अंधे) हो जायंगे। बोले, "कोई हर्ज नही जिसकी तलाश है वे ज़ाहिरी (प्रत्यक्ष) आँखो से पोशीदा (ओझल) है।"

इसी तरह की उनकी एक और आदत थी। साधना के लिए गुफा में प्रवेश करते समय लकडियों का गट्ठा भी ले जाते और जब दिल ज़रा भी इधर-उधर होता तो एक लकड़ी निकालकर उससे अपने-आपको मारते। यहाँ तक की वह टूट जाती तो दूसरी निकालकर उससे मारना शुरू करते। ऐसा भी अक्सर होता कि गट्ठे की तमाम लकड़ियाँ टूट जातीं तो अपने हाथ-पैरों को दीवार पर दे-दे मारते। आँखो में नमक भरने के बदले में अल्लाह ने उन पर तजल्ली (तेज—प्रकाश) भेज कर कहा, "जो सोता है वह मुझसे गाफिल है और जो गाफ़िल है वह महजूब (शर्मिन्दा) है।"

एक बार चिमटी लिये वह उससे अपना गोश्त नोच रहे थे। जुनैद ने पूछा, "यह क्या करते हो ?" बोले, "इसलिए मैंने इस काम को इख्त्यार किया कि शायद इससे मुझे एकदम अमन (चैन) मिले।"

हर गुरु अपने मुरीद (शिष्य) की हालत पर नज़र रखने को जिम्मेदार

होता है और जुनैद इसे अच्छी तरह समझते थे। एक बार जुनैद के मुरीदों ने शिबली की तारीफ़ करना शुरू की कि सिद्क (सचाई) और शौक (लगन) और आली-हिम्मत (साहसी) में इनकी मिस्ल (बराबरी) नही। जुनैद ने उन्हें रोककर कहा, "तुम गलती पर हो, शिबली मर्दूद (बहिष्कृत) और अल्लाह से दूर है। तुम इसे मजलिस से निकालकर बाहर कर दो। क्योंकि यह इसी लायक है।" गुरु के आदेशानुसार मुरीदों ने वहाँ से हटाकर बाहर कर दिया।

तव जुनैद बोले, "तुम्हारी तारीफ़ उसके हक मे मिस्ल तलवार के थी कि जो तुमने उस पर खीची थी। अगर ज़रा भी उसका असर उस पर होता तो उसका नफ़्स सरकश (उद्दंड) बन पाता और वह हलाक़ (नाश) हो जाता। तुम्हारी तारीफ से तो सौ दर्जे अच्छी मेरी हिजो (तिरस्कार) थी। इसलिए कि मेरी हिजो ने ढाल बनकर उसे हलाक होने से बचाया।" किन्तु अपने इस शिष्य को वह कितना ऊँचा मानते थे यह भी देख लेना होगा। शिबली रोया करते थे। जुनैद बोले, "अल्लाह ने अमानत सौपी, खयानत की चाह हुई तो आहोजारी (रोना-धोना) में मुब्तिला किया क्योंकि शिबली दरम्यान खलक ऐन अल्लाह है" अर्थात् शिबली इस सृष्टिमें अल्लाह के सदृश हैं।

शिबली आत्म-निरीक्षण में बहुत सजग रहते थे। एक बार उन्होंने अपने नये कपड़े उतारकर आग में जला दिये। लोगों ने कहा, "शरीयत (धर्मशास्त्र) में माल का बिला वजह ज़ाया करना जायज़ (उचित) नहीं।" शिबली ने उत्तर दिया कि अल्लाह ने कुरान-शरीफ़ में कहा है कि जिस पर तेरा दिल माइल (आसक्त) है मैं उस चीज़ को तेरे साथ आग में जला दूगा। और इस वक्त मेरा दिल उन कपड़ों पर माइल हुआ था और अब मुझे इब्रत (संताप) हुई इसलिये मैंने दुनिया में ही इन्हे जला दिया।

अब यहाँ शिबली की कुछ सूक्तियाँ दे देना ठीक होगा। शिबली का कहना है—अल्लाह से उन्स रखनेवाले का मर्तबा (दर्जा) अल्लाह के ज़िक्र (वर्णन) से उन्स रखनेवाले से ज्यादा है। और कहा—उन्स यह

है कि बन्दे को अपने से बहशत (त्रास) हो। साद्रिक (सच्चा) वह है जो हराम (त्याज्य) को मुह मे न रखे। हराम को मुह मे न रखे इन शब्दो मे चोज है। निश्चय ही जो सच्चा है वह हराम चीज़ न तो खायगा ही और न झूठी बात ही जुबान से बोलेगा।

कहा—अल्लाह के साथ कलाम (वाणी) मे गुस्ताख (अशिष्ट) होना इन्विसात (विनाशकारी) है। लोगो से उन्स करना इफ्लास (दरिद्रता) की अलामत (निशानी) है। मगर उसी सास मे ये भी कहते है कि खल्क की मसलहत (भलाई) को अपनी मसलहत से ज़्यादा जानना जवामर्दी है। कलाम दरअसल दिल का कलाम है। कहा—जो सास बन्दा अल्लाह के लिए लेता है वह रूए जमीन के तमाम आबिदो (भक्तों) की इबादत (भक्ति) से सबाब मे ज़्यादा है।

कहा—जिसको अल्लाह की पाकीजगी (पवित्रता) ने इख्तियार किया हो वह मर्तबे मे उस शख्स से ज़्यादा है, जिसको उसकी रहमत (दया) और मगफरत अर्थात् क्षमाशीलता ने स्वीकार किया हो। जो शख्स अल्लाह से दूर होता है, अल्लाह भी उससे दूर होता है। अल्लाह करे तुम लोग ऐसे हो जाओ कि हमेशा उसकी इबादत मे सरगर्म रहो और उससे, जो गैर है, दस्तबरदार (त्याग दो) हो जाओ। जो शख्स अल्लाह की मुहब्बत का मुद्दई हो और सिवा उसके किसी और चीज़ का भी तालिब हो वह हर्गिज अल्लाह की मुहब्बत नही करता बल्कि सच पूछो तो वह उसके साथ मखौल करता है।

एक बाँकपन से भरी हुई बात शिबली ने यह कही कि जब अल्लाह बला पर अज़ाब (पीड़ा का अंत) करना चाहता है तो बला (आपत्ति) को आरिफ़ (भक्त) के दिल में जगह देता है। इसके माने यह है कि आरिफ के दिल मे पहुँचकर बला रह ही नही सकती, वह अपनी हस्ती (अस्तित्व) को खो बैठती है। और कहा—आरिफ़ वह है कि कभी अपने जिस्म पर एक मच्छर बैठने की ताब (शक्ति) न रखे और कभी सातो आस्मानो व ज़मीनों को पलक पर उठाले। लोगों ने कहा—

कभी आप ऐसा कहते है कभी वैसा, यह क्या बात है ? बोले—कभी हम बेखुद और कभी बाखुद रहते है ।

कहा—खुदा के तलब करने (प्रभु-अभिलाषा) को हिम्मत कहते है और अल्लाह के सिवा और किसी को तलब करना हर्गिज हिम्मत नही । बोले—दरवेशो के चार सौ दर्जे है और उनमे सबसे अदना (निम्न) दर्जा यह है कि अगर सारी दुनिया का माल उसको मिल जाय और तमाम अहले दुनिया उस माल को खाए तो भी उसको दूसरे दिन के लिए रोजी रखने की चिन्ता न हो । सिवा खुदा के किसी चीज से सन्तुष्ट न होने को फुक्र (आत्मतुष्टि) कहते है । जमय्यत कुल्ली को हकीकत कहते है और वह फरदानियत की सिफ़त है, अर्थात् समष्टि सत्य है और वह व्यष्टि का एक गुण है ।

कहा—मजकूर के मुशाहिदे मे (दर्शनाभिलाषियो के समह) उसका ज़िक्र फरामोश (ज्ञान-चर्चा) करना बडा जिक्र है । अल्लाह की इबादत (उपासना) करना शरीयत (धर्म-शास्त्र) है और उसको तलब करना और दर हकीकत उसको देखना तरीकत (पुण्य कर्म) है । उनकी एक चोज़ भरी सूक्ति यह है—जुहद गफलत है । इसलिए कि दुनिया नाचीज़ है और नाचीज मे जुहद करना गफलत है । भाव यह है—दुनिया नाचीज़ है इसलिए उसकी ओर से बेपरवाह होना भी जुहद अर्थात् सच्चा त्याग है । पर जो इस नाचीज दुनिया को छोड़ने के लिए प्रयत्न करने बैठते है वे अज्ञानी है । क्योकि नाचीज़ को चीज़ मान बैठने की भूल करते है और फिर उसे छोडने जाते है ।

मुहम्मद को जब लोग तंग करने लगे तब एक आयत उतरी, "ऐ, मुहम्मद, तू इन लोगों से कह दे कि मै मक्कारों का मक्कार हूँ ।" अल्लाह का यह स्वरूप और भी स्थलों पर ज़ोरदार शब्दों मे व्यक्त होता है । एक जगह आया है—नही बेखौफ होती अल्लाह के मक्र से मगर कौमे-ज़ियाकार, अर्थात् विनाशोन्मुख पापियों के अतिरिक्त ईश्वर की महामहिम माया से कोई भी अपने को निर्भय समझ बैठने की बेवकूफी नहीं करता ।

जुनैद से एक रोज़ पेटे बाज़ी हो पडी। शिबली को भावावेश से अत्यन्त व्यथित देखकर जुनैद ने कहा, "ऐ शिबली, यदि तुम अपना काम अल्लाह पर छोड दो तो तुम्हे राहत मिले।" शिबली ने उत्तर दिया,"राहत मुझे इस तरह नही मिल सकती। मुझे तो राहत उस वक्त मिलेगी कि अल्लाह मेरा काम मुझ पर ही छोड़ दे। यह करारा जवाब सुनकर जुनैद बोले, "शिबली की तलवार से लहू टपकता है।"

अन्तिम समय शिबली की हालत अजीब थी। उन्हे शैतान पर ईर्ष्या हो रही थी। अल्लाह ने उस पर लानत (फटकार) भेजी थी न! माना कि वह लानत ही थी पर दी हुई तो अल्लाह की थी। अल्लाह की यह खिलत शैतान ले जाय और शिबली महरूम ही रह जाय, कितने अफ़सोस की बात है। भला उस अल्लाजलालहु (ईश्वरी-तेज) की खिलत के लायक शैतान कब हो सकता है! लानत को खिलत के लिए लालायित शिबली ने कुछ देर मौन रह कर कहा—इस वक्त दो हवायें चल रही हैं, लुत्फ की और कहर की।

शिबली अपनी अन्तिम रात्रि को बार-बार, देर तक, दो शेरे पढते रहे। जिनका भाव यह है—जिस घर मे तेरी सकूनत (अनंतशाति) हो वह घर चिराग का मोहताज (जरूरत) नही। ऐसी अच्छी है तेरी सूरत कि हमारे लिए उसी की बाउम्मीद हुज्जत काफी है, कोई उस दिन के लिए कि जब अपनी-अपनी हुज्जत (विवाद) लेकर लोग आयेंगे। उनकी हालत गैर है यह सुनकर लोग नमाज़े जनाज़ा पढ़ने के लिए आने लगे। शिबली ने अपने ही ंग पर एक गहरा ताना मारा। वह बोले—ताज्जुब है कि ज़िंदे की नमाज़े जनाज़ा पढ़ने मुर्दों का गिरोह (दल) आया है।

शिबली की प्रेम-मतवाली रूढ़ि-विद्रोही आत्मा को मृत्यु-शैया पर संघर्ष करना पड़ा। उन्हे घेरे हुए भक्त लोग कह रहे थे, अब आप कलमा पढ़िये—लाइला इल्लिल्लाह! इस परम सुप्रसिद्ध मुसलिम मंत्र का अर्थ है "नहीं है कोई और सिवा अल्लाह के।" शिबली ने ठीक ही उत्तर दिया—जब ग़ैर है ही नहीं तो नफ़ी (घटाना) किसकी करूं? इस आरिफ़ाना

जवाब से लोगों को सन्तोष न हुआ। ओर जोर देकर बोले—शरीयत के मुताबिक आपको कलमा पढना ही चाहिए। "सुल्ताने मुहब्बत कहता है" शिबली बोले, "मै रिश्वत कबूल न करूंगा।"

एक तेज-तर्रार आदमी ने बुलन्द आवाज मे कहा, "लाइला इल्लिल्लाह" कहिये। शात स्वर मे शिबली ने व्यग किया—जिन्दे को मुर्दा नसीहत करने आया है। जीवित से उनका अभिप्राय है उससे, जो प्रभु-प्रेम मे सदा जागृत है और मुर्दा है वह जो खुदा को भूलकर दुनिया को दिल दे बैठा है। थोडी देर बाद लोगों ने पूछा—अब आपकी क्या हालत है? बोले मै अपने महबूब से.वासिल (प्यारे मे लीन) हो गया हूँ। यही उस वीर पुगव, रूढि-विध्वसी सन्त के अन्तिम शब्द थे, जिन्हे कहकर वह सदा के लिए शान्त हो गए।

स्वप्न मे एक सन्त ने शिबली को देखा तो पूछा—मुनकिर और नकीर (दो फरिश्ते) से कैसे छुटकारा पाया? उत्तर मिला—नकीर ने जब मुझसे पूछा—तेरा रब कौन है? तब मैंने कहा—मेरा खुदा वही है जिसने आदम को पैदा किया ओर जिसने तुम्हे और दूसरे तमाम फरिश्तों को उन्हे सिजदा करने का हुक्म दिया। तुम सब ने जब सिजदा किया तो मैं आदम की पुश्त में था और तुम सबको देखता था। नकीरैन ने यह सुनकर कहा—इसने तो तमाम औलादे आदम की तरफ से जवाब दे दिया और यह कह कर चले गए।

एक और सन्त ने स्वप्न में देखकर पूछा—अल्लाह ने आपके साथ क्या सलूक किया। बोले—बावजूद इस बात के कि मैंने दुनिया में बहुत से दावे किये थे, अल्लाह ने मुझसे कोई वाज पुर्स (स्पष्टीकरण) न की। मगर ऐसी एक बात उन्होंने जरूर पकडी। मैंने कभी कहा था कि इससे बड़ी विनष्टि और कोई नहीं कि मनुष्य स्वर्ग का अधिकारी न समझा जाकर नरक मे भेजा जाय। उन्होंने कहा कि सबसे बडी विनष्टि यह है कि भक्त मेरे दर्शन से वंचित होकर आवरणों में रहे।

*

१० :

हबीब अजमी

हसन बसरी एक बहुत ही बडे विद्वान संत हुए है। अपने जमाने के सभी महान सतो से उनका प्रेमल परिचय था। इसीलिए कई संतों की जीवनियो मे उनका जिक्र आता है। वह ऊँचे दर्जे के विद्वान् ही नही बल्कि सिद्ध पुरुप भी थे। हबीब अजमी इन्ही के शिष्य थे; मगर ऐसे शिष्य कि जिनको पाकर कोई भी गुरु सात्विक अभिमान कर सकता है। वह तेज-रफ्तारी मे अपने संसार-प्रसिद्ध गु को भी बहुत पीछे छोड गए। वह कोई खास पढे-लिखे तो न थे; मगर जो सीखते उसको अमल मे लाना जानते थे।

एक बार का जिक्र है कि हसन बसरी कही जा रहे थे। दज्ले के किनारे हबीब अजमी ने उन्हे खड देखा तो पूछा, "कैसे खडे है?" हसन बोले, "किश्ती पर सवार होकर पार जाना है। इसलिए किश्ती का इंतज़ार कर रहा हूँ।" हबीब ने कहा, "हसद (ईर्षा) और दुनिया की मुहब्बत को दिल से निकाल दीजिए, बलाओ को गनीमत समझिए और खुदा पर यकीन करके पानी पर पैर रखते हुए चले जाइए।" यह कह कर हबीब खुद पानी पर होकर चले गए। हसन बसरी, कहते है, यह माजरा देखकर बेहोश हो गए। जब होश आया तो लोगो ने बेहोश हो जाने का कारण पूछा। बोले, "हबीब ने इल्म मुझ से सीखा और इस वक्त मुझे नसीहत करके खुद पानी पर होकर चले गए।"

उनके दिल को धक्का इस खयाल से और भी लगा कि कयामत मे जब पुलसरात पर गुजरने का हुक्म होगा, (अर्थात्, हिन्दू मतानुसार

जब वैतरणी नदी पार करने का समय आएगा) तो उस समय भी यदि ऐसा ही बेबस रहा तो क्या होगा। हसन बसरी जब फिर हबीब से मिले तो उन्होने पूछा, "यह मर्तबा तुमने कहाँ से हासिल किया ?" अजमी ने सीधा-सा जवाब दिया, "मैं दिल साफ़ करता रहा और आप काग़ज स्याह करते रहे।" हसन बसरी कहने लगे, "अफसोस है कि मेरे इल्म से दूसरो को फायदा हुआ और मुझे फायदा न हुआ।"

एक बार इससे भी ज्यादा अजीब बात हसन बसरी के दरपेश हुई। किसी कारण हज्जाज (न्याय करनेवाला) के सिपाहियो से भाग कर हसन बसरी ने हबीब के इबादतखाने मे शरण ली। सिपाहियो ने आकर हबीब से पूछा तो उन्होंने बता दिया कि हसन बसरी मेरे इबादतखाने में है। वहाँ जाकर उन्होने देखा; मगर हैरत थी कि बहुत तलाश करने पर भी बसरी उन्हे दिखाई न पड़े। सिपाहियो ने आकर हबीब से फिर पूछा कि बताइए नही तो हज्जाज नाराज होकर आपको सजा देगा। हबीब बोले, "मैंने कह दिया, इबादतखाने मे है। अब तुम्हे न दिखाई दे तो मै क्या करूँ ?"

सिपाही एक बार फिर घर में घुसे। इबादतखाने का कोना-कोना छान मारा; मगर हसन बसरी न मिलने थे न मिले। आखिरकार मजबूर होकर सिपाही चले गए। तब हसन बाहर आ और हबीब से कहने लगे, "तुमने हके उस्तादी (गु का मान) का कुछ खयाल न किया और मेरा पता बता दिया।" हबीब ने कहा, "मैंने सच कह दिया इसलिए आप बच गए। जो मै झूठ बोलता तो आप गिरफ्तार हो जाते।" हसन ने कहा, "सिपाहियो ने सात बार मुझपर हाथ रखे; पर देख न सके। तुमने क्या पढ़ा था जो देख न पाए ?" हबीब ने आयतुल कुरसी और दो अन्य आयतों का नाम बताया।

हबीब के जीवन मे ऐसी कई करामाते देखने को मिलती हैं। एक स्त्री का इकलौता बेटा कही खो गया। वह रोती हुई हबीब के पास आई।

उन्होंने स्त्री के पास जो दिरम थे, लेकर ख़ैरात कर दिए और दुआ करके कहा, "जा तेरा लड़का आ गया है।"

कहते है कि स्त्री अभी घर पहुँच भी न पाई थी कि उसका लड़का रास्ते में ही मिल गया। माँ ने पूछा, "बेटा तुम कहा थे और कैसे आये?" लड़का बोला, "मैं किरमान मे था। बाज़ार से सौदा खरीदने बाहर निकला कि बड़ी तेज हवा चली और वही हवा मुझे यहाँ उडा लाई। मैंने आवाज भी सुनी कि कोई कह रहा है, 'ऐ हवा, तू इस लडके को घर पहुँचा दे।" अत्तार ने इस जगह पर लिखा है कि जैसे सुलेमान का तख्त पलभर मे कही भी जा पहुंचता था वैसे ही दुआ के बल पर लडका भी आ सकता है।

हबीब अजमी का मकान बसरे के चौराहे पर था। एक बार अपने कपडे उतार कर उन्होंने बाहर रख दिये और अन्दर गुस्ल करने चले गए। इतने मे उधर से हसन बसरी आ निकले। कपडे रखे देखे तो पहचान गए। समझा कि हबीब इन्हे उतार कर कही चले गए है। कोई उठा न ले जाय इस खयाल से वह वही खड़े रहे। जब हबीब नहा कर बाहर आये तो अपने गुरु को खड़े देखा। पूछा, "आप कैसे खड़े है?" हसन बोले, "मै जा रहा था कि तुम्हारे कपडे रखे देखे। सोचा, चौराहा है कही कोई ले न जाय इसलिए खडा हो गया। तुम किसके भरोसे इन्हें छोड गए?" हबीब बोले, "उसीके भरोसे जिसने आपको उनकी रखवाली के लिए भेज दिया।"

यही हसन एक बार हबीब से मिलने आये। हबीब के पास उस समय जौ की एक टिकिया और नमक की कुछ ककडियां ही थी। वह उन्होंने उनके सामने परोस दी। हसन ने खाना अभी शुरू नही किया था कि एक फकीर ने आकर सवाल किया। हबीब ने वह टिकिया हसन के सामने से उठाकर फकीर को दे दी। हसन गु तो थे ही। बोले, "ऐ हबीब, तुम शाइस्ता (शिष्ट) अवश्य हो; पर कुछ इल्म भी तुम्हे होता तो बहुत अच्छा होता।" हबीब चुप रहे। थोडी ही देर में किसी का एक नौकर सर पर बडा-सा थाल रखे आया। उसमे कई तरह के स्वादु पकवान थे

और पाँच सौ दिरम भी रखे थे। दिरम तो हबीब ने फकीरों मे बाँट दिए और खाना हसन के सामने रखा और खुद भी खाया।

जब दोनो भोजन कर चुके तो चेले ने गुरु की बात का जवाब दिया। हबीब ने कहा, "आप नेक मर्द है। मगर मर्तब-ए-यकीन (अटल विश्वास) भी होता तो बहुत अच्छा होता।" ईश्वर मे अविचल विश्वास ही सत का सबसे बड़ा गुण है।

हसन, कहते है, बचपन मे रसूल मुहम्मद के पास रहते थे। हसन की माँ उनके घर मे बादी का काम करती थी। अम-सलमा उन्हे बहुत प्यार करती थी ओर उन्हे अपना दूध भी पिलाती थी। मुहम्मद की गोद में खेलने की खुश किस्मती भी उनको हासिल हुई थी। एक बार कुछ बडे होने पर हसन ने मुहम्मद के आबखोरे (पानी का बरतन) से पानी पी लिया। रसूल को जब यह बात मालूम हुई तो उन्होने निहायत खुश उस्लूबी से (सद्भावना पूर्वक) कहा, "हसन ने जितना पानी मेरे आबखोरे से ही पिया है उतना ही अदब (ज्ञान) वह हासल कर लेगा।"

एक बार हसन बसरी अपने शिष्य हबीब अजमी से मिलने शाम के वक़्त आये। हबीब उस वक्त मग्रिब (सध्या) की नमाज पढने जा रहे थे। हसन ने भी साथ ही नमाज अदा करने का फैसला किया। इतने में हबीब के मुह से 'अल्हम्द' शब्द निकला। हसन ने सोचा कि इन्हे कुरान ठीक तरह नही आता। इसलिए उन्होंने साथ न पढ़कर अपनी नमाज़ अलग पढ़ी।

कहते है, उसी रात को सपने मे हसन बसरी दीदारे-इलाही से मुशर्रफ़ (दर्शन से सम्मानित) हुए। हसन ने पूछा, "या रब, तेरी खुशनूदी किस में है?" हुक्म हुआ, "तुमने हमारी खुशनूदी तो पाई; मगर उसका मर्तबा न जाना।" हसन ने पूछा, "या अल्लाह, वह क्या बात थी?" जवाब मिला, "हबीब अजमी की नमाज़ मे अगर तू साथ देता तो वह नमाज़ तेरी ज़िन्दगी भर की नमाजों से तेरे हक मे बेहतर रहती। तूने जाहिरा इबादत की दुरुस्ती का खयाल किया और दिली नीयत को छोड़

दिया। अल्फ़ाज़ की दुरुस्ती का मर्तबा दिली नीयत की दुरुस्ती से कम है!"

इन हबीब की जीवनी भी बड़ी अजीब है। फजोल डाकू थे तो यह सूदखोर। फ़ज़ील डाकू होते हुए भी नमाज पढ़ते और औरत पर हाथ न डालते थे मगर हबीब का तो मानो सूदखोरी ही ईमान था। थे मालदार। बसरे में रुपया सूद पर उठाते थे और खाना सूद के पैसे का ही खाते। जिस दिन सूद न मिलता, अपने कर्जदार से खाने-पीने की कोई चीज माग लाते और उसी पर गुजारा करते। सूद या सूद हासिल करने की मजदूरी के अलावा वह मूल मे से अपने ऊपर कुछ भी खर्च न करते।

सूदखोरो की ही तरह वह अपने कर्जदारो से सख्ती भी बरतते थे। एक रोज़ वह ऐसे मकान पर पहुँचे कि उसका मालिक तो था नही, उसकी औरत ने अपनी मजबूरी ज़ाहिर की। मगर हबीब का तो नियम था। बिना कुछ लिए वहाँ से कैसे टले। बेचारी औरत ने मजबूर होकर बची हुई खाने की चीजे उनको नजर (भेंट) की। वह उसे घर लाए, मगर बीवी ने बताया कि घर मे खाना बनाने के लिए न लकड़ी है न आटा। वह इन चीजो को भी इसी तरह लेकर आए। खाना तैयार हुआ तो एक मागने वाला आया। उसे यह कह कर हबीब ने लौटा दिया, "हमारे पास जो है उसे देने से तुम अमीर तो बन न जाओगे पर हम मुफलिस (दरिद्र) हो जायंगे।"

जब खाने बैठे तो बीवी चीख उठी। हाडी मे सालन (भाजी) की जगह लहू भरा हुआ था। बीवी भी इस कजूसी से तग आ गई थी। बोली "देखो, तुम्हारी बदबख्ती (दुष्कर्म) का यह नतीजा है।" शायद वक्त आ गया था। पत्थर के दिल पर यह करारी चोट पडी। "हबीब बोले, "तुम गवाह हो कि आज से मैं अपनी जिन्दगी को बदलने का इरादा करता हूँ।" दूसरे दिन सवेरे जब वह घर से निकले तो वह जुम्मा का रोज था। कुछ लडके राह मे खेल-कूद रहे थे। हबीब को देखकर बोले, "देखो, हबीब सूदखोर आता है। राह में से हट जाओ। कहीं ऐसा न हो कि इसकी धूल पड़ने से हम भी इसी की तरह बदबख्त हो जायं!"

बीबी मे जो बोला था वही लड़कों के द्वारा यह चोट कर बैठा। चोट लगनेवाली बात तो थी ही। वह सीधे हसन बसरी के पास पहुचे जो अपने ज़माने के माने हुए सत थे। उन्होंने जो नसीहत दी तो बेकरार हो गए। वही उन्होंने तौबा की। जब लौटे तो सामने से उनका एक कर्ज़-दार जा रहा था। हबीब को देखकर वह भागा। मगर हबीब बोले, "अब तुम्हे मुझसे नही बल्कि मुझे तुमसे भागना है।" उन्होने तय कर लिया था कि अब उन्हे न सूद लेना है न मूल ही।

हसन के यहाँ से जब वह घर लौट रहे थे तो राह मे वही लडके खेलते हुए उन्हे फिर मिले। हबीब ने सुना। लडके आपस मे कह रहे थे, "सब एक ओर हट जाओ, हबीब अब तौबा करके आ रहा है, ऐसा न हो कि हमारी खाक उस पर पड जाय और उसकी वजह से हमारा नाम गुनाहगारों मे अल्लाह-ताला लिख ले।" हबीब का दिल भर आया। बोले, "या अल्लाह! क्या ही तेरी कुदरत है। आज ही मैंने तौबा की और आज ही तूने मुझे लोगो मे नेकनाम कर दिया।"

हबीब ने आम ऐलान कर दिया कि जिस किसी पर भी मेरा कर्ज़ आता हो वह आकर अपना दस्तावेज़ ले जाय। मैंने सबको कर्ज़ छोडा। इसके अलावा, उनके घर मे जो माल था, वह सब उन्होंने खुदा का नाम लेकर लोगो को बाट दिया। जब उनके पास कुछ न रहा तो एक आदमी आया तो उसने उनके पहने हुए कपडे मागे। हबीब ने वह भी दे दिए। तब एक और आया और बोला, "अपनी बीवी की चादर दे दो।" वह भी दे दी गई।

अब उन्होने अरात नदी के किनारे एक झोपडी बनाई और वहीं रहकर वह इबादत करने लग। उनका नियम यह था कि दिन को वह हसन बसरी के पास जाकर अदब सीखते और रात को अपनी झोंपडी मे खुदा से लौ लगाते। एक दिन का ज़िक्र है कि बीवी ने कहा, "कुछ खाने-पीने का इन्तज़ाम कीजिए।" उनसे तो कहा अच्छा और जाकर भजन करने लगे। शाम को बीवी ने पूछा तो कहा, "दस दिन बाद मजदूरी मिलेगी। तबतक काम चलाओ।"

जब दसवा दिन आया तो सोचने लगे कि आज बीवी को क्या जवाब देगे। इसी फिक्र मे घर पहुँचे तो देखा घर से पकवान की महक आ रही है। मालूम हुआ कि कोई अन्जान शख्स आटा, घी, शहद के साथ ३०० दिरम दे गया है और साथ ही यह सदेश छोड़ गया कि हबीब जब आये तो कह देना कि अपनी मेहनत करते रहे, मै इससे भी ज्यादा मजदूरी उन्हे दूगा।

हबीब अजम के रहने वाले थे। वह अरबी न जानते थे मगर जब कोई कुरान पढता तो इतने बेकरार हो उठते कि रोने लगते। लोग पूछते, "आप अरबी तो जानते नही फिर कुरान की आयते कैसे समझते है ?" बोले, "मेरी जुबान ज़रूर अजमी है मगर दिल अरबी है।" किसी और सत ने उनसे पूछा, "आप अजमी है फिर यह मर्तबा आपको कैसे नसीब हुआ !".पेश्तर इसके कि वह कुछ कहे, एक गैबी आवाज आई, "अजमी है तो क्या हुआ ! हबीब (प्यारा) है।"

कहते है, एक बादी तीस साल से उनकी खिदमत मे थी; मगर कभी उन्होंने उसका मुह नही देखा। एक दिन उससे बोले, "ज़रा मेरी बादी को पुकार दे।" वह बोली, "मै ही तो आपकी बादी हूँ।" शर्माते हुए-से बोले, "इन तीस बरसो मे मैने सिवा खुदा के किसी तरफ नही देखा इसलिए मैंने तुझे नही पहचाना।" एक कातिल को सूली दी गई तो उसी रात लोगों ने ख्वाब मे उसे बडी शान से बहिश्त में घूमते देखा। कारण पूछा तो कहा, "हबीब की दुआ का यह नतीजा है। मुझे सूली पर देख उन्हे तरस आया और अल्लाह ने उनकी बात सुन ली।"

एक दिन इमामशाफी और इमाम अहमद हम्बल एक स्थान पर बैठे बाते कर रहे थे कि उधर से हबीब आ निकले। इमाम हम्बल ने कहा, "हम इनसे एक सवाल करेगे। देखे यह क्या जवाब देते है ?" शाफ़ी ने कहा, "इनका अपना रास्ता अलग है। इनसे कोई सवाल करना ठीक नही।" मगर वह न माने और पूछा, "जिसकी पांच नमाज़ों में से कोई नमाज छूट जाय तो वह क्या करे ? हबीब बोले, "पांचों नमाज़े अदा करे। वह क्यों खुदा से ग़ाफ़िल हुआ और बेअदब बना !"

: ११ :

जुनैद बग़दादी

सन्त सरीसक़्ती जुनैद के मामा थे और उनके गुरु भी। किसी ने सक़्ती से पूछा कि क्या मुरीद का रुत्बा पीर से ज़्यादा भी होता है? सक़्ती ने जवाब दिया, "हाँ। ध्यान रहे कि जुनैद अगचें मेरा शागिर्द है मगर रुत्बे मे मुझसे ज़्यादा है।"

छुटपन मे एक दिन जब वह मदरसे से आ रहे थे, रास्ते मे अपने पिता को रोते देखा। मालूम हुआ कि उन्होंने अपनी मेहनत की कमाई के कुछ दिरम सरीसक़्ती को नजराने के तौर पर भेजे थे मगर वह उन्होंने लिये नही; वापिस कर दिये। पिता ने कहा, "जब खुदा के दोस्तो को मेरी कमाई पसन्द नही तब तो मेरी यह जिन्दगी ही फिजूल गई।"

जुनैद वह दिरम लेकर मामा की कुटी पर पहुँचे। सक़्ती ने पूछा, "कौन है?" जवाब दिया, "मैं, जुनैद, पिता का नजराना लेकर आया हूँ। इसे मंजूर कीजिए।" सक़्ती ने मना किया तो बोले, "मै उस खुदा के नाम पर आपसे कहता हूँ जिसने आप पर मेह्र की और दरवेशी दी और पिता के साथ इंसाफ़ किया और उन्हे दुनियादार बनाया। अपना फर्ज़ उन्होंने पूरा किया अब आपका फ़र्ज़ जो हो, करे।"

बालक जुनैद की यह दो टूक बेबाकाना गुफ़्तगू (निडर बातचीत) सन्त सक़्ती को पसन्द आई। उटकर किवाड़ खोले और प्यार से बोले, "इन दिरमों से पहले मैंने तुझे कबूल किया।" मामा ने भांजे से वह दिरम क्या लिये मानो अपने को ही दे डाला।

कहते हैं, सात साल की उम्र में अपने मामा के साथ मक्का गये।

वहां सूफ़ियो मे शक्र के मसले पर बात हो रही थी। सबने अपनी-अपनी अक़्ल के मूजिब शुक्र की तारीफ़ की। मामा ने जुनैद से कहा, "अब तुम बताओ कि शुक्र क्या है ?" सभी के दिल की कली-सी खिलाते हुए वह बोले, "शुक्र उसका नाम है कि जब अल्लाह ने'मत (सुख-ऐश्वर्य) दे तो ने'मत की वजह से ने'मत देने वाले की नाफर्मानी (अवज्ञा) न हो।"

मक्के मे लौटकर उन्होने आइने की दूकान खोली जिसमे एक पर्दा डालकर वह रोज चार सौ वक्त नमाज पढते थे। फिर दूकान छोडकर सरी सक़ती के घर की एक कोठरी मे गोशानशीनी इख्त्यार की और तीस साल तक यह हाल रहा कि तमाम रात इसी शुग्ल मे गुजरते। शाम की नमाज के लिए वुजू करके जो नमाज पर खडे होते तो सुबह की नमाज भी उसी वुजू से अदा करते।

चालीस साल की तपस्या के बाद जुनैद के दिल मे खयाल उठा कि अब मुझे रुत्ब-ए-बुलद (बडा दर्जा) हासल हो गया है। तभी उन्हे यह आवाज सुनाई दी, कि वक्त आ गया है कि तुझे जन्नार पहनाया जाय। पूछा, "ऐ अल्लाह, मैंने ऐसा क्या किया है ?" आवाज आई, "इससे ज्यादा और क्या हो सकता है कि तू मौजूद है।"

बात सच्ची थी। सुनते ही जुनैद का सिर शर्म से झुक गया और कहा, "जो शख्स अहल न हुआ विसाल (प्रेम-मिलन का अधिकारी नही बना) का उसकी सब नेकियां गुनाह मे दाखिल है।" इसके बाद वह और भी ज्यादा इबादत करने लगे। यों आजाद खयाल के आदमी थे, कोई कुछ पूछने आता जो मुनासिब समझते कह देते। हासिदों (ईर्ष्यालु) ने जाकर खलीफा से शिकायत की।

मगर खलीफा ने पहले उनका इम्तिहान कर लेना मुनासिब समझा। अपनी प्यारी बादी को खूब सजाकर और समझा-बुझाकर अकेले में जुनैद के पास भेजा। और क्या होता है यह देखने के लिए गुपचुप एक आदमी भी साथ कर दिया। जुनैद कुछ देर तक खामोश रहे। फिर उन्होंने सिर उठाकर आह जो की तो बांदी वहीं ढेर हो गई।

ख़लीफा ने जब यह हाल सुना तो वह खुद जुनैद के पास आया और शिकायत की, "क्योंकर ऐसी खूबसूरत औरत को आपने दुनिया से ही उठा दिया ?" जुनैद ने जवाब दिया, "तुम अमीर उल्मोमनीन हो और इस हैसियत मे तुम्हे तमाम मोमनीन (आस्तिकों) पर शफक़्त (दया) करनी चाहिये। इसके बजाय तुमने मेरी चालीस साल की कमाई (तपस्या) को बर्बाद करने का खयाल कैसे किया ?"

एक बार कहा, "मैंने तमाम मर्तबे भूखों रहकर, दुनिया तर्क (त्याग) करके और शब-बेदारी (रातभर जागकर तप करना) से हासिल किये और दो सौ बुजुर्गों की खिदमत भी की। दस हजार सादिक मुरीदो (सच्चे शिष्यो) को अल्लाह ने मेरे साथ दरियाए-मारिफत (प्रभु-भक्ति) मे गर्क किया। और फिर मुझे अपनी कृपा से उभारा और आस्माने-इरादत (श्रद्धा) का आफताब (सूर्य) बनाया।"

अली जुनैद के दादा-गुरु थे। वह कहते, "जिसने मुझे अपनी मारिफत से शनासा (परिचित) किया वह खुदा बेमिस्ल (अनुपम) है। किसी जिन्स मे उसको पा नही सकते और किसी मखलूक पर उसका क़यास नही कर सकते, वह दूर होते भी नजदीक है और नजदीक होते हुए भी दूर है, वह सबसे बेहतर है। और नही कह सकते कि उसके नीचे कोई चीज है और वह नही है मिस्ल किसी चीज के, और नही है किसी चीज में, और नही है किसी चीज पर। पाक है वह खुदा और ऐसा है कि सिवा उसके किसी चीज मे ये औसाफ (गुण) नही है।"

जुनैद का कहना है, "अगर मुझे हजार साल की उम्र भी मिले तो जर्रा बराबर इबादत मे कमी न करूँ।" और कहा, "खल्क गुनाह करती है और मुझे तकलीफ होती है, इसलिए कि मै खल्क को मिस्ल आजा (निजी अंग) के खयाल करता हूँ।"

जुनैद कहते, "एक मुद्दत तक मै इनके हाल पर रोता रहा और अब मेरी वह हालत है कि मुझे अपनी, जमीन और आस्मान किसी की—खबर नहीं है। दस साल मैंने दिल की हिफाजत की और उसके बाद दस बरस

तक दिल ने मेरी हिफाजत की। अब मैं इस हाल मे हूँ कि न दिल मुझसे आगाह (खबरदार) है न मैं दिल से।"

बोले, "बीस साल से अल्लाह मेरी जुबान से बात करता है और मैं दरम्यान मे नही हूँ। खौफ से मैं बेखुद हो जाता हूँ और उनकी मेहर से मैं फिर होश मे आ जाता हूँ। "कुरान की एक सूक्ती है—"कलाम वह है जो दिल से हो।" यह जानने के बाद जुनैद ने अपनी तीस साल की नमाज़ फिर से दोहराई।

नमाज पढते वक्त अगर उन्हे दुनिया की किसी बात का खयाल आता तो नमाज फिर पढा करते और अगर जन्नत का खयाल दिल मे उठता तो उसे दूर करने के लिए एक और सिज्दा करते। वह फकीरो का नही बल्कि आलिमो का लिबास पहनते। किसी ने कहा, "आप खिरका पहने" (फकीरी लिबास), तो बोले, "दिल साफ रखना चाहिये। बनावट और जाहिरदारी बेकार है।"

सक़ती ने वाज (उपदेश) देने के लिए कहा तो जुनैद न माना। रात को सपने मे देखा कि हजरत मुहम्मद वाज का हुक्म दे रहे है। उठते ही गुरु के पास आये। सक़ती ने दूर से ही कहा, "क्यो अब भी इन्कार करने की हिम्मत है?" जुनैद ने पूछा, "आपको कैसे मालूम हुआ?" बोले, "मेरी दुआ पर अल्लाह ने कहा कि मैं रसूल को भेजूगा।"

जुनैद बोले, "मैं वाज तो करूँगा; मगर इस शर्त पर कि मेरी मजलिस मे चालीस से ज्यादा आदमी न हों।" उन्होंने वाज़ शुरू किया और कुछ दिन बाद बन्द कर दिया यह कहकर कि मैं अपने को हलाक करना नहीं चाहता। तब कोई हदीस (स्मृति ग्रथ) देखी। लिखा था—दुनिया का सबसे बुरा आदमी दुनिया को बचाएगा। "मैं ही वह सबसे बुरा आदमी हूँ" यह कहकर वह फिर वाज देने लगे।

चालीस आदमी थे उस मजमे मे, जिसमे से अठारह जान-बाहक़ तसलीम (मृत्यु को प्राप्त) हुए और बाईस बेहोश हो गए। किसी के दिल में कोई बात लग गई और वह वहीं ढेर हो गया।

किसी ने पूछा, "यह मर्तबा आपको कैसे हासिल हुआ ?" खल्क को बचाने का दावा भी वहाँ था और जान भी लेते ही थे। जुनैद बोले, "चालीस साल तक मैं एक पैर से अपने पीर के दरवाजे पर खड़ा रहा हूँ।" किसी ने कहा, "जरा दिल से मेरी तरफ मुखातिब हो।" बोले, "मुद्दत से चाहता हूँ कि अल्लाह की तरफ दिल के साथ जाऊँ, मगर नही हो सका फिर तेरा कहा कैसे करूँ ?"

भक्त और भगवान में चोहले भी खूब होती है। दिल चुरा लेना तो उनका पुराना शेवा है। जुनैद ने लिखा है, एक दिन मेरा दिल गुम हो गया। मैंने दुआ की, "या अल्लाह, मेरा दिल मुझे मिल जाय।" हुक्म आ, "हमने तेरा दिल इसलिए लिया है कि तू हमारे साथ रहे और तू दिल वापिस मागता है ताकि दूसरो की जानिब रागिब (आकर्षित) हो।"

बीमार पड़ने पर जुनैद ने कहा, "(अल्लाह हुम अशफनी), ऐ अल्लाह मुझे शफा दे," तो फटकार आई कि तुझे मुसीबत मे सब्र करना चाहिए। जो सब्र नही करता वह दरगाह के लायक नही।

रुहानी जिन्दगी का एक दूसरा तेवर (दृष्टिकोण—पहलू) भी है। एक दफा आँखो मे तकलीफ थी तो एक हकीम ने कहा कि पानी आँखों मे न लगाइए। जुनैद बोले, "वुजू तो मैं जरूर करूँगा।" तबीब (हकीम) के जाने पर वुजू किया, नमाज पढी और सो रहे। सुबह उठे तो दर्द न था। आवाज आई, "तूने हमारी इबादत मे आँख का खयाल भी नही किया, इसलिए हमने तेरा दर्द खो दिया।"

वह हकीम मुसलमान न था; कौम का तरसा था। जब वह दूसरे रोज आया तो पूछा, "किस इलाज ने रात भर में आपकी आँखे अच्छी कर दी।" जुनैद ने कहा, "वुजू करने से।" हकीम पर इस बात का इतना असर हुआ कि वह मुसलमान हो गया और यह कहा कि यह इलाज खालिक का था न कि मखलूफ़ का। दरअस्ल मैं बीमार था और आप तबीब!"

रास्ते में एक मुरीद के साथ जा रहे थे कि इन्हे देखकर एक कुत्ता भौका। जुनैद ने प्यार से आगे बढ़कर कहा, "लबेक्! लबेक्!" मुरीद

ने हैरान होकर सबब पूछा तो बोले, कुत्ते का गुस्सा और गलबा मैंने अल्लाह के कहर मे देखा और उसकी आवाज मे मैंने अल्लाह की आवाज सुनी। इसीलिए मैंने अल्लाह की तरफ खितअब (संबोधन) करके लबेक् कहा, "लबेक् के माने है, मैं तेरी खिदमत मे हाजिर हूँ।"

एक बार जुनैद रो रहे थे। लोगो ने कारण पूछा तो बोले, "मैंने अपनी तमाम उम्र बला की तलब (आफत की चाह) मे बसर की और मैं समझता हूँ कि बला अगर अजहदा बन कर आये तो सबसे पहले मैं उसके मुह में लुकमा बनकर दाखिल हो जाऊँ। मगर अफसोस है कि अबतक मुझे यही हुक्म होता है कि अभी तेरी इबादत बला के मुकाबले मे ठहर नही सकेगी।"

एक शख्स ने महफिले वाज (उपदेश-सभा) मे पूछा, "दिल कब खुश होता है ?" बोले, "जब अल्लाह दिल मे होता है।" किसी ने उनके वाज की तारीफ की तो कहा, "दरअस्ल तू अल्लाह की तारीफ कर रहा है।" संत इब्न सरीह से लोगो न पूछा कि क्या जुनैद का बयान उनके इल्म से होता है। सरीह ने कहा, "इसका तो मुझे इल्म नही मगर उनकी बाते ऐसी होती है कि गोया अल्लाह उनकी जुबान से बाते करता है।"

जुनैद कहते थे कि मैंने इख्लास (सच्चा प्रेम) एक हज्जाम से सीखा। मक्का मे जब मैं था तो एक नाई किसी अमीर के बाल मूड रहा था। मैंने उससे कहा, "खुदा के वास्ते मेरे बाल भी मूड दे। उसने फौरन अमीर का सिर मूडना छोडकर मेरा सिर मूडा और उसके बाद एक पुडिया मुझे दी, जिसमे कुछ रेजगारी थी और कहा—इसे आप अपने खर्च मे लाइए।"

उसी वक्त मैंने उसके इस बर्ताव से माइल (प्रभावित) होकर यह तय किया कि अब पहले जो कुछ मिलेगा इस हज्जाम को दूगा। कुछ समय बाद अशर्फियो की एक थैली बसरे के एक आदमी ने मुझे दी और मैं उसे लेकर हज्जाम को देने गया। वह बोला, "मैंने अल्लाह के लिए तेरी खिदमत की थी। यह थैली देते तुझे शरम नही आती ? क्या तू नही जानता अल्लाह के वास्ते काम करनेवाले किसी से कुछ नही लेते ?"

एक सन्त ने जुनैद को लिखा कि ख्वाबे ग़फ़लत (गहरी नीद) से बचना

लाज़िम है। सोने वाला मक़सद (उद्देश्य) से दूर रहता है। वह शख़्स हमारी मुहब्बत का झूठा दावा करता है जो रात को सोता है। जुनैद ने जवाब दिया, "हमारी बेदारी राहे-हक मे हमारा मामला है और हमारा सोना अल्लाह का काम है और मै मानता हूँ कि अपने किये काम से वह काम बेहतर है जो अल्लाह की तरफ से होता है।"

एक शख़्स ने कहा, "मै भूखा और नगा हूँ।" जुनैद ने कहा, "तू अल्लाह की शिकायत करता है? जा, अल्लाह तुझे भूखा-नगा न रखेगा। यह वह ने'मत है, जो अल्लाह अपने खास बन्दो को देता है और वह शिकायत नही करते।" बगदाद मे एक चोर को सूली दी जा रही थी। जुनैद ने उसका मान किया। किसी ने पूछा तो कहा, "इसने जो काम उठाया उसे पूरा किया, यहाँ तक कि जान दे दी।"

जुनैद का एक शागिर्द था। उसके सिफ़ात की वजह से उस पर उनकी खास मेहरबानी थी। दूसरे मुरीदों ने तरफ़दारी की शिकायत की तो उन्होंने एक-एक परिदा देकर सबको कहा, "जहाँ कोई न देखता हो वहाँ ज़िबह कर आओ!"

और शागिर्द तो मारकर ले आए मगर उस खास शागिर्द ने आकर कहा कि कोई ऐसी जगह नही, जहा अल्लाह देखता न हो। यह सुनकर मुरीदो ने रश्क से तौबा की।

एक शख़्स पाँच सौ मीनार नज़र करने को लाया। जुनैद ने पूछा, "इसके अलावा तेरे पास और भी माल है?" उसने कहा, "है।" फिर पूछा, "क्या और की तुझे हाजत है?" बोला, "हाँ, है।" तब सन्त जुनैद बोले, "तू यह वापिस ले जा, क्योंकि तू मुझसे ज्यादा मुहताज है। मेरे पास कुछ नही फिर भी मुझे हाजत (जरूरत) नही। तेरे पास होते हुए भी तुझे अधिक की खाहिश है।"

जुनैद का दिल खूब कोशिश करने पर भी इबादत में न लग रहा था। मजबूरन मकान के बाहर आये तो एक आदमी को कम्बली ओढे दरवाज़े पर बैठे देखा। वह बोला, "मै देर से आपके इन्तज़ार मे हूँ।" जुनैद बोले,

"मैं अब समझा आपके इन्तज़ार की वजह से ही मेरा दिल नही लग रहा था।" उसने पूछा, "नफ्स की क्या दवा है?" बोले, "उसकी मुख़ालिफ़त!" वह उठा और अपने से बोला, "देख, जो मैं कहता वही इस बुज़ुर्ग से तूने सुना।"

बोले—अगर मेरे और अल्लाह के दरम्यान आग का दरिया हो और उस पर रास्ता हो तो मैं अपने इश्तियाक (उत्कण्ठा) की वजह से कूद पड़ूंगा। कहते है, उनकी महफ़िल मे एक अमीर आया और एक दरवेश को साथ ले गया। थोडी देर मे उसके सिर पर पकवान का ख्वान (थाल) रखा कर लाया। जुनैद को तैश आया। बोले, "यह ख्वान इसी के मुह पर मार। दरवेश काबिले इज्जत है। वह साहिबे माल नही मगर मालिके-सबाबे-आखिरत (परलोक के पुण्यो का स्वामी) है।"

उन अठारह के अलावा और भी कई आदमी उनकी हैबत (त्रास) और उनके जलाल (तेज) से हलाक (मृत्यु) हुए। उनका एक मुरीद भागकर मस्जिद में जाकर बैठा। वह उसे देखने गये तो दहशत से गिर पड़ा और उसका सिर फट गया। मगर जो खून टपकता उससे अल्लाह बन जाता। बोले, "तू नुमायश करता है। ज़रा-जरा से लड़के ज़िक्र मे तेरे बराबर है। मर्द वह जो मजकूर (आदिष्ट स्थान) को पहुंचे।" यह सुनकर मुरीद तड़पा और मर गया।

सैयिद नासिरी हज को जाते हुए बगदाद पहुंचे तो जुनैद के दर्शनों को आए। सन्त ने नासिरी से कहा, "तुम सैयिद हो, तुम्हारे दादा हज़रत अली नफ़्स और कुफ़्फार (नास्तिकों) दोनों से जिहाद (धर्म-युद्ध) करते थे, तुम कौन-सी जिहाद करते हो?" यह सुनकर वह बेकरार होकर रोने लगे और कहा, "मेरा हज तो आप ही तक है। रहनुमाई कीजिये।" बोले, "तुम्हारा दिल अल्लाह का घर है इसमें और को न रखो।' जुनैद की यह नसीहत पूरी होते ही नासिरी का काम तमाम हुआ।

यहां उनकी कुछ सूक्तियां दी जाती है—सूफ़ी वह है जिसको सिवा खुदा के कोई न जानता हो। सब बुराइयों से ज्यादा सूफ़ी का बुख़्ल

(कंजूसी) है। अल्लाह में फ़ना हो जाना तौहीद (ईश्वर को एक मानना) है। सब हरकाते ख़ल्क़ (जनता के बुरे कार्यों) को ख़ालिक (ईश्वर) से समझना यक़ीन है। बका (अनश्वरता) अल्लाह के लिए बाकी सबको फना है।

मुहब्बत यह है कि मुहब्बत करने वाले में तमाम सिफ़तें महबूब की पाई जाय (अर्थात्, भक्त मे भगवान् के सारे गुण आ जायं तभी वह सच्चा भक्त है)। एक आयत है—बस जब दोस्त रखूंगा मैं उसको, हो जाऊंगा मैं उसके लिए कान और आख, यानी वह मुझसे सुनेगा और मुझसे ही देखेगा।

मुश्फ़िक़ (दयालु) वह, जो अपनी पसन्द की चीज दूसरे को दे और अहसान न रखे। नफ्स का तन्हाई इख़्तियार करना इबादत है। दरवेश, जो अपने मालिक की रजा मे ही सदा राजी है, तमाम आलम से बुज़ुर्ग है।

ऐसे शख़्स की संगत करो, जो तुम्हारे साथ नेकी करे और अहसान न जताए और तुम्हारे ऐब माफ़ करे। हिजाब (आवरण) ६ है—तीन आम लोगों के लिए—पहला नफ्स, दूसरा खल्क, तीसरा दुनिया की चाह; और ३ ख़ास के लिए—एक इबादत पर, दूसरे सबाब पर और तीसरे करामत पर तकव्वुर (घमंड) करना। तर्क दुनिया (संसार-त्याग) से उक्बा (परलोक) की राह मिलती है। नफ्स को छोड़ ताकि खुदा से वासिल हो।

हलाल से हराम की तरफ माइल होना आलिम की कमजोरी है, फ़ना से बका की तरफ माइल होना जाहिद की लग़्ज़िश (त्रुटि) है और क़रीम से करामत की तरफ़ माइल होना आरिफ की लग्ज़िश है। मासिवा अल्लाह के तर्क करना और खुद फ़ना हो जाना तसव्वुफ है। उनके एक मुरीद का अच्छा-सा क़ौल है—सूफ़ी वह है जो बेवस्फ़ (निर्गुण) हो जाय।

आरिफ़ वाक़िफ़े-असरे-इलाही (प्रभु विषयक रहस्य से परिचित) होता है। आरिफ से हिजाब उठा लिए जाते हैं। मारिफ़त दो किस्म की हैं, एक तो अल्लाह को पहचानना और दूसरी यह कि अल्लाह उसे पहचाने। मारिफ़त अल्लाह के साथ मशग़ूल होना है, आरिफ़ मारूफ (ज्ञानी) है। तौहीद (आस्तिकता) अल्लाह को मानने का नाम है और तौहीद की गायत (अन्त) तौहीद से इन्कार है।

मुहब्बत खुदा की अमानत है । जो मुहब्बत किसी चीज़ की बदौलत होती है वह फना (नष्ट) होती है, जब वह चीज़ फ़ना हो जाती है मुहब्बत शर्तें-अदब (शिष्टता की शक्ति) से दुरुस्त होती है। साहबे अलायक (ससारी) की मुहब्बत अल्लाह ने हराम की है । जब तक खुद नेस्त (नष्ट) न हो मुहब्बत हासिल नही होती । अहले उन्स (प्रेमियों की बाते) आम लोगों को कुफ्र (नास्तिक) मालूम होती है ।

वक्त से ज्यादा कोई चीज कीमती नही । हज़ार साल की इबादत वाले को भी एकदम अल्लाह से गाफिल रहना बुरा है क्योंकि एकदम की गैरहाज़िरी का जुर्माना हजार साल की इबादत न भर पायगी । अल्लाह के औलिया को नफ्स की देखभाल करने से ज़्यादा मुश्किल कोई काम नही ।

अल्लाह की जानिब रगबत (चाह) शुक्र है। इतिहा जुहद की मुफलिसी है । सब्र की इन्तिहा तवक्कुल (ईश्वरार्पण) है। सब्र खल्क से दूर और खालिक के करीब होने को कहते है। नाशुक्री और बेसब्री को तर्क करना सब्र है । तवक्कुल इसका नाम है कि तू ऐसा खुदा का हो जा जैसे अजल मे था । सकूने-दिल (मानसिक शान्ति) तवक्कुल है ।

भक्त के लिए दुनिया कडवी और मारिफत मीठी है । जमीन की सूफियों से यू जीनत (शोभा) है जैसे आस्मान को सितारों से । दिल की निगाह रखनेवाला दीन का निगाह रखने वाला है । जिसकी ज़िन्दगी रूह पर है, हयाते असली (वास्तिविक जीवन) हासिल करता है। खाने के तालिब (इच्छुक) से इबादत नहीं हो सकती ।

सन्त ज़ुनैद के उपदेश बहुत है। उनकी जीवनी काफ़ी लम्बी है। उनके उपदेशों को समझने के लिए उन पर मनन करने की जरूरत है। उनकी मौत के बाद बहुतों ने ख्वाब मे देखा कि वह बड़े अच्छे हाल मे है। जब उन का जनाजा जा रहा था, तो एक कबूतर जा बैठा और उडाये से भी न उड़ा । बोला, मेरे पंजे मुहब्बत की कील से जनाज़े के कोने पर जकड़े हुए हैं । यह जनाज़ा फ़रिश्ते उठाए हुए है, तुम छोड़ो तो आस्मान में उड जाय ।

: १३ :

इमाम शाफ़ी

मानना होगा इमाम शाफी विद्वान सन्त थे। इमाम अहमद हंबल, जो बशर हाफी के पीछे अक्सर इसलिए घूमते देखे जाते कि वह उन्हें खुदा-रसीदा (ईश्वर-भक्त) समझते थे। नौजवान मगर इल्म-दोस्त (ज्ञानी) शाफ़ी की भी बडी इज्जत करते और प्रायः उनकी संगत के लिए लालायित रहते। उनके मुरीदो को यह बुरा लगता कि उनका वयोवृद्ध प्रसिद्ध गुरु एक कम उम्र के सत के पीछे फिरे।

आखिर जब उनसे नही रहा गया तो उन्होने अपने गुरु से कहा कि आप जैसा साहबे इल्म (परम-ज्ञानी) एक कम उम्र शख्स की खिदमत करे यह अमर नाजेब (अनुचित कर्म) मालूम देता है। ये बात सुनकर उन्होंने कुछ वैसा ही उत्तर दिया जैसा कि बशर हाफी के सम्बन्ध मे दिया था। बोले, "मुझे जो इल्म मालूम है उसके असली मतलब से वे आगाह (परिचित) है और मुझे उनकी खिदमत मे आयतों और हदीसो की हक़ीकत मालूम होती है।"

इतना ही नही, उन्होंने आगे बढ़कर यहाँ तक कहा कि अगर यह दुनिया मे न आते तो हम इल्म के दरवाजे पर ही खडे रह जाते। इल्म फ़ुकहा (मुस्लिम धर्म-शास्त्र) के दरवाजे आलम पर इनकी ज़ात से खुले है और इस जमाने मे इनसे ज्यादा किसी का एहसान इस्लाम पर नही। रसूल ने कहा है कि हर सदी के आग़ाज (आरंभ) में एक ऐसा शख्स पैदा होगा कि खल्क उससे दीनी इल्म हासिल करेगी और इस सदी के आग़ाज में वह इमाम शाफ़ी हैं।

उनकी माता बडी जाहिदा थी। लोग अक्सर अपनी अमानत उनके पास लाकर रख जाया करते। उनमे एक शख्स आकर वह सन्दूक ले गया। कुछ दिनो बाद दूसरा आदमी आया और अपना सन्दूक माँगने लगा। माता ने जब कहा कि तुम्हारा साथी ले गया है तो उसने कानूनी बात उठाई। हम दो जने जब रख गए तो आपने अकेले उसे क्यो दिया?

माता इसका क्या जवाब देती। वह बेचारी शर्मिदा होकर चुप रही। मगर मालूम होता है वह आदमी इरादतन (जान-बूझ कर) वहाँ डटा रहा। इतने मे शाफी, जो उस समय कही बाहर गये हुए थे, इत्तिफाक से घर आ पहुंचे। उन्होने सब किस्सा सुना और सुनकर उस आदमी से, जो शायद इसाफ के नाम पर एक फितना (झझट) ही खडा करने आया था, कहा, "तू अकेला क्यों आया? जा अपने साथी को भी ले आ, तभी तेरी अमानत तुझे मिलेगी।"

इससे कही अधिक बडी हारू रशीद की एक समस्या अपनी किशोर अवस्था मे ही उन्होने हल की थी। हारू और उनकी बेगम जुबैदा किसी बात पर लड पडे। बेगम ने खलीफा हारू से कह दिया, "तू दोजखी है।" खलीफा ने भी ताव मे आकर कह दिया, "अगर मैं दोजखी हूँ तो जा मैंने तुझे तलाक दी।" जब गुस्सा ठडा हुआ तो उन्हे अपने कहने का बहुत अफ़सोस हुआ क्योकि उन्हे बेगम बहुत प्यारी थी।

खलीफा ने सोचा, तलाक मे एक शर्त थी, 'अगर दोजखी हूँ।' अगर किसी तरह यह फतवा मिल सके कि मैं जिन्नती हूँ तो उस जुबानी तलाक़ का इतलाक लाजिमी (क्रियान्वित होना आवश्यक नही) नही। खलीफा ने सब विद्वानो को बुलाकर उनके सामने अपनी समस्या रखी। कोई कैसे कहे कि कौन जिन्नती है और कौन नही? खासकर जब कि खुदा ने इस अमर का फैसला अपने ही हाथ मे रखा है। और मरने पर बडे सन्त से पूछा जाता है तेरा रब कौन है?

अल्पवयस्क शाफी भी विद्वानों की उस महती सभा मे थे। उन्होंने आगे बढ़कर कहा, "मै इस सवाल का जवाब दे सकता हूँ।" खलीफ़ा ने जब

उन्हे बुलाया तो कहा, "पहले यह बताओ कि मुझे तुम्हारी ज़रूरत है कि तुम्हे मेरी ?" खलीफ़ा ने कहा, "मुझे आपकी ज़रूरत है।" शाफ़ी ने कहा, "तब तुम तख्त से उतरो, उल्मा का रुत्बा बडा है।" खलीफा तख्त से उतरा और सम्मानपूर्वक शाफी को तख्त पर बैठाया।

तख्त पर बैठकर शाफी ने कहा, "अब बोलो तुम्हारी हाजत क्या है ?" खलीफा ने अपना प्रश्न दोहराया—"मै जिन्नती हूँ या दोजखी ?" शाफी ने कहा, "यह बताओ कि क्या कभी कोई ऐसा मामला भी हुआ है कि गुनाह करने के कुदरत (अवसर) होते हुए भी अल्लाह के खौफ़ से तुमने अपने को उस गुनाह से रोका हो ?" खलीफा ने कहा, "कसम है अल्लाह की, ऐसा मौका आया है।" शाफी बोले, "तब तो तू जिन्नती है।"

विद्वानो की सभा मे हलचल मच गई। सभी पूछने लगे, "आपके इस फतवे (निर्णय) की क्या दलील है ?" किस प्रमाण के आधार पर यह अश्रुत पूर्व निर्णय दे रहे है ? शान्त स्वर मे शाफ़ी ने कुरान की एक आयत सुनाई जिसका आशय यह है—जिस शख्स ने गुनाह का कस्द (विचार) किया और फिर खौफ़े-इलाही (प्रभु-भय) की वजह से गुनाह करने से बाज रहा तो उसका घर जिन्नत है। सभी ने खुश होकर शाफ़ी की तारीफ की।

एक बार मक्का मे रहते समय दस हजार दीनार उनको किसी ने दिये। लोगो ने सलाह दी कि या तो कृषि योग्य जमीन या भेड़े खरीद लो। किसी को कोई जवाब न देकर, शहर के बाहर जाकर उन दीनारों का ढेर लगा दिया और जो उधर से गुजरता एक मुट्ठी दीनार उसे दे देते। यहाँ तक कि वह सब दीनार यो ही बाँट दिये गए। काबा में जो चिराग जलता था उसकी रोशनी मे किताब पढ़ना जायज (उचित) न समझ कर चादनी मे ही पढ़ते रहे।

रूम के बादशाह हारूं रशीद को हर साल कुछ माल भेजा करते थे। एक साल कुछ रहबानियो (बाल-ब्रह्मचारी) को भेजकर यह कहलाया कि अगर तुम्हारे उल्मा इनको मुबाहिसे में हरा दे तब तो मैं वह माल

भेजूगा वरना नही। खलीफा ने उल्मा को दजले के किनारे जमा करके शाफ़ी से कहा कि आप इनके साथ मुबाहिसा कीजिए। शाफी दजले के पानी पर मुसल्ला बिछाकर बैठे और कहा, "बहस करना है तो यहाँ आकर करो।"

शाफी को कुरान कुठस्थ नही था। लोगो ने खलीफा से कहा कि शाफ़ी हाफिज नही है। खलीफा ने इम्तहान के तौर पर रमजान के महीने मे उन्हे इमाम बना दिया। वह रोज कुरान का एक पारा कठस्थ कर लेते और शाम को उसे नमाज के वक्त सुना देते। इस तरह एक महीने मे उन्होने सारा कुरान याद कर लिया और किसी पर यह जाहिर नही होने दिया कि कुरान इन्हे याद न था।

वे कहते कि जो आलिम तावील (स्पष्टीकरण) ज्यादा करे उसे आलिम न समझो और मामूली अदब की भी, जिसने तालीम हासिल की हो, उसे उस्ताद समझो। उनके प्रेमी मित्र अहमद हम्बल की जीवनी मे यह जिक्र आया है कि एक बार जब वे दरिया किनारे वुजू कर रहे थे तो एक शख्स उनसे बुलन्दी (ऊचाई) पर बैठे वुजू कर रहा था। जब उसकी नजर अहमद हम्बल पर पडी तो वह उनकी ताजीम मे वहाँ से हटकर नीचे वुजू करने लगा। इस अदब की खातिर अल्लाह ने उसे बख्श दिया।

उनका खयाल था कि दुनिया इतनी नाचीज है कि एक रोटी के एवज मे भी उसे खरीदना घाटे का सौदा है। बहुत-से सन्तों की तरह उनका यह कहना था कि अच्छे खाने की इच्छा न करो क्योकि खाना अच्छा और बुरा तभी तक लगता है जबतक वह हलक के नीचे नही उतर जाता और उसके बाद सभी तरह के खानों का, चाहे वे जाइकादार हों या सादे या बदजाइका, एक ही अजाम (नतीजा) होता है।

किसी ने उनसे नसीहत चाही तो कहा—दूसरे के बराबर माल जमा करने की ख्वाहिश न करो बल्कि दूसरे के बराबर इबादत करने के लिए बराबर तैयार रहो। क्योकि दुनिया का सारा माल यही, दुनिया में रह जाता है और इबादत मरने के बाद भी साथ जाती है। दूसरे यह भी कि

मुर्दे पर हसद (ईर्ष्या) नही करते। यह भलमन्साहत और शराफत के खिलाफ है और दुनिया मे जो भी आया है, मरने वाला है, इसलिए मुर्दा है। इसलिए किसी पर भी हसद न करो।

कहते है कि एक बार वे गुजरे हुए वक्त को ढूढने निकले। एक जगह पर सूफियो की सभा लगी हुई थी। यहाँ यह गुजरे वक्त की समस्या पेश हुई। गुजरा वक्त कहाँ जाता है, कैसे मिल सकता है, इस पर चर्चा होने लगी। एक सूफी ने कहा कि मौजूदा वक्त को अजीज जान क्योकि गया वक्त फिर हाथ नही आता। आज तो यह बात सीधी-सी लगती है गो (यद्यपि) इस पर अमल नही होता। मगर सूफी की बात सुनकर शाफी बोले, "मैंने अपनी मुराद को पाया।"

इसके बाद उन्होने जो भाषा बोली; वह बोली तो जाती है और अच्छी भी लगती है पर कभी-कभी नही भी अच्छी लगती। शाफी बोले, "तमाम आलम का इल्म मेरे तक और मेरा इल्म सूफिओ के इल्म तक नही पहुँचा और सूफिओ का इल्म उनके पीर के कौल तक नही पहुँचा। वह कौल यह है—'उल वक्त सैफे कातिल'—अर्थात् मौजूदा वक्त काटने वाली तलवार है।"

सभी जानते है कि जो वक्त गुजर गया वह तो हाथ से चला गया। उस पर अपना कोई बस नही; और जो अभी नही आया वह भी अपने हाथ से बाहर की चीज है। जो वक्त अपने सामने है वही अपने हाथ मे है और उसका सदुपयोग होने पर आनेवाले समय तक का भी लाभ उठाने की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जायगी। इस कहानी से जो अत्यन्त आवश्यक शिक्षा मिलती है वह यह है कि भूत और भविष्य की चिन्ता न करके वर्तमान के सदुपयोग की भावना जन-मन मे अवतरित हो तो अच्छा है।

(वर्तमान की उपयोगिता की ओर निर्देश करने वाली एक मजेदार कहानी है। युधिष्ठिर किसी कार्य मे व्यस्त थे। उसी समय कोई ऋषि-महात्मा उनसे कुछ मागने आये। युधिष्ठिर ने अपनी व्यस्तता व्यक्त करके कल फिर आने को कहा कि जब उनकी इच्छा की पूर्ति कर दी जायगी।

द्वार पर खडे भीम ने यह सुनकर लोगों से घंटा-घडियाल बजाने को कहा। युधिष्ठिर ने पूछा तो कहा, "आपकी काल-विजय के उपलक्ष मे यह मंगल-वाद्य बज रहे है।")

(व्यस्त युधिष्ठिर ने कुछ क्षुभित होकर कहा—मैंने काल पर विजय प्राप्त की है, यह बात तुमसे किसने कही ? विनम्र अभिवादनशील मुद्रा मे भीम बोले—महाराज, मैंने अभी आपके ही मुख से तो सुना। युधिष्ठिर ने पूछा—कैसे ? भीम बोले—सभी जानते है, महाराज युधिष्ठिर सत्यवादी है। कभी झूठ नही बोलते। आपने अभी ऋषि को वचन दिया कि कल आप उनका काम कर देगे। तब कम-से-कम कल तक तो निश्चय ही आपने काल को जीत लिया होगा। सुनकर युधिष्ठिर मुस्कराए और ऋषि को बुलाकर उनकी माग पूरी कर दी।)

हज़रत शाफी सैयिदो की, मुहम्मद के वशज होने के कारण, इतनी ताजीम (आदर) करते थे कि एक बार जब वे अपने उस्ताद से सबक पढ़ रहे थे तो कुछ छोटे-छोटे सैयिदो के लडके वहा खेल रहे थे। जब वे इनके नजदीक आते तो उनकी ताजीम के लिए उठ खडे होते। दस-बारह बार वे लडके उनके करीब आये और हरबार उठकर उन्होने उनका सम्मान किया। बचपन मे ही जब उनमे अदब (शिष्टता) का इतना खयाल था, तभी तो वह इल्म (ज्ञान) पर अदब को तर्जीह (श्रेष्ठता) देते थे।

: १४ :

सरी सक़्ती

सरी सक्ती की जीवनी पढते हुए ऐसा लगा जैसे कि ताज़ा हवा का झोंका जी को छू गया हो। उनके उपदेश सीधे और सच्चे है। उनकी जिन्दगी लम्बी मगर अमल से भरी हुई जिन्दगी है। जुनैद के ये गुरु और मामा थे और उन्हे ऊँचा उठाने मे तो उनका हाथ था ही पर खलीफा के एक मुसाहिब अहमद-बिन-यजीद को क्षणभर में तीस-मार-खां की जहनियत (भ्रमपूर्ण विचार) से निकालकर एक अच्छा-खासा ऊचे दर्जे का सन्त बना दिया।

अहमद-बिन-यजीद खूब बनठनकर बडी शान से उस सभा मे आया, जहाँ सरी सक़्ती उपदेश दे रहे थे और दैवयोग से उस उपदेश का आशय कुछ ऐसा सामयिक सिद्ध हुआ कि सीधा तीर की तरह दिल में घर कर गया। वे कह रहे थे कि मनुष्य जैसा दुर्बल और कोई प्राणी नही, पर इसका अभिमान कितना असीम है और इस अभिमान में आकर वह बडे-बड़े दुष्कृत्य कर डालता है और भूल जाता है कि उनके परिणाम स्वरूप वह दोजख की भयंकर आग मे जलाया जायगा।

खलीफा के मुसाहब अहमद-बिन-यजीद पर इस प्रवचन का कुछ ऐसा प्रभाव पडा कि घर आकर उसने खाना खाने से भी इन्कार कर दिया और सुबह होते ही फ़कीराना लिबास पहने परेशान हाल सरी सक़्ती की खिदमत मे हाजिर हुआ और बोला कि आपकी नसीहत का जो असर मुझपर हुआ उसे मैं बयान नही कर सकता, पर रास्ता बताइए, क्योंकि दुनिया से मेरा दिल एकदम सर्द (उपराम) हो गया है।

सरी सक्ती ने उसकी बातें सुनकर कहा, "यह बताओ कि कौन-सा रास्ता चाहिए—आम या खास ?" वे बोले, "दोनों बता दीजिए।" सक्ती ने कहा, "आम तो यह है कि पाँचों वक़्त नमाज जमात में खड़े होकर पढ़ो। माल हो तो जकात[1] दो और शरीयत के मुताबिक जिन्दगी बसर करो। और खास यह है कि दुनिया छोड़कर अल्लाह की इबादत करो और सिवा खुदा के किसी से कुछ न मागो और कोई कुछ दे भी, तो न लो।" उस वैराग्य की स्थिति में वह खास रास्ता ही उन्हें पसन्द आया और विदा लेकर वहीं से कहीं जगल की ओर निकल गए।

कुछ दिनों बाद उनकी बूढ़ी माँ ममता की मारी, परेशान हाल, रोती हुई सक़्ती के पास आई और कहा, "मेरा एक ही बेटा था, वह आपकी मोहबत में बैठकर दीवाना होकर न जाने किधर निकल गया।" वे बोले, "परेशान न हो' जब तुम्हारा लड़का आयगा तो मैं तुम्हें खबर कर दूगा।" कुछ दिनों बाद अहमद जब लौटे तो वे बहुत दुर्बल हो गए थे और कहने लगे, "मैं गफलत में पड़ा था, आपने मुझे उससे निकाला। खुदा आपको इसका एवज दे।"

अहमद यह कह ही रहे थे कि उनकी मा सरी सक़्ती का सदेशा पाकर बीवी और बच्चे के साथ आई और उनकी विचित्र हालत देखकर बहुत रोयी और दौडकर उनसे लिपट गई। बीवी और लडके ने भी यह हालत देखकर रोना शुरू किया तो जो लोग उस समय वहाँ उपस्थित थे वे भी अपने आँसू नहीं रोक सके। माँ और बीवी ने बहुत कोशिश की कि वे घर जाय मगर वे किसी तरह राजी न हुए और वहाँ से भागने का इरादा किया।

तब बीवी बोली, "यह लडका आपका है, इसका आप पर हक है, इसका इन्तजाम कीजिए।" अहमद ने लडके का कीमती लिबास, जो वह पहने था, उतरवा कर एक कम्बल ओढ़ा दिया और जम्बील हाथ में देकर,

---

१ इस्लाम धर्म के अनुसार अपाहिजों, असहायों और साधन-हीनों को अढ़ाई प्रतिशत दिया जाने वाला दान।

अपने साथ ले लिया। इसपर माता पति के साथ पुत्र को भी हाथ से जाते देखकर विचलित हो उठी। उस सुन्दर किशोर बालक को उस वेष मे उससे देखा न गया और पति से वापस मागकर उसे साथ लेकर, घर वापस चली गई और अहमद फिर वहाँ से विदा होकर जगल की तरफ निकल गए।

सरी सक्ती का एक बडा ही सुन्दर व्यावहारिक सिद्धान्त था। वे कहा करते थे कि सिवा इन पाच चीजों के तमाम दुनिया फिजूल है—(१) खाना, जान रोकने के माफिक, (२) पानी, प्यास बुझाने के लायक, (३) कपडा, तन ढकने लायक, (४) स्थान, रहने भर के लिए तथा (५) इल्म, जिस पर अमल कर ले।

वे कहते, "जुबान और चेहरे से दिल का हाल मालूम होता है और दिल होते है तीन तरह के—(१) मिस्ल पहाड के, जो हिल हो नही सकते, (२) भारी भरकम पेड की जड की तरह, जो कभी-कभी हवा से हिल जाते है तथा (३) मिस्ल पर के, जो हर वक्त हवा से उडते-फिरते है। हया और उन्स के दरवाजे पर आते है और अगर दिल में जुमूह और वरा (मलिनता और सासारिक तृष्णा) पाते है तो ठहरते है, नही तो पलट जाते है। पाँच चीजे उस दिल मे नही रह सकती जिसमे कोई चीज भी हो—(१) खुदा का खौफ, (२) खुदाई उम्मीद, (३) मुहब्बत, (४) हया और (५) उन्स। इस्रारे (मर्म) कुरानी समझने के लिए गौरोफिक्र (गभीर चिता) करनेवाला सबसे ज्यादा अक्लमन्द है। (सन्तोषी पुरुष श्रेष्ठ है।) आरिफों का सबसे अच्छा मकाम जोफ है। कयामत मे उम्मत के लोग (नबियो के अनुयायी) नबियो के तरफ पुकारे जायंगे और अल्लाह के औलिया अल्लाह की तरफ। आरिफ वह है जो कम खाये, कम सोये और कम ऐश करे।"

कहते—आरिफ़ मिस्ल आफ़ताब के सब पर चमकता है और मिस्ल जमीन के सबका बोझ उठाता है और मिस्ल पानी के है कि लोगों की ज़िन्दगानी उस पर मुनहसर (आश्रित) है और मिस्ल आग के है कि सबको उसकी रोशनी पहुँचती है। और कहा—सूफी की मारिफत उसकी पहेंज़गारी

को नही छिपाती और इल्म बातिन मे तसर्रुफ (प्रयोग) नही करती और उसकी करामत दूसरो को हराम से बाज रखती है। ऐश आरिफ़ को उस वक़्त हासिल होता है जब वह अपने को फना कर देता है। दिखाने के लिए अपने को खुल्क (सदाचारी) करना खालिक से दूर कर देता है।

कहा—जो शख्स लोगो से ज़्यादा मिलता है उसको सिद्क हासिल नही होता है। खुल्क यह है कि लोगो को तकलीफ न दे बल्कि उनसे तकलीफ पहुंचे तो उस पर सब्र करे। किसी पर गुस्सा न करना चाहिए और गुस्से को ज़ब्त करना बड़ा खुल्क (सदाचार) है। गुनाह आदमी तीन वजह से तर्क करता है। (१) जिन्नत की ख़ाहिश से, (२) दोज़ख के डर से तथा (३) खुदा की शर्म से। जब बन्दा इबादत को ख़ाहिशे नफ्स पर अफ़ज़ल (महान्) खयाल करता है तो उसको कमाल हासिल होता है।

कहते है कि जब उन्हे मालूम होता कि उनके पास कोई इल्म सीखने आता है तो वे खुदा से दुआ करते कि उसको ऐसा इल्म दे दो कि उसे मेरे पास आने की ज़रूरत ही न पडे और मुझे तेरी याद से गाफिल न करे। एक व्यक्ति तीस साल से कठोर तप करने मे लगा हुआ था। किसी ने पूछा, "तुम्हे यह ताकत कहाँ से मिली?" उसने कहा, "मैंने एक दिन सरी सक़्ती के दरवाजे पर जाकर आवाज़ दी। उन्होने अन्दर से ही पूछा कि कौन है? मैंने कहा दोस्त। बोले—अगर आश्ना (परिचित) होता तो याद करता। फिर मेरे लिए दुआ की कि इसको ऐसा कर दे कि किसी की परवाह न रहे। उसी दिन से मेरी तरक्की होने लगी।"

दुनिया से दूर रहने की बात सूफ़ी सन्तों की तरह सक़्ती भी कहते; मगर एक शख्स पहाड पर रहने वाले किसी दरवेश का पैग़ाम लेकर जब उनके पास आया तो उन्होने कुछ और ही बाते कही। सक़्ती अपनी दूकान में पर्दा डालकर रोज़ एक हज़ार बार नमाज़ पढ़ते थे। एक दिन कोहे-लबनान पर रहने वाले दरवेश का सन्देश लेकर जब वह शख्स आया तो पर्दा हटाकर उसने सलाम किया और सन्त ने सलाम भेजा है, ऐसा कहा।

उस समय सलाम के जवाब मे सलाम भेजकर उन्होने यह कहला

भेजा, "ख़ल्क से अलग रहकर खालिक की इबादत करना मुर्दों का काम है और जिन्दा वे है जो ख़ल्क मे रहकर हर वक़्त खालिक की याद करे।" (दुनिया मे रहकर ईश्वर-भजन करना हर किसी के लिए आसान नही। दुनिया की चीजे उसके मन को बर्बस अपनी ओर खीच लेती है। उनके प्रभाव से दूर रहना ही उसके लिए श्रेयस्कर है।)

पहले वे मेवा बेचने का काम करते थे; मगर एक इरादा कर रखा था कि दस दीनार पर आधे दीनार से ज्यादा मुनाफा न लेगे। एक बार साठ दीनार के बादाम खरीदे। उसके बाद एकदम बादामो का भाव चढ गया। एक दलाल ने नब्बे दीनार पर वह बादाम खरीदने चाहे मगर उन्होने कहा, मै अपने इरादे को न तोड़ूगा और वह बादाम उसके हाथ न बेचे। जिन दिनो ये गिरे-पडे मेवा बीनकर बेचते थे, बाजार मे आग लग गई। शुक्राने मे उन्होने सारा माल खैरात मे बाँट दिया।

किसी ने सक़ती से पूछा कि आपको यह मर्तबा कैसे हासिल हुआ। वे बोले, "एक दिन हज़रत हबीब ताई मेरी दूकान पर आये। मैने कुछ चीजे उनके सामने रखकर कहा—आप इन्हे दरवेशो मे तक्सीम कर दे। उन्होने कहा—'ख़ैर-कुम-अल्लाह।' उस दिन से मेरा दिल दुनिया से एकदम हट गया और अल्लाह की मुहब्बत ने दिल मे जगह कर ली। दूसरे दिन हज़रत मारूफ करखी एक यतीम बच्चे को अपने साथ लाये और बोले, इसे कपडा पहना दो। मैने उसे नये कपडे पहना दिये। उन्होंने दुआ की कि तू दुनिया को अपना दुश्मन समझने लग। उसी दिन से मुझपर ख़ुदा की मेहर होने लगी।"

इनके शिष्य जुनैद बगदादी कहते थे कि इनसे ज्यादा इबादत करने वाला मैने किसी को नही देखा। ९८ साल तक कही आराम नही किया। आबिद और ज़ाहिद वे बहुत ऊँचे दर्जे के थे। चालीस साल तक उनके दिल मे शहद खाने की इच्छा रही, मगर उन्होने नफ़्स की खाहिश पूरी करने से इन्कार कर दिया। वे दिन मे कई बार अपनी सूरत आइने मे देखते इस खयाल से कि कही गुनाहों के असर से मुह काला न हो गया हो। वे

कहते, "दुनिया का तमाम गम उन्हे ही मिल जाय ताकि कोई और ग़म में मुब्तिला न हो।"

जब कोई उन्हे सलाम करता तो वे तुर्श-रू (आवेश मे) होकर सलाम का जवाब देते। लोगो ने उनके इस विचित्र व्यवहार का कारण पूछा तो उन्होने एक मजेदार बात कही। वे बोले, "हजरत नबी ने कहा है कि जब कोई किसी को सलाम करता है तो अल्लाह की तरफ से सौ रहमते नाज़िल होती है। उनमे से नव्वे उसको मिलती है जो खुश-दिल होता है और दस उसको मिलती है, जो तुर्श-रू होता है। मं इसलिए सलाम का जवाब तुर्श-रू होकर देता हूँ कि मुझसे ज्यादा रहमते सलाम करने वाले को मिले।"

एक और भी चोज भरी बात का उल्लेख उनकी जीवनी मे आता है। कहते है कि यसुफ के पिता हजरत याकूब को जब सक्ती ने स्वप्न मे देखा तो पूछा, "आपके दिल मे जब खुदा की मुहब्बत थी तब यूसुफ की मुहब्बत क्यो हुई?" उस समय आवाज आई, "ऐ सरी, अदब का लिहाज कर।" फिर यसुफ का वह इतिहास प्रसिद्ध अलौकिक सौन्दर्य सक्ती को दिखाया गया। देखते ही चीख मारी और बेहोश हो गए और तेरह दिन तक बहोशी की हालत मे पडे रहे। होश आने पर यह आवाज सुनी, "हमारे हबीबो की जो बुराई करता है उसकी यही हालत होती है।"

आध्यात्मिक लज्जा और प्रेम का आत्यन्तिक स्वरूप एक कातिल फ़कीर मे सरी सक्ती को देखने को मिला। कहते है कि जब सक़्ती उनसे मिले तो पूछा, "नाम क्या है? फकीर ने कहा, "हू—अर्थात् वही।" पूछा, "आप क्या खाते है? "क्या पीते है? क्या करते है?" हर सवाल के जवाब मे फकीर ने वही एक शब्द 'हू' कहा। तब सक़्ती ने पूछा, "क्या 'हू' से आपका मतलब खुदा से है?" अल्लाह का नाम सुनते ही उस दरवेश के मुख से एक चीख निकली और वही उनका खात्मा हो गया। इतना अदब था, इतनी हया थी उनके दिल मे कि वे खुद तो नाम नही ही लेते मगर दूसरे के मुह से भी उनका नाम खुल जाने की ताव वे न ला सके।

उनकी बहुत अच्छी नसीहत यह थी कि इन्सान को इबादत जवानी में करनी चाहिए। और यह बात उन्होंने उस समय कही थी जब वे खुद जवान थे और कोई जवान उनके बराबर इबादत करने वाला नही था। जब बगदाद मे आग लगी और सब दूकाने जल गई, मगर उनकी दूकान बच रही, तब उसका उन्होने शुक्रिया अदा किया था और दूसरो के नुकसान का कुछ खयाल नही किया। उस शुक्रिया के लिए, वे बोले, मै इन तीन सालो से प्रायश्चित कर रहा हूँ।

जुनैद बगदादी से सक्ती ने एक बार मुहब्बत की तारीफ पूछी। जुनैद ने कहा, "कुछ लोग मुआफकत (अनुकूलता) और इशारत (सकेत) को मुहब्बत कहते है।" सक्ती ने अपने हाथ की खाल को खीचा पर वह जरा भी न उभरी। तब बोले, "अगर मै यह कहूँ कि मुहब्बत ने मेरी खाल को सुखा दिया है, तो गलत न होगा।" यह कहकर सक्ती बेहोश हो गए। शायद इस शर्म से कि खुद उन्होने अपनी मुहब्बत का राज जाहिर कर दिया। मगर जुनैद कहते कि उनका चेहरा मिस्ल आफताब के रोशन था।

उनका कहना था कि मुहब्बत बन्दे की यह कैफियत कर देती है कि तीर, तलवार, नेजा आदि किसी चीज़ की चोट उसे महसूस नही होती। और कहते थे कि पहले मै मुहब्बत को नही जानता था मगर जब अल्लाह ने अपने फज़्ल से आगाह कर दिया तो मुझे उसकी सिफ़त मालूम हुई। मुहब्बत का ज़िक्र करते हुए सक़्ती का बेहोश हो जाना और अल्लाह का नाम सुनते ही "हू" से उनका निर्देश करने वाले फकीर की तात्कालिक मौत इस बात को जाहिर करते है कि मुहब्बत पसे-पर्दा (आड मे) रहना चाहती है।

एक बार सक़्ती सब्र का ज़िक्र कर रहे थे कि उसी समय बिच्छू ने कही से निकल कर कई बार उनके डक मारा। मगर उन्होंने उफ तक न की। वे कहते, "ऐ अल्लाह, तेरी अजमत ने मुझे मनाजात (अपने लिए ईश-प्रार्थना) से बाज रखा, तेरी मारिफ़त ने उन्स अता किया। अगर जुबान से याद करने का हुक्म न देता तो कभी जुबान से याद न करता क्योकि जुबान तेरे औसाफ (गुणावली) अदा नही कर सकती।" जुनैद से

उन्होंने कहा कि बगदाद मे मरना नही चाहते क्योंकि ज़मीन उन्हे कबूल नही करेगी और जो लोग उन्हे अच्छा समझते है, उनके दिल को सदमा होगा।

सन्त सक़्ती के अन्त समय जुनैद, जो उनके प्रिय शिष्य और सगे भान्जे थे, उनसे मिलने आये। वे गरमी के दिन थे और जुनैद ने पखा झलना शुरू किया तो उन्होने यह कहकर मना कर दिया कि हवा से आग भडकती है। जुनैद ने मिजाज पूछा तो उन्होने एक आयत पढी जिसका आशय यह है—बन्दा तो अपने मालिक की मिल्कियत है, उसकी अपनी कोई चीज नही। जुनैद ने अपने महान गुरु से जब आखरी नसीहत चाही तो कहा, "खल्क मे रहकर खालिक से गाफिल मत हो।"

: १५ :

यूसुफ़-बिन-हुसैन

ख्वाब मे किसी के यह पूछने पर कि बहिश्त मे यह आला दर्जा आपको क्योकर मिला, यूसुफ-बिन-हुसैन ने एक बडी दिलचस्प बात बताई। वे बोले," मैंने दुनिया मे बुरी बात को अच्छी बात के साथ नही मिलाया।" यह बहुत सीधी और मार्के की बात है। दुनिया मे बहुत-सी अच्छी बाते है और बहुत-से ऐसे लोग है जिन्हे वे बाते अच्छी लगती है; मगर ऐसे बहुत कम लोग है जो अच्छी बातो को किसी प्रकार की मिलावट के बिना अमल मे लाए।

इस कथा के नायक यूसुफ-बिन-हुसैन अपनी साधना के प्रारम्भ में अपने कलामय सौन्दर्य और आध्यात्मिक आकर्षण के कारण एक अरब सरदार की लडकी की नजरो मे, जो खुद भी बडी रूपवती थी, कुछ इस तरह चढ गए कि वह अपने को सभाल न सकी। एक दिन वह मौका पाकर एकान्त मे उनसे मिली मगर हुसैन सौन्दर्य के उस अनन्य सागर के प्रेम मे कुछ ऐसे डूब चुके थे कि सरदार की उस लडकी की बात सुनते ही उनपर वहशत-सी तारी हुई और वे उसकी बात का कुछ उत्तर दिये बिना ही वहाँ से बेतशाहा भाग खडे हुए। उसी रात को उन्होने एक बडा मज़ेदार स्वप्न देखा।

स्वप्न यह था—उनके नाम-राशि और सुन्दरता मे साथी हजरत यसुफ जन्नत मे एक तख्त पर बैठे है। उनके सामने फरिश्ते कतार बाधे निहायत अदब से खड़े है। इन्हे देखकर पैगम्बर यूसुफ उनके इस्तिकबाल के लिए तख्त से उठे और फिर प्रेमपूर्वक हाथ पकडकर उन्हे अपने पास

बिठा लिया और कहा, "जिस वक़्त तुमसे अरब के सरदार की लडकी ने नफ़्स परस्ती (कामवासना) की ख़ाहिश की थी और तुम पर ख़ौफ़-इलाही तारी (प्रभु-भय छा गया था) हुआ था तो अल्लाह ने मुझसे फर्माया कि ऐ यूसुफ, देखो, तुमने जुलेखा से बचने के लिए तो मुझसे दुआ की थी और ये यूसुफ है, जिसने मेरे ख़ौफ की वजह से सरदार की लडकी की ओर ध्यान भी न दिया।"

इसके बाद अल्लाह का मुझे हुक्म हुआ कि हुसैन से मिलो और कहना कि तुम चुने हुए जाहिदो मे होगे। उसी ख्वाब मे हजरत यसुफ ने हुसैन को यह सलाह दी कि तुम जू-उल-नून मिस्री के पास जाओ और उनसे इस्मे-आजम (महामत्र) हासिल करो। जब वे जागे तो जू-उल-नून से मिलने के लिए मिस्र की ओर रवाना हुए और एक साल तक गोशानशीनी की, मगर अदब की वजह से उनसे उन्होने अपने आने की वजह जाहिर न की। एक साल के बाद जू-उल-नून ने पूछा, "तुम किस लिए आये हो ?" तो इतना ही कहा, "आपके दीदार और आपकी खिदमत के लिए।"

एक साल के बाद जू-उल-नून ने फिर कहा कि अगर तुम्हारी कोई ख़ाहिश हो तो कहो। तब वे बोले,"इस्मे आजम हासिल करना चाहता हूँ।" सुनकर जू-उल-नून चुप हो गए और एक साल तक उनकी बात का कोई जवाब न दिया। एक दिन एक प्याले मे कुछ ढककर हुसैन को दिया और कहा कि नील-दरिया के पास जाकर फुलॉ शख़्स (अमुक व्यक्ति) को यह प्याला देना, वह तुम्हे इस्मे आजम (महामत्र) सिखायगा। ये उसे लेकर चले; मगर ख़याल आया, न जाने इसमे क्या है। खोला तो उसमे चहा था और वह कूदकर भाग गया। हुसैन को अपने इस अमर पर बड़ी शर्म आई; मगर प्याले को बदस्तूर ढककर उन्होने उस सन्त को जाकर दे दिया।

सन्त ने प्याला खोला तो खाली था। बोले, "जब तुम एक चहे की ही हिफाज़त न कर सके तो इस्मे-आजम की हिफाजत क्योकर करोगे ?" शर्मिंदा होकर वे जू-उल-नून के पास वापिस आये। जू-उल-नून ने कहा-

"मैंने साल भर अल्लाहताला से इजाजत चाही कि तुझे इस्मे-आज़म बता दू, हर बार यही जवाब मिला कि अभी उसकी आज़माइश (परीक्षा) करो। तुम्हारी आजमाइश के लिए ही मैंने प्याले मे चूहा बन्द करके दिया था। मगर ज़ाहिर है कि अभी इस्मेआजम की हिफाजत करने की ताकत तुममे नही आई है। अब तुम अपने मुल्क जाओ और जब तुम वहाँ पहुँचो ते [illegible] जायगा।"

हुसैन ने जू-उल-नून से दुआ की कि कुछ नसीहत करे। जू-उल-नून बोले, "जो कुछ तुमने लिखा-पढा है, सबको भुला दो, ताकि हिजाब उठ जाय। दूसरे मुझे भी भुला दो और किसी के सामने पीर या शेख़ कहकर जिक्र न करना।" हुसैन बोले, "ये दोनो काम तो मुझसे नही हो सकते।" नून ने कहा, "तीसरी बात यह है कि खल्क को नसीहत करो और अल्लाह की ओर बुलाओ और अपनेको दरम्यान मे खयाल न करो।" हुसैन बोले, इशाअल्लाह, इस काम को मै अन्जाम दूगा।" फिर अपने मुल्क मे वापस आकर लोगो को वाज़ देने लगे। किन्तु जब इन्होने धर्मोपदेश देना शुरू किया तो वहाँ के उलमाए-जाहिर (बडे-बडे विद्वान) ने इनका विरोध किया और लोग इनसे खिच गए। यहाँ तक कि एक दिन जब वे उपदेश देने पहुँचे तो देखा कि उपदेश सुनने कोई न आया था।

यह हालत देखकर उन्होने इरादा किया कि आज वाज न करूँगा। इतने मे एक बुढिया ने आकर कहा कि जू-उल-नून मिस्री से जब तुमने वादा किया है कि खल्क को नसीहत करूगा और दरम्यान मे अपने को न समझूगा तो फिर अपने इकरार से क्यो मुकरते हो? उन्होंने समझा, इस वृद्धा के जरीआ अल्लाह ही उन्हे चेतावनी दे रहा है। उन्होंने उस दिन वाज किया और इसके पश्चात पचास साल तक वे वा'ज करते रहे। और कभी इसका खयाल न किया कि लोग है कि नही।

हुसैन अगर्चे इब्राहीम ख़वास के रहनुमा थे, मगर इन्ही के जरीआ अल्लाह ने एक बार हुसैन को एक कड़ी फटकार भेजी। अल्लाह की इस नाराजी का सबब क्या था, यह तो ज़ाहिर हुआ नहीं; पर एक दिन ख़्वाब

मे इब्राहीम को यह हुक्म हुआ कि हुसैन से जाकर कह दो कि तू रांद-ए-दर-गाह है। जब वे जागे तो हुसैन से इस ख्वाब का जिक्र करते हुए भी उन्हे शर्म आई। दूसरी रात फिर यही ख्वाब देखा। मगर इब्राहीम ने अदब का खयाल करके फिर उनसे कुछ न कहा। तीसरी बार उन्होने यह ख्वाब देखा कि अल्लाह हुक्म दे रहा है, "ऐ इब्राहीम, हुसैन से कह दे कि तू दरगाह से निकाला हुआ है और अगर न कहेगा तो तुझे सख्त अजाब (यातना) मिलेगा।"

जब वे जागे तो मजबूर होकर हुसैन के पास खुदाई हुक्म सुनाने के लिए हाज़िर हुए। मगर हुसैन ने आते ही उनसे कहा कि अगर कोई अच्छा-सा शेर तुम्हे याद हो तो सुनाओ। इब्राहीम ने शेर सुनाया और उसे सुनकर वे कुछ ऐसे प्रभावित हुए कि देर तक बैठे रोया किये। यहां तक कि उनकी आँख से लहू टपकने लगा। वे बोले, "कुछ लोग कुरान सुना रहे थे मगर उससे भी मुझे इतनी रिक़्कत (नम्रता) न हुई जितनी कि इस शेर को सुनकर हुई और लोग मुझे जो जिन्दीक कहते है, वह सच ही कहते है। और अल्लाह ने जो मुझे राद-ए-दरगाह कहा, सो यह खिताब मेरे लिए दुरुस्त है।"

इब्राहीम उनका यह हाल देखकर बडे हैरान हुए और कुछ परेशान से होकर जगल की ओर निकल गए। वहाँ उन्हे खिज्र के दर्शन हुए। खिज्र ने कहा कि हुसैन तेगे-इश्के-इलाही (प्रभु-प्रेम की तलवार) का घायल है। खिज्र ने आगे यह बात कही कि जो शख्स अल्लाह का हो जाता है उसे अगर बादशाहत नही मिलती तो वजारत (मत्रि-पद) जरूर हाथ आती है।

अब्दुल वाहिद की जिदगी को भी बनाने मे उन्होने मदद दी। कहते है कि पहले ये बहुत आवारागर्द और शरीर (शरारती) थे। मा-बाप से लड़ते और भागे-भागे फिरते। एक बार ये हुसैन की मजलिस में आये तो उस वक़्त आयत को सुनाकर वे कह रहे थे कि अल्लाह अपने बन्दे को इस तरह अपनी ओर बुलाता है जैसे वह उसका मुहताज हो। अब्दुल वाहिद

पर इसका ऐसा असर हुआ कि वह कपड़े फाडकर कब्रिस्तान की ओर भाग गये। उसी दिन हुसैन को यह आवाज आई कि उस तौबा करने वाले नौजवान को ढूँढो। वे तलाश मे निकले और तीन दिन मे उन्हे कब्रिस्तान मे पाया। मगर इन तीन दिनो मे ही वे इस दर्जे पर जा पहुँचे कि हुसैन से बोले, "तीन दिन पहले आपको हुक्म हुआ और आप अब आये।"

उस्मान हैरी नामक सन्त को भी एक बडी अजीबोगरीब हालत मे खुदा ने इनसे उपदेश दिलाया। नेशापुर का एक व्यापारी एक खूबसूरत तुर्की बादी को, जिसे उसने हाल ही मे हजार दीनार मे खरीदा था, इनकी बीवी के पास छोडकर किसी से अपना कर्ज वसूल करने परदेस गया। उस्मान उस बादी को अपने पास रखने को राजी न थे। मगर व्यापारी की बात को वे टाल न सके। एक दिन उस बादी पर उनकी नजर जो पडी तो दिल बेकरार हो गया। इस बला से छूटने के लिए वे अपने पीर के पास पहुँचे। मगर उन्होने हुसैन के पास जाने की सलाह दी। लम्बा सफर तै करके वे हुसैन के शहर मे पहुँचे; मगर वहाँ उनकी बदनामी सुनकर वे लौट आये। उस्ताद ने फिर उन्ही के पास भेजा। मजबूरन वे जाकर उनसे मिले।

पहले ही से वे उनकी बडी बदनामी सुन चुके थे। पर अब जो उनके पास पहुँचे तो देखा कि एक खूबसूरत लडका उनके पास बैठा है और जामो-सुराही भी रखी है। इन्होने सलाम किया, जिसका जवाब देते हुए हुसैन ने जो-कुछ कहा उसे सुनकर ये बेखुद-से हो गए। फिर पूछा, "आपने बाहरी रूप ऐसा क्यो बनाया है कि जिससे लोग आपको बुरा कहे।" वे बोले, "देखो यह लडका मेरा बेटा है, मै इसे कुरान पढाता हूँ। इस सुराही मे हम लोगो के पीने के लिए पानी है। सच पूछो तो मैने जाहिर को खराब इसलिए बना रखा है कि कोई खबसूरत तुर्की लौडी मेरे सुपुर्द न करे।" उस्मान समझ गए कि अल्लाह को दोस्त रखने वाले खल्क से दूर ही रहते है।

कहते है कि हुसैन की इबादत का यह हाल था कि शाम की नमाज पढ़ने खडे होते तो इसी हालत मे सुबह कर देते। जुनैद को इन्होंने लिखा

था कि अगर अल्लाह ने तेरे नफ्स का जायका चखाया तो तुझे कोई मर्तबा हासिल न होगा। सबसे अच्छी चीज इखलास है। मक्कारी को छोड़ देना दीदारे-इलाही हासिल होने से अच्छा है। कहते—जो दरियाए तौहीद (प्रभु-रूपी सरिता) मे ग़र्क होता है, कभी उसकी प्यास नही बुझती। जो दिल से अल्लाह को याद करता है, अल्लाह और सबकी याद उसके दिल से दूर कर देता है।

: १६ :

हातम असम

बगदाद जाने पर खलीफा ने जब मिलने के लिए बुलाया तो हातम ने इस्लामी दुनिया के सबसे बडे नेता का अभिनन्दन करते हुए कहाः अस्सलामालिकुम या जाहिदा ! ऐ त्यागी सन्त तुझे नमस्कार ! वह बोला, "जाहिद मैं नही, जाहिद तो आप है।" हातम ने उत्तर दिया, "अल्लाहताला का इरशाद है, 'कुल मताउद दुनिया फिल आखिरतिइल्ल करीब'—ऐ मुहम्मद, लोगो से कह दो कि पूजी दुनिया की बहुत थोडी है। और इस थोड़ी पूजी पर ही तूने कनाअत (संतोष) की है। बस तू ज़ाहिद हुआ और इधर मैं कि दुनिया की हिशमत (ऐश्वर्य और रौब) की तो बात ही क्या, आखिरत यानी बहिश्त की ला-इन्तिहा (असीम) दौलत और शान-शौकत पर भी सन्तुष्ट नही तो फिर मैं भला तेरे खयाल के मुताबिक ज़ाहिद या त्यागी कैसे हो सकता हूँ ?"

हातम ने अपनी वैराग्य-भावना की ओर एक मज़ेदार ढग से इशारा करके खलीफा के मन को जागृत करने का प्रयत्न किया था। पर आज संसार के अधिकांश लोग दुनिया की किन्ही छोटी-मोटी चीजों की खातिर स्वर्ग और नरक सभी को तिलाजलि देने को तैयार बैठे है ! लेकिन हातम के समय मे स्वर्ग और नरक की मान्यताएं बडी सजीव और लोगों के जीवन पर प्रभाव डालने वाली थी। एक बार किसी ने सन्त हातम की दावत की। तीन शर्तों पर उन्होंने उसे मन्जूर किया। १. जहाँ चाहूँगा बैठूगा और वह जूतों के पास जाकर बैठे। २. जो चाहूँगा खाऊँगा, और उन्होने

सिर्फ दो रोटिया खाईं। तीसरी शर्त थी, जो कहूँ वह करना होगा और उन्होंने गरम तवा मगाया।

मकान-मालिक जब तवा गरम करके लाया तो वो उस पर खडे होकर बोले, "मैंने दो रोटिया खाई है।" फिर तवे पर से उतरकर लोगो से कहा— "क्या तुम्हारा यह यकीन है कि कयामत मे जर्रे-जर्रे का हिसाब देना होगा? अगर है तो इस तवे पर खडे हो!" लोगो ने कहा, "हमारा यकीन तो ऐसा ही है पर हम इस तवे पर खडे नही हो सकते।" हातम बोले, "जब तुम इस तवे पर खडे होकर एक दिन का हिसाब नही दे सकते तो कयामत के दिन उस जमीन पर खडे होकर, जो सरापा (नितात) आग होगी, सारी जिन्दगी का हिसाब कैसे दोगे?"

हातम ने यह बात कुछ इस सहृदय निष्ठा और भावुकता के साथ कही कि लोगो को ऐसा महसूस हुआ कि मानो कयामत का रोज बिल्कुल सामने है और उन्हे हिसाब देने के लिए चन्द ही घडियो मे पेश होना है। जियाफत (भोज) के बाद लोग हँसते-बोलते है; मगर यहाँ जो भी था, वह हातम की बाते सुनकर बेकरार होकर रो रहा था। उस दिन पाई-पाई का हिसाब देना होगा इसी खयाल से नौशेरवाँ अपनी बेगम को रोटी पकाने के लिए हाथ जल जाने पर भी दासी देने को राजी न हुआ।

रोज़ी देने वाला ईश्वर है। इस सिद्धान्त पर उनका अटल विश्वास था। एक मालदार उन्हे कुछ देने के लिए इसरार (आग्रह) करने लगा तो वे बोले, "जब तू मर जायगा तो मुझे अल्लाह से कहना होगा कि मेरा जमीन का रोजी देनेवाला उठ गया; अब तू मेरी खबर ले।" इसी रोजी के मामले मे एक आदमी से उनकी खासी बहस हो गई। वह बोला, "यह सब झूठ है कि रोजी आस्मान से उतरती है, और कि रोजी देने वाला अल्लाह है। मैं तो जब जानू कि तुम एक जगह बैठ जाओ, कही न आओ-जाओ और रोजी बिना मागे, बिना मेहनत के तुम्हारे पास पहुँच जाय।"

वह दो साल तक एक जगह लेटे रहे और रोज़ी उनको मिलती रही।

कहते है कि उन दिनों रोजी हातम के मुह में अल्लाह की तरफ से आती थी। मगर उसे तसल्ली न हुई। वह बोला, "आप हवा या जमीन मे जाओ तब देखू कि कैसे आपको रोजी मिलती है।" हातम बोले, "अल्लाह हवा मे परिन्दों को और जमीन में चीटियों को रोजी देता है।" यह बात सुनकर वह खामोश हुआ। उसने तौबा की और फिर कुछ नसीहत चाही। हातम बोले, "दुनिया से किसी तरह की खाहिश न रख। अल्लाह की इबादत मे लग जा इस तरह कि कोई न जाने; और मखलूक को भूल जा।"

किसी और ने पूछा, "आपको रोजी कहाँ से मिलती है?" तो बोले, "खुदा के जमीन और आस्मान के खजानों से।" इसी सिलसिले मे सन्त अहमद हंबल से वह एक दिन पूछ बैठे, "आप रोजी की तलाश करते है कि नही।" वह बोले, "तलाश करता हूँ।" हातम ने पूछा, "वक्त से पहले, या वक्त के पीछे या ठीक वक्त पर ही आप रोजी तलाश करते है?" सवाल निहायत माकूल था जिसके औचित्य को समझ कर ही हम्बल खामोश हो गए। क्योकि यदि यह कहा जाय कि समय के पहले या पीछे तलाश करते है तो बे-वक्त तलाश ठीक नही और जिसका समय आ गया उसकी तलाश फिजूल।

एक सन्त ने यह प्रश्न सुनकर कहा, "तलाशे-रोजी न हम पर फर्ज है, न वाजिब, न सुन्नत (पद्धति)। जो इससे बाहर हो उसकी तलाश बेसूद (व्यर्थ)। रोजी हमको ढूढती है।" मुहम्मद ने भी कहा है कि रोजी खुद ही तुम्हारे पास आती है; फिर हम उसे क्यों ढूँढे?' हातम ने इस प्रश्न का जो निष्कर्ष निकाला वह यह है—हमे अल्लाह की इबादत करनी चाहिए, जो उसने हमको हुक्म दिया है और अल्लाह रिज़क (जीविका) देगा जैसा कि उसने वादा किया है।

हामिद लफाफ नाम के सन्त कहते थे कि हातम अक्सर मुझसे जिक्र करते, "हर सुबह शैतान मुझे बहकाने आता है और पूछता है कि आज तू क्या खायगा, क्या पहनेगा और कहाँ रहेगा? मै जवाब देता कि मौत

खाऊँगा, कफन पहनूगा और कब्र मे रहूँगा।" शैतान यह कह कर चला जाता कि तू बडा सख्त मर्द है। हातम तो सख्त थे ही पर उनकी बीवी भी कुछ कम न थी। हातम जब जहाद पर जाने लगे तो बीवी से पूछा, "चार माह के लिए जाता हूँ, तुम्हे कितने रुपये खर्च के लिए दू ?" बीवी बोली, "पहले यह बताइए, मेरी जिन्दगी कितनी है ?" बोले, "यह तो मुझे मालूम नही।" बीवी ने कहा, "फिर मेरी रोजी क्योकर आपके हाथ हो सकती है ?"

लोगो ने किसी शख्स का जिक्र करके कहा कि उसने बहुत-सी दौलत जमा की है। हातम ने पूछा, "क्या उसने जिन्दगी भी जमा की है ?" कहा, "नही।" हातम बोले, "तब मुर्दे का (विनाशकारी) माल जमा करना बेकार।" किसी ने हातम से आकर कहा, "आपको अगर कोई हाजत हो तो बयान कीजिए।" हातम बोले, "मेरी यही हाजत है कि न तू मुझे देखे और न मैं तुझे देखू !" किसीने पूछा, "आप नमाज क्योंकर पढते है ?" बोले, "जब नमाज का वक्त होता है—वुजू करता हूँ, और बातिनी वुजू यानी तौबा करके मस्जिद मे दाखिल होता हूँ, पुलसरात को पैरों के नीचे, मौत के पीछे और अल्लाह को सामने समझ कर दिल को अल्लाह की तरफ जु करके नमाज के फरायज (कर्त्तव्य) अदा करता हूँ।"

किसी व्यक्ति ने उनसे नसीहत चाही तो कहा, "अगर दोस्त का तालिब (इच्छुक) है तो अल्लाह काफी है; अगर हमराही (साथी) चाहता है तो खिज्र जैसे वली काफ़ी है; अगर इब्रत (शिक्षा) चाहता है तो दुनिया काफी है; अगर मूनिस (मित्र) चाहता है, कुरान काफ़ी है; अगर शग्ल (व्यस्तता) चाहता है तो इबादत (उपासना) काफी है; अगर वाज (नसीहत) चाहता है तो मौत काफी है; और अगर मेरी तमाम बाते तुझे नापसन्द हों तो दोजख तेरे लिए काफ़ी है।" एक रोज हामिद लफ़ाफ़ नामी सन्त से पूछा, "किस हाल में हो ?" वह बोला, "सलामत (सुरक्षा) और आफ़ियत (चैन) में।" हातम ने कहा,

"सलामत पुलसरात पर गुजरने के बाद और आफियत जन्नत स्वर्ग में दाखिल होने के बाद है।"

लोगो ने पूछा, "आपकी आर्ज़ू (मनोकामना) क्या है ?" बोले, "बस यह कि आफियत से दिन गुजरे।" लोगो ने कहा, "आपको तो हर वक्त आफियत हासिल है।" बोले, "मै आफियत उसे समझता हूँ कि दिन भर मे कोई गुनाह न हो।" विद्वत्-समाज के पास से एक दिन जब वह गुज़र रहे थे तो उपस्थित विद्वानों से उन्होने कहा, "अगर तुम्हे गुजरे हुए दिन पर अफ़सोस है इसलिए कि उसका अच्छे-से-अच्छा हस्तेमाल न किया जा सका और आज के दिन को गनीमत जानते हो और कल जो पेश आयगा उससे खौफजदा हो तो खैर वरना दोजख का खतरा है।"

बोले—निजात की उम्मीद मे इन्सान अल्लाह का फरमा-बरदार (आज्ञाकारी) बन्दा बने। उन्होने कहा—किब्र (बुजुर्गी), हिर्स (लोभ) और खुद-आराई (स्वय सज्जित) की हालत मे मौत से डरना चाहिए। क्योकि तकब्बुर (दर्प) करने वाले को मिस्ल मुतकब्बिरो (घमण्डियों) के और हिर्स करने वालों को मिस्ल हरीसों (लोभियों) के और खुद-आराई करने वालों को मिस्ल खुद-आराओ के मौत देता है। और साथ ही कहा—इस जमाने मे बादशाहों और अमीरो से ज्यादा तकब्बुर आलिमों और जाहिदो को होता है। बोले—दीन की राह पर चलने वालों को तीन मरहले दरपेश आते है, भूखा मरना, कुछ न मिलने पर सब्रोकरार (धैर्य और सतोष) रखना और खिरकापोशी।

बोले—सजे हुए बागो पर गर्व न करो क्योंकि जिन्नत के बाग से ज्यादा सजा हुआ दुनिया का कोई बाग नही। अपनी इबादत पर घमंड न करो क्योकि इबलीस इन्तिहा इबादत के बावजूद भी खुदा के दरबार से निकाल दिया गया। अपनी करामात यानी चमत्कारों की ताकत पर भी ग़रूर न करो क्योकि बलम बऊर जाहिद होने पर भी खुदा की मलामत (भर्त्सना) का शिकार हुआ। वह जाहिद था, करामाती था; मगर गरूर के सबब अल्लाह ने कहा, "यह कुत्ते की मानिन्द है।"

कहा—दिल पाच किस्म के है। १. मु र्दिल; यह काफिरों यानी अनीश्वरवादियो के लिए है। २ बीमार दिल; यह गुनाहगारो के लिए है। ३ गाफिल दिल, यह शिकमख्वारो यानी भोजन-भट्ट पेटुओ के लिए है। ४ वाजगूदिल यानी पिछडा हुआ दिल, यह यहूदियो के लिए है। ऐसे लोगो के लिए अल्लाहताला का इरशाद है कि वे कहते है हमारे दिल पर्दे मे है। ५ सही दिल, यह साहब दिलो (उदार चित्त) के लिए है। कहा—अमल करते समय अल्लाह को ऐसा जानो कि वह देख रहा है। बात करते समय ऐसा समझो कि वह सुन रहा है। और खामोशी के वक्त यह समझो कि तुम्हारे दिल मे जो भी खयाल उठ रहे है, उन्हे वह जानता है।'

उनका कहना था कि शहवत अर्थात् वासना तीन तरह की होती है। एक खाने मे, दूसरे बोलने मे और तीसरे देखने मे। अत. खाने मे अल्लाह पर भरोसा रखो और बोलते समय सच कहो और देखो इस तरह कि दुनिया से इब्रत हासिल हो।

और आगे कहा—अमल-सालेह (पुण्य-कर्म) करते वक्त रिया (पाखण्ड) को दखल न दे और बोलते वक्त तमा को दूर कर और मुरव्वत और सखावत करके अहसान न जता। अमल-सालेह से अभिप्राय सम्भवत. यह है कि किसी नेक काम के समय बेईमानी या मक्कारी की भावना को पास नही आने दे। दूसरे, बात बोलते समय तमा को दूर कर। जब बोले तो किसी के हित की ही बात कहे और ऐसे समय निष्काम भाव से लोभ और लालच को दिल से निकालकर ही बात करे। तीसरे, दान करके जो एहसान जताता है उसको दान नही कहा जा सकता। वह तो दान के नाम पर सौदा करना है।

इसी सिलसिले मे एक चौथी बात भी उन्होंने कही थी और वह यह है कि जो चीज तेरे पास हो उसमे कजूसी न कर। खाने-पीने की जो चीजे लोगो के पास होती है, उन्हे अक्सर वह आ के लिए जमा करके रखते है और जरूरत पड पर दूसरो को देने मे हिचकते है। खुदा की दी हुई चीजो को क़ैद न करो—खाओ और खिलाओ।

हातम ने आगे कहा—अल्लाह की मर्जी पर राजी रहनेवाले को अल्लाह दोस्त रखता है और कौल (वचन) पूरा करनेवाले का मर्तबा ऊँचा होता है। और कहा—ताजील (शीघ्रता) करना हरकते शैतान है। मगर मेहमान के आगे खाना रखने मे, मइयत (हमराही) की तहजीज़ और तकफीन (मान और प्रतिष्टा), बालिगा के निकाह (वयस्क-विवाह) मे, अदाये ीन (धर्म-पालन) मे और गुनाह से तौबा करने मे ताजील यानी जल्दबाजी बहुत अच्छी है।

किसी ने पूछा, "आप किसी से कुछ लेते क्यो नही ?" बोले, "लेने मे मे ी जिल्लत (अपमान) और उसकी इज्जत है। एक बार किसी से कुछ ले लिया। पूछा गया तो कहा, "मु े अपने से उसको इज्जत ज्यादा मतलूब (अपेक्षित) है।"

हातम की जिन्दगी का मजेदार पहलू यह है कि वह बरसो तक बहरे होने का ढोग बनाए रहे। उनका नाम हो पड गया हातम असम यानी बहरे हातम। एक औरत को शर्मिदा न होना पडे इसीलिए उन्होने यह जाहिर कर दिया कि वह ऊँचा सुनते है। ओर जब तक वह औरत जिदा रही हातम का यह बनाव ी ढोग बराबर जारी रहा।

सन्त जुनैद बगदादी की हातम मे बडी श्रद्धा थी और कहा करते थे कि वह हमारे जमाने मे सिद्दीक है। नफ्स की शनाख्त (पहचान) और उसके मक्रो-फरेब (दाँव-पेच) से बचने के सम्बन्ध मे इन्होने बहुत कुछ कहा। और लोगो से कहा करते थे कि मखलूक मेरे बाद तुमसे पूछे कि तुमने हातम से क्या सीखा तो यह न कहना कि इल्मे हिकमत (बुद्धिमता का ज्ञान) सीखी है बल्कि कहना हमने उनसे दो चीजे सीखी है:—

१ खुरसन्दी अर्थात आनन्दमय सन्तोष उस चीज पर जोकि अपने कब्जे मे हो। दूसरे, नाउम्मेदी अर्थात वितृष्णता उस चीज से जो अपने कब्जे में न हो।"

लोगों ने पूछा—शाइस्ता किसे कहते है ? शाइस्ता अर्थात सुसस्कृत वह है जो मालिक से डरे और मखलूक से किसी तरह की कोई उम्मीद

न रखे। कहा जाता है कि हातम के सत्संग से बहुत से लोगो ने लाभ उठाया और आध्यात्मिकता की ऊँची श्रेणियो पर जा पहुँचे। एक बार बलख में प्रवचन करते वक्त कह बैठे "या इलाही, इस महफ़िल (सभा) मे, जो सबसे ज्यादा गुनाहगार हो, उसे बख्श दे।" उसमे एक कफन-चोर भी था और रात को जब कफन चुराने को उसने कब्र खोदी तो आवाज आई—"आज ही तो हातम की महफिल मे बख्शा गया और आज ही फिर चोरी!" उसने तौबा की और अपना वह पापकर्म छोड दिया।

मुहम्मद राजी नाम के सत कहते थे कि हजरत हातम को गुस्सा करते मैंने कभी नही देखा, सिवा एक दफा के। और किस्सा इस तरह है—वे अपने शागिर्दो के साथ बाजार जा रहे थे। उनके एक शागिर्द ने किसी एक दुकानदार से कुछ उधार लिया था। वह सख्त कलामी (कटु शब्द) से दाम मागने लगा। हातम ने कहा, देख सख्त कलामी न कर। दूकानदार बोला—मुद्दत से इन पर मेरे दाम आते है। सख्त कलामी न करूँ तो क्या करूँ? मै तो अभी दाम ले लूगा। गुस्सा होकर उन्होने अपनी चादर जमीन पर पटक दी। सडक पर सोना-ही-सोना फैल गया। बोले—दाम भर सोना ले ले यदि ज्यादा लिया तो तेरा हाथ खुश्क हो जायगा। उसने लोभ मे आकर ज्यादा ले लिया और जैसा कहा था, उसको वैसा ही फल मिल गया।

: १७ :

अब्दुल्ला-बिन-मुबारिक

कहते है कि अब्दुल्ला पहले किसी दासी के इश्क मे इतने मुब्तिला हो गए थे कि उनको किसी बात का खयाल ही न रहा। एक रात को जब वह उससे मिलने गये तो उसके घर से कुछ दूर सारी रात उसके इतजार मे खडे रहे। वह रात भी सर्दी की थी। इसी इतजार मे जब सुबह हो गई तो उन्हे रात के बेकार जाने का अफसोस हुआ। सोचा, अगर मै रातभर अल्लाह की इबादत करके जागता तो क्या ही अच्छा होता। वह जागना इससे हजार दर्जे बेहतर होता।

बस वही से दिल मे चोट लगी। दुनिया की ओर से दिल मे वैराग पैदा हुआ और खुदापरस्ती की लौ लग गई। जिस लगन से वह दुनियावी मुहब्बत मे मशगूल थे उससे भी ज्यादा तेजी के साथ खुदा की ओर चले। खुदा की मेहर तो थी ही, क्योकि एक बार जब उनकी माँ उन्हे ढूढने निकली तो देखा कि बाग मे वह लेटे हुए है और एक साप नरगिस की शाख से पंखा झल रहा है।

अब्दुल्ला ने अपना कुछ ऐसा तरीका बना लिया था कि एक साल वह हज करते, एक साल जिहाद मे जाते और एक साल तिजारत (व्यापार) करते और उससे जो मुनाफा होता उसे जायज (अधिकारी) लोगो को देते और फ़कीरो को खुर्मे खिलाते। फिर उनकी गुठलियाँ गिनकर, जो जितने खुर्मे खाता उतने ही दिरम देते। कहते है कि एक बद-खसलत (बुरे स्वभाव) आदमी कुछ दिनों तक उनकी सुहबत (सगत) मे रहा।

जब वह जुदा हुआ तो यह बहुत रोये और बोले, "अफसोस, वह मुझसे जुदा हुआ; मगर उसकी बद-खसलत उससे जुदा न हुई।"

एक बार अब्दुल्ला हज को काफिले के साथ जा रहे थे तो एक फकीर भी साथ हो लिया। उन्होने शायद मज़ाक मे उससे कहा, "हम दौलतमन्द है, हमे अल्लाह ने हज के लिए बुलाया है, तुम क्यो तुफैली (अनिमत्रित) बने साथ चलते हो?" फकीर ने जवाब दिया, "जो मेजबान (अतिथि की पूजा करनेवाला) करीम (दयालु) होता है वह मेहमान से भी ज्यादा तुफैली की खातिर करता है; उसने यानी अल्लाह [illegible] तुम्हे अपने घर मे और मुझे अपने पास बुलाया है।" अब्दुल्ला बोले, "वह तो हम दौलतमन्दो से कर्ज मागता है।" फकीर ने कहा, "हमी लोगो के लिए कर्ज भी मागता है।" अब्दुल्ला बोले, "तुम यह सच कहते हो!"

तकवा यानी इन्द्रिय-निग्रह का वह बडी बारीकी से पालन करते थे। कहते है कि सफर मे एक मंजिल पर उतरकर वह नमाज पढने लगे और घोडा छूटकर एक शख्स के खेत मे चरने लगा। जब नमाज से फ़ारिग हुए तो घोडे को खेत मे चरते देख बहुत नाराज़ हुए और उसे छोड़कर पैदल ही सफर करने लगे। इसी तरह की एक कहानी और है। किसी व्यक्ति से लिखने के लिए कलम मागी और फिर उसे देना भूल गए। वह मुल्क शाम चला गया। जब याद आई तो शाम का सफर करके उसकी कलम वापिस कर आये।

उनके इस इन्द्रिय-निग्रह के पालन का ही यह नतीजा था कि उनकी दुआ मे असर पैदा हो गया था। कहते है कि एक बार वह कही जा रहे थे। राह मे लोगो ने एक अन्धे से कहा, "[illegible] आ रहे है। तुझे जो मागना हो माग ले।" उसने इन्हे [illegible]ोककर अर्ज की, "अल्लाह से दुआ कीजिए, मेरी आँखो मे रोशनी आ जाय।" अब्दुल्ला ने दुआ की तो अल्लाह ने उसकी आँखो में रोशनी दे दी।

एक बार हज को जा रहे थे, मगर रास्ते मे देर हो गई। कही दूर बियावान मे थे और सिर्फ़ चार दिन बाकी रह गए थे। समझा कि वक्त

पर काबा पहुँचना मुमकिन नही। इतने में एक कमजोर कुबड़ी बुढ़िया आई और बोली, "मेरे साथ आ, मै तुझे काबा पहुँचा दूगी।" साथ हो लिये। जब दरिया आता तो बुढ़िया आँख बन्द करने को कहती और अब्दुल्ला को ऐसा लगता कि जैसे वह कमर-कमर पानी मे होकर जा रहे है। बुढिया ने इस तरह वक्त रहते काबा पहुँचा दिया और अब्दुल्ला ने अच्छी तरह हज कर लिया। तब बुढिया बोली, "अब चल, मै तुझे अपने बेटे से मिला दू।"

वह बुढिया अब्दुल्ला को लेकर अपने बेटे के पास गई जो एक घर में बहुत दिनो से आत्म-साधना किया करता था। अब्दुल्ला ने देखा कि लडका बहुत दुबला और कमजोर है; मगर उसका चेहरा तेज से चमक रहा है। लडके ने जैसे ही अपनी मा को देखा, वह आकर उसके कदमों पर गिरा और कहा, "मै जानता हूँ कि अल्लाह ने तुम दोनों को मिट्टी सम्भालने के लिए ही यहाँ भेजा है। क्योकि मेरी मौत का वक्त आ गया है।" यह कहकर उसने प्राण छोड़ दिये। अब्दुल्ला ने उसे आखरी गुस्ल देकर दफ़न कर दिया तो बुढिया बोली, "अब तुम जाओ, मै बेटे की कब्र पर रहूँगी। अगले साल तुम मुझे न पाओगे पर मेरे लिए दुआ करते रहना।"

एक बार हज से फ़ारिग होकर अब्दुल्ला काबा मे ही सो गए। रात को ख्वाब देखा कि दो फरिश्ते आपस मे बातकर रहे है। एक ने पूछा, "इस साल कितने लोग हज को आये और कितने लोगों का हज कबूल हुआ?" दूसरा बोला, "हज तो चालीस लाख आदमियों ने किया मगर क़बूल किसी का न हुआ। दमिश्क मे एक मोची अली-बिन-मूफिक है। वह खुद तो हज को नही आया मगर उसका हज कबल हुआ और उसके तुफ़ैल मे अल्लाह ने तमाम हाजियो को बख्श दिया।" अब्दुल्ला की जब आँखे खुली तो इस स्वप्न को याद करके बड़े चकित हुए और मोची के दर्शनों के लिए दमिश्क़ की ओर रवाना हुए।

मोची से जब मिले तो उसका नाम-धाम और काम पूछा। उसने कहा, "मै यही रहता हूँ। अली मेरा नाम है और मै मोची का काम करता हूँ।" फिर उसने अब्दुल्ला का नाम पूछा और उनका नाम सुनकर चीख

मारी और बेहोश हो गया। वह क्यों चीखा और बेहोश हुआ इसका तो कोई जिक्र नही; पर होश आने पर उसने आगे की कहानी यो बताई, "मुझे मुद्दत से हज का शौक था। खूब मेहनत और किफ़ायत करके मैंने सात सौ दिरम जमा कर लिये और अबकी दफा हज का पूरा इरादा था। मगर एक दिन पडोसी के घर मे कुछ पक रहा था, मेरी बीवी ने कहा, 'जाकर माग लाओ, मै भी खाऊँगी'।

"मै जब पडोसी के घर गया और उससे अपना मतलब ज़ाहिर किया तो वह बहुत नादिम हुआ और बोला, 'यह जो कुछ मै पका रहा हूँ वह किसी के भी खाने लायक नही है। सात दिन से मेरे बाल-बच्चे भूखे है, उन्हे कुछ भी खाने को नही मिला, इसलिए निहायत मजबूरी मे मै यह चीज पका रहा हूँ।' उसकी ऐसी हद दर्जे की गरीबी और बेबसी देखकर मेरा दिल काप उठा। मैंने सोचा, एक गरीब की मुसीबत दूर करना हज से कहीं अच्छा है और वह दिरम, जो मैंने हज के लिए जमा किये थे, लाकर उसे दे दिये।"

कहते है, अब्दुल्ला का एक गुलाम था। उन्होने उसे कुछ रुपए अदा कर देने पर आजाद कर देने का करार किया था। वह रुपए जमा भी करा रहा था कि इतने मे किसी ने अब्दुल्ला से कहा कि उनका गुलाम कफन-चोर है। और कफन बेचकर ही वह जमा करा रहा है। अब्दुल्ला को यह सुनकर अफसोस हुआ। पता लगाने के लिए वह शाम को कब्रिस्तान पहुचे। उन्होने देखा कि गुलाम ने एक कब्र खोदी और उसमे घुस गया। आगे बढकर अब्दुल्ला ने देखा कि वह टाट पहने और गले मे तौक डाले सिज्दे मे पडा रो रहा है।

यह देखकर अब्दुल्ला वहा से हट आए और एक कोने में बैठकर रोने लगे। वह गुलाम तो उधर कब्र के अन्दर, और अब्दुल्ला अपने गोशे (एकात—एक कोने) मे रात भर इबादत करते रहे। जब सुबह हुई तो गुलाम ने मस्जिद मे जाकर फजर की नमाज पढ़ी और फिर दुआ की,

"ऐ अल्लाह, अब सुबह हो गई है और मेरा दुनियावी मालिक

मुझसे दिरम मांगेगा। तू अपनी मेह्र से अता कर।" अब्दुल्ला ने देखा, एक नूर पैदा हुआ और वह दिरम की शक्ल में उसके हाथ में आ गया। यह देखकर अब्दुल्ला ने उसके पैर चूम लिये। मगर वह बोला, "मेरा राज़ खुल गया, अब मैं जीना नही चाहता", और जान दे दी। अब्दुल्ला ने उसी टाट मे उसे दफन कर दिया। रात को ख्वाब मे देखा, मुहम्मद कह रहे हैं, "तूने मेरे दोस्त और अल्लाह के महबूब (प्यार) को टाट के कफन मे क्यो दफन किया ?"

एक दिन अब्दुल्ला के यहाँ कोई मेहमान आये। उस वक़्त उनके पास कुछ न था, उन्होने बीवी से कहा कि मेहमान अल्लाह का भेजा हुआ होता है, इसलिए उसकी खातिर लाजिमी है। बीवी ने इस बात में उनका विरोध किया। वह बोले, "जो बीवी नेक काम मे अपने खाविंद की मुखालिफत (विरोध) करे उसे छोड देना चाहिए।" और मेहर अदा करके अपनी बीवी को तलाक दे दिया। एक दिन प्रवचन सुनकर एक अमीर लडकी ने जिद पकड ली कि उसकी शादी अब्दुल्ला से कर दी जाय। उसके माता-पिता ने प्रसन्नतासूर्वक विवाह कर दिया और पचास हजार दीनार भी दिये। ख्वाब मे देखा, खुदा फर्मा रहै है, "तूने हमारी खातिर बीवी छोड़ दी। इसलिए हमने उससे अच्छी बीवी दे दी, ताकितु झे यकीन हो जाय कि अल्लाह के लिए किये हुए काम मे घाटा नही रहता।"

अब्दुल्ला ग़ीबत यानी पीठ पीछे किसी की बुराई करने को बहुत बड़ा गुनाह समझते थे और ऐसा माना जाता है कि निदक के सारे पुण्य, जिसकी वह निदा करता है, उसके नाम लिख दिए जाते हैं। इसी विचार से एक दिन निदा का प्रश्न उठने पर उन्होने कहा कि यदि कोई ग़ीबत करना ही चाहे तो अच्छा है कि वह अपने माता-पिता की निंदा करे क्योंकि उनका बड़ा हक है और अगर सारी कमाई उनके खाते लिख दी जाय तो ठीक ही होगा।

लोगो ने पूछा, "कौन-सी चीज ज्यादा फायदेमद है ?" बोले, "कामिल अक्ल।" लोगों ने कहा, "अगर कामिल अक्ल न हो ?" बोले, "हुस्ने

अदब !" लोगों ने कहा, "अगर यह भी न हो ?" बोले, "अक़्लमंद भाई कि जिससे मशविरा कर सके।" लोगों ने कहा, "अगर यह भी न हो ?" बोले, "तब फिर खामोशी।" लोगों ने आगे पूछा, "अगर यह भी न हो सके ?" बोले, "ऐसे शख्स को मौत से बढकर कोई चीज़ फायदा नही पहुंचा सकती।"

नेशापुर के बाजार में एक गुलाम को सर्दी से ठिठुरते हुए देखकर अब्दुल्ला ने उससे कहा कि क्यों तू अपने मालिक से नहीं कहता कि वह तुझे एक पोसतीन ले दे ? उसने कहा, "मुझे कहने की क्या ज़रूरत है जबकि वह खुद ही देखता है ?" अब्दुल्ला को उसकी यह स्वामी-निष्ठा भली लगी और मन मे कहा, भक्त की धर्म-मर्यादा कोई इससे सीखे। एक आतिश-परस्त की बात से भी वह प्रभावित हुए। किसी काम से वह मिलने आया था। शायद अब्दुल्ला की किसी मुसीबत के वक्त वह सहानुभूति प्रकट करने आया था। तब उसने कहा, "अक्लमंद वह है, जो पहिले ही दिन वह काम करे जो बेवकूफ लोग तीसरे दिन करते हैं।" अब्दुल्ला ने लोगों से कहा, "इसे याद रखो इसलिए कि अच्छी नसीहत है।"

लोगो ने पूछा, "दरवेशो का क्या हाल होता है ?" अब्दुल्ला बोले, "वह हमेशा खुदा के तालिब रहते है और बहुत इल्म के बजाय थोड़ा-सा अदब अगर उनमे हो तो यह ज्यादा अच्छा है; क्योकि आज अदब की बड़ी कमी है। आज लोग अदब उस वक़्त तलाश करते हैं जब दुनिया में साहिबे अदब बाकी नही रहे। मेरे नज़दीक अपने नफ़्स की पहचान और राहे-रास्त पर रखने को अदब कहते हैं। अपने हाथ मे जो चीज है उसको दान में देना तो ठीक ही है पर उससे भी बढकर वह दान है, जिसका देना दूसरों के हाथ में है, जो उनसे कह-सुनकर दिलाया जाय। हजार दिरमो का दान देने से एक दिरम का कर्ज चुकाने मे ज़्यादा सवाब है।"

तवक्कुल अर्थात् ईश्वर पर भरोसा रखने के सम्बन्ध में अपने विचार

प्रकट करते हुए अब्दुल्ला ने कहा, "हराम माल से कौड़ी लेनेवाला भी मुतवक्किल अर्थात् ईश्वर पर भरोसा रखने वाला नही हो सकता और तवक्कुल उसका नाम नही, जिसे तेरा दिल तवक्कुल खयाल करे बल्कि जिसे अल्लाह तवक्कुल खयाल करे वही तवक्कुल है।"

अब्दुल्ला ने अपने अन्त समय मे अपना सारा माल फकीरों को बाट दिया। एक मुरीद ने कहा, "आपकी तीन लड़कियाँ है उनके लिये आपने क्या छोडा ?" बोले, "उनके लिए मैंने अल्लाह को छोड़ा। जिनको देखने वाला अल्लाह हो उन्हे अब्दुल्ला की क्या ज़रूरत ?" अन्तिम क्षण में आखें खोलकर सन्तुष्ट स्वर मे कुछ मुस्कराकर अरबी में कहा, "अमल करनेवालों को इसी तरह अमल करना चाहिये" और फिर सदा के लिए आखे बन्द कर लीं। लोगों ने सफियान सूरी को स्वप्न मे देखा तो पूछा, "आपका क्या हाल है ?" वह बोले, "खुदा ने बख्श दिया।" उनसे अब्दुल्ला के लिए पूछा तो कहा, "उनके क्या कहने ! वह उन लोगो मे है, जिन्हे हर रोज नियामते हजूरी अर्थात् दर्शन हासिल होते हैं।"

: १७ :

ख़ैर नस्साज

इन अत्यन्त शान्त वृत्ति के भक्त पुरुष का नाम अबुल हसन मुहम्मद था। और इनके पूज्य पिता का नाम था इस्माईल। मगर इनको अपना यह ख़ैर नाम, जो एक मुसलमान ने बडी ही विचित्र परिस्थिति मे इन्हे प्रदान किया था, बहुत पसन्द था। वह कहा करते थे कि एक मुसलमान ने जो नाम रखा उसे बदलू, यह शोभा नही देता। इसलिए वे इस ख़ैर नाम से ही प्रसिद्ध हुए।

इनके इस नामकरण की घटना विचित्र नाटकीय है। कहते है कि एक बार वे हज के इरादे से घर से चले। जब ये कूफा मे पहुँचे तो एक आदमी ने इन्हे देखा और समझा कि ये काले रग का आदमी, जो फटी पुरानी मैली-गुदडी ओढ़े हुए है, यकीनन कोई भागा हुआ गुलाम है। उसने पूछा, "क्या तू गुलाम है ?" बोले, "हाँ।" उसने फिर पूछा, "क्या तू अपने मालिक से भागा हुआ है ?" उन्होने फिर जवाब दिया, "हाँ !"

वह इस "भागे हुए गुलाम" को अपने घर ले गया, ख़ैर नाम रखा और कपडा बुनने का काम सिखाया। जब वह ख़ैर कह कर पुकारता तो सन्त अबुल हसन कहते, 'लबेक् !' अर्थात् हाजिर हूँ। नस्साज का अर्थ होगा कपड़ा बुनने वाला; क्योकि लिखा है कि कपडे ुनने के इस काम के कारण ही वह ख़ैर नस्साज कहलाए और कपड़े बुनने का यह काम और अपने मालिक की खिदमत बड़ी लगन से संत ने मुद्दतों की। यहाँ तक की कि उनकी तत्परता, निष्ठा, ईश्वर-भक्ति और उपासना का भाव देखकर वह व्यक्ति इन पर धीरे-धीरे श्रद्धा करने लगा और अन्ततः क्षमा-याचना

के साथ विदा करते हुए बोला, "मुनासिब तो यह है कि आप मालिक हो और मैं खिदमतगार (सेवक)।"

खैर नस्साज संत सरी सक़ती के शिष्य और जुनैद के गुरु-भाई थे। शिबली ने इनसे ही प्रारम्भिक आध्यात्मिक शिक्षा प्राप्त की। और फिर इन्ही के आदेशानुसार सत जुनैद बगदादी के सत्सग से लाभान्वित होने के लिए उनके पास चले गये। इब्राहीम खवास ने भी इनकी ही मजलिस मे तौबा की थी। इनके अतिरिक्त अनेक सतो ने इनसे दीक्षा ली थी जो आगे चलकर पर्याप्त प्रसिद्ध हुए पर इनका और जुनैद का पारस्परिक विशेष श्रद्धा-मय सम्बन्ध था।

कूफा के उस मुसलमान के घर से विदा लेकर वे मक्का आये और कहते हैं वहाँ उन्हे वह मरातब (दर्जे) हासिल हुए कि जुनैद खैर को खैरेना कहते थे अर्थात् हम सबमें श्रेष्ठ। जुनैद जैसा व्यक्ति जिसे अपना श्रेय, अपना कल्याण करनेवाला कहे उसकी उच्चता निश्चय ही अत्यन्त उदात्त और सर्व सम्मान्य समझी जायगी। पर मक्का की इनकी साधना का कोई उल्लेख उनकी जीवनी में नही आता। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि उनकी साधना कूफा में हुई।

कूफा मे वे इबादत तो करते थे जैसा कि वे कही भी रहकर कर सकते थे, पर उनकी साधना का मूल इस भावना मे सन्निहित प्रतीत होता है कि उनका मालिक बना हुआ वो मुसलमान जो आदेश देता उसका वह कुछ इस श्रद्धा, इस विश्वास के साथ पालन करते कि वो उन्हे अपने असली आका अर्थात् अपने बनानेवाले परमपिता परमात्मा तक पहुँचा देने वाला है। क्योकि वो मुसलमान उन्हे यह कहकर घर लाया था कि मै तुझे तेरे आका से मिला दूगा और इसी विश्वास पर वे उसके यहाँ आये।

वह व्यक्ति इन सन्त खैर को आदेश करता कि यह कपडा बुनो और घर-गृहस्थी का यह या वह काम करो। तब कपडा बुनना, खाना बनाना और खिलाना, बर्तन माजना, कपडे धोना, बच्चों की खिदमत, गौ-सेवा, खेती या बनिज-व्यापार का काम गर्जेकि तमाम वह काम, जो एक गुलाम से कराये जाते हैं, वे करते और यही उनकी साधना थी।

ख़ैर नस्साज उस मुसलमान के बच्चे का मुह धोते थे और समझते थे कि वो अपने स्वामी की आज्ञा का पालन कर रहे है। और वो सेवा उन्हे अपने असली स्वामी परमपिता परमेश्वर तक पहुँचा देगी। किसान अपना खेत बोता और बोकर समझता है कि उसने अपना खेत बो दिया। ख़ैर नस्साज यह काम करते और करते इसलिए कि यह खेत बोना उन्हे ईश्वर तक पहुँचाने वाला है। घर मे खाना बनता है और वो बच्चों को, मेहमानो को और घरवालो को खिला दिया जाता है। ख़ैर नस्साज भी खाना बनाते होंगे और वो बनाकर खिलाते होगे अपने आका के घर-वालो को, बच्चो को और मेहमानो को, ठीक वैसे ही कि जैसे रोज साधा-रणतः हर एक घर मे होता ही है। पर ख़ैर नस्साज के मन मे खाना बनाते और खिलाते समय एक भाव यह रहता कि वो खाना बनाते और खिलाते है खाना बनाने और खिलाने के लिए ही नही बल्कि अल्लाह की खुशनूदी हासिल करने के लिए।

उनके इस भोलेपन मे ही उनकी असली कीमत, उनका असली जौहर था। उनके इस भोलेपन ने ही निश्चयात्मक रूप से बता दिया कि उनका कपड़ा बुनना और बेचना, खाना बनाना और खिलाना, बर्तन माजना और बुहारी देना, बच्चो को नहलाना और कपडे पहनाना, खेत जोतना और बोना, जानवरो को खोलना और बाधना व उन्हे खिलाना-पिलाना ग़र्ज़कि जितने भी काम है वह अपने लिए नही, अपने उस आक़ा के लिए नही, बल्कि अल्लाहताला की खुशनूदी के लिए है।

स्वय ख़ैर ने इस संबंध में जो कहा है वह याद रखने लायक है। वह कहते, फ़क़ीर वह है जो माल को बला (कष्ट) और इफ़्लास (कगाली) को राहत (संतोष) समझे, धन या यश के लिए फ़क़ीरी बिल्कुल दूसरी ही बात है। इसीलिए वे कहते, ख़ौफ अल्लाह का ताज़याना (चाबुक) है उन बन्दों के लिए, जो बेअदबी के खूगर (अभ्यस्त) हो गए हों ताकि राह पर आ जायं।

ख़ैर कपड़ा तो बुनते ही थे, पर अक्सर दज़्ले के किनारे जाकर बैठते।

कहते है कि उन्हे देखकर मछलियां खुद उनके पास आती और कुछ चीजे उनके लिए लाती। एक बार का जिक्र है कि वह किसी वृद्धा स्त्री का कपडा बुन रहे थे। वह उन्हे दज्ले पर मिली और पूछा कि मैं तुम्हारी मजदूरी लाऊं और तुम न मिलो तो मैं किसको दू ? बोले, "दज्ले मे डाल देना।" दैवयोग से ऐसा ही हुआ। जब वह वृद्धा मजदूरी लाई तो ख़ैर मौजूद नहीं थे और उसने दीनार दज्ले मे डाल दिये।

ख़ैर जब दजले पर आये तो कहते है कि एक मछली पानी से निकली और उसने वह दीनार उनके सामने लाकर रख दिये और उन्होने ले लिये। इस घटना पर उनकी काफी आलोचना हुई। कुछ सूफियों ने कहा कि वह क़ाबिले कबूल नही, उन्हे खेल मे मशगूल कर दिया है। पर अत्तार को यह टीका पसंद नही। उनका कहना है कि जैसे हजरत सुलेमान के लिए ऐसी बाते हिजाब न थी वैसे ही उनके लिए भी; हालांकि कम दर्जे के लोगो के लिए यह बेशक हिजाब है।

ख़ैर ने "जीवेम शरदः शतम्" की वैदिक-आकाक्षा को चरितार्थ करते हुए सौ साल की आयु पाई। जब उनका अन्त समय आया, वह सध्या का समय था, तो यम से उन्होने बेतकल्लुफी से कहा, "मैं नमाज़ पढ़ लू तब तुम अपना काम करना। तुम्हे वक्त पर आने का हुक्म हुआ है और मुझे वक्त पर नमाज पढ़ने का हुक्म है।" उन्होंने प्रेमपूर्वक नमाज़ पढ़ी और फिर अपने को मेहमान के हवाले करके हमेशा के लिए फ़ारिग़ (मुक्त) हो गए।

मृत्यु के पश्चात् किसी ने उन्हे स्वप्न मे देखा तो पूछा, "कहिये, अब आप किस हाल में है ?" बोले, "जिस हाल में कैदी रिहाई पाकर होता है! अल्लाह का शुक्र है कि उसने कैदे-दुनिया से रिहाई दी!" उनकी थोड़ी-सी सूक्तियों मे बड़े ही मार्के की सूक्ति यह है, "कमाल अमल का यह कि आमिल अमल को बेवक़अत समझे, अर्थात् अमल की कोई जरूरत ही न रह जाय।" ऐसा ही था उनका अमल। वह अल्लाह में वासिल हुए, उसकी कारसाज़ी (रचना) भी समझी।

: १८ :

शाहशुजा करमानी

शाहशुजा करमान के रहनेवाले और उस देश के शाही खानदान से सबंधित थे। वह बहुत ऊचे दर्जे के फकीर और इल्म-दोस्त आरिफ (विद्याभ्यासी एव ज्ञानी सत) थे। उन्होने बहुत-सी किताबे भी लिखी और अपने जमाने के सुप्रतिष्ठित संतो मे उनकी बडी इज्जत थी। अबु-तराब बख्शी, सत यहिया-अबु-हफस उनकी दिली इज्जत करते थे।

कहते है, वह ४० साल तक नही सोये। जब नीद ज़्यादा सताने लगती तो नमक आँखों मे भर लेते। ४० साल बाद सोये तो स्वप्न मे ईश्वर के दर्शन हुए। बोले, "या खुदा, मै तो इतने दिन से तुम्हे ढूढ रहा था बेदारी (जागृति) मे मगर तुम मिले ख्वाब में।" जवाब मिला, "यह इस बेदारी (जागरण) का ही नतीजा है।" इसके बाद वह अक्सर सो लेते, इस उम्मीद मे कि ख्वाब (बेदारी) मे फिर दीदार हों।

उन्हे ख्वाब मे फिर दीदार हुए कि नही इसका कोई जिक्र नहीं है; पर इस ख्वाब का जिक्र करते हुए कहते, "सारे जहान की बेदारी (जागरण) भी इसके एवज मे मुझे मिले तब भी मै अपने ख्वाब को न बदलू।" इनका एक लडका था और एक लडकी और इन दोनों की जिन्दगी निहायत मज़ेदार और बहुत ही ऊँचे दर्जे की दरवेशी और फकीरी के सुनहरे रंग से शराबोर (पूर्ण) थी।

लिखा है कि लडका जब पैदा हुआ तो उसके सीने (छाती) पर सब्ज़ खत से (हरे रंग मे) "अल्लाह जल्लेजलालहू" दर्ज था। बड़ा होकर वह गाने-बजाने और सैर-तमाशे में लग गया। आवाज़ अच्छी थी। साथ

मे एक चिकाडा रखता। एक रोज रात को गाता हुआ एक मुहल्ले में गया तो उसकी सुरीली आवाज मे माईल (आकर्षित) होकर एक नयी दुल्हिन खाविद (पति) को छोड दरवाजे पर आ खडी हुई। खाविद ने लडके से कहा, "क्या अभी तौबा का वक्त नही आया ?" बात लग गई। बोला, "आ गया।" चिकाड़ा तोड़ा और चल दिया। आगे चलकर अच्छा फकीर हुआ।

उनकी बेटी की कहानी और भी मज़ेदार है ! शाहे -करमान ने उससे शादी करनी चाही। सत शुजा ने जवाब के लिए तीन दिन की मोहलत मागी। वह चाहते थे कि किसी खुदा-दोस्त दरवेश (ईश्वर-भक्त फकीर) से उसका निकाह (विवाह) करे। मस्जिदों और खानकाहो (संतों के आश्रम) मे किसी कामिल दरवेश (पहुँचे हुए फकीर) की तलाश मे वह घूमा किये। तीसरे दिन एक दरवेश नमाज पढता हुआ मस्जिद मे मिला। पूछा, "क्या आप निकाह करेगे ?"

दरवेश ने कहा, "मै गरीब हूँ। कौन भला मुझे अपनी लडकी देगा ?" फकीर उनकी नजर मे चढ़ गया था। उन्होने अपनी लडकी का जिक्र किया और फिर दोनो की रजामंदी से उनका निकाह हो गया। यहाँ तक तो ठीक; पर जब यह नई दुल्हिन बनी लडकी अपने खाविद के घर गई तो देखा कि एक आबखोरे मे पानी और एक टुकड़ा खुश्क रोटी का रखा है। लडकी का माथा ठनका और उसने फौरन ही पिता के पास जाने का इरादा किया।

फ़कीर ने कहा, "मै तो पहले ही जानता था कि शाही घर की लड़की एक फकीर के यहाँ बसर (जीवन-यापन) नही कर सकती।" मगर सुनने के लायक है जो कुछ लड़की ने कहा। वह बोली, "मै अपने पिता से इस बात की शिकायत करने जाती हूँ कि आपने तो कहा यह था कि मै तेरा निकाह किसी पर्हेजगार (संयमी) के साथ करूँगा। और उन्होंने ऐसे शख्स से मेरा निकाह किया, जो अल्लाह पर शाकिर (ईश्वर को धन्यवाद देने वाला) नही और दूसरे दिन के लिए खाना रख छोड़ता है। रोटी

का यह टुकडा रख छोड़ना तवक्कुल (ईश्वरेच्छा) के ख़िलाफ़ है। या तो इस घर में रोटी का यह टुकड़ा रहे या मैं रहूँ।"

सत यहिया से शाहशुजा की बड़ी दोस्ती थी। लिखा है कि एक बार यह दोनो दरवेश एक ही शहर में थे। सत यहिया ने वहाँ वाज कहना शुरू किया और शाहशुजा को भी प्रेमपूर्वक निमंत्रित किया पर वह गये नही। एक दिन विशेष आग्रह किये जाने पर वह गये और एक कोने में छुपकर बैठ गए। यहिया को तब बड़ी हैरत (आश्चर्य) हुई जब बोलते-बोलते अचानक उनकी जुबान बद हो गई।

कुछ देर चुप रहने के बाद आखिर वह बोले, "मालूम होता है कि इस मजलिस (सभा) में मुझ से अच्छा वाज देने वाला कोई है। इसीलिए बोलते-बोलते मेरी जुबान बंद हो गई है।" यह सुनकर शाहशुजा कोने मे से उठकर सामने आये और संत यहिया से बोले, "इसीलिए मैं यहाँ आना पसंद नही करता था।"

अबु हफस स्वय एक बहुत बडे सम्मानित संत थे। उन्होने शाहशुजा को एक खत मे लिखा कि मैने अपने नफ़्स और अमल और तक्सीर पर नज़र की तो नाउम्मीदी हासिल हुई। शाहशुजा ने संतोचित और सत्य-निष्ठ विनम्रता से उत्तर दिया, "मैंने आपके खत को अपने दिल का आईना बनाया। अगर नफ़्स से मेरी नाउम्मीदी ख़ालिस होगी तो अल्लाह से उम्मीद होगी और फिर सबसे हटकर अल्लाह से बासिल होंऊंगा।"

शाहशुजा कहते थे, "एहले-फजल (अच्छाइयो वालों) का फज़ल (अच्छाइयां) और एहले-विलायत (ऋषि-पद को प्राप्त) की विलायत (ऋषि-पद) उस वक्त तक रहती है जबतक वह अपने फ़ज़ल को फज़ल और विलायत को विलायत न समझे।" इसी लहजे में वह कहते, "फ़ुक्र-अल्लाह का भेद है। जब उसे ज़ाहिर (प्रकट) करता है फ़ुक्र उससे ले लिया जाता है।" कहते, "सिद्क की तीन अलामते (चिह्न) हैं: १. दुनिया से नफ़रत (घृणा), २. खल्क (संसार) से दूरी, ३. शहवत पर गालिब (इन्द्रियों पर संयम) होना।"

उनकी एक सूक्ति है—हुस्ने-ज़ाहिर उम्मीद की अलामत है—सचमुच ऐसा हुआ है कई बार, कई संतो के जीवन में इसके उदाहरण आये है। सत बशरहाफी ने अपने प्रारंभिक जीवन मे जाहिरे-हुस्न का इजहार किया--अल्लाह के नाम को, जो किसी कागज़ पर लिखा कही नीचे धूल मे पड़ा था, उठाकर, चूमकर, उसमे इत्र लगाकर किसी अच्छे-ऊँचे स्थान पर रखकर। सचमुच विनय और शिष्टाचार में ईश्वर की कृपा है।

ख़ौफ़-ए-इलाही के मानी उन्होने यह बतलाये कि बदा हमेशा डरता रहे कि कही उससे कोई भूल न हो जाय। भूल-चूक के लिए बहुत बड़े-बडे पकड़ मे आ गए है इसलिए उसे हर जगह हाज़िर-नाजिर जानकर उससे हमेशा डरते रहना और उसकी कृपा की आशा बनाये रखना ही ठीक होगा। कहा, "सब्र की तीन अलामते है—तर्के-शिकायत, सिद्के रजा और कबूले रज़ा अर्थात् सच्चे दिल से ईश्वर पर निर्भरता और ईश्वर की मान्यता।"

वह कहते—जब आशिक़ हमादोस्त हो जाते है तो खुदाई का दावा करते है। हमादोस्त का भाव है (सोऽहम् अस्मि) मैं वही हूँ। सोऽहम का ज्ञान तो आवश्यक है और वह आता ही है, पर यह जरूरी नही कि जब कोई खुदा होने का दावा करे। खुदा के, ईश्वर के ही जब सब स्वरूप है तब फिर दावा क्यो ? दावे से यह भास होगा कि दूसरे लोग फिर और ही कुछ है—खुदा नही !

हाँ, ईश्वर की इस विशाल सृष्टि मे और उनके समय की अनन्तता मे कुछ ऐसे अवसर भी आते है जब वह स्वय चाहते है कि कोई ऐसा दावा करके लोगो के मन में छाये हुए प्रमाद और उदासी को दूर करे। ऐसे अवसर पर ज्ञानी और अज्ञानी प्रायः सभी एक स्वर होकर उस दावेदार का तीव्र विरोध करते है; पर जिसे चाहते है उसे वह चमका देते है।

उनका कहना था, अक्लमंद वह है जो हराम की तरफ न देखे, तर्के-शहवत (इन्द्रिय-मोह का त्याग) करे, दिल से अल्लाह को याद करे, जाहिर मे सुन्नत अर्थात् लौकिक-धर्म-व्यवहार का पालन करे और हलाल रोज़ी खाये। और कहते—झूठ और खयानत और ग़ीबत (पर-निन्दा)

से बचो। दुनिया तर्क करो और नफ़्स से बचो। किसी ने पूछने पर कहा, "मैं मिस्ल (समान) उस जिन्दा मुर्ग (जीवित मुर्गा) के हूँ जो आग भरी सीख पर हो।"

कभी कहते, भक्त अपने को ऐसी ही स्थिति में पाता है और जो इस्लामी खौफ की आराधना करते है, उनके लिए तो यह स्थिति स्वाभाविक ही कही जा सकती है। वह ऐसे ही डरे-सहमे रहते है जैसे उनके चारों ओर आग जल रही है जिसमे वह तिल-तिल करके जल रहे हो। पर इसमे हक पर अपना सब कुछ निसार कर देने वाले आनन्द ही मानते है।

किसी कवि ने कहा है—

कबाबे सीख़ हूं हम करवटें हरसू बदलते हैं,
जो जल उठता हूं यह पहलू तो वह पहलू बदलते है।

कुत्ते के द्वारा जुनैद को ईश्वर ने चेतावनी दी थी। एक कुत्ते का जिक्र इन सत की जीवन-गाथा मे भी आया है। इनके ब्रह्म लीन होने के पश्चात् अली शेरजानी नाम के एक सत इन के मजार पर खाना तकसीम किया करते थे। एक दिन उन्होंने दुआ की, "ऐ अल्लाह, कोई मेहमान भेज दे तो मै उसके साथ बैठ कर खाना खाऊँ। दुआ कबूल हुई।"

कोई इन्सान तो न आया पर एक कुत्ता निहायत तपाक से वहाँ आ खडा हुआ। मगर अली ने दुत्कार दिया और वह शराफत से चला गया। अब अली ने सुना, कोई कह रहा है, "तुमने ही तो मेहमान की ख्वाहिश की और जब मैंने मेहमान भेजा तो तुमने उसे दुत्कार दिया।" अब अली को होश आया। बहुत परेशान हुए और दुत्कारे हुए मेहमान को ढूढ़ ने निकले।

बडी मुश्किल से एक जगल में वह कुत्ता उन्हे मिला। अली ने उसके सामने खाना रखा, मगर उसने उस ओर कुछ ध्यान न दिया। अली बहुत शर्मिदा हुए और अपनी गलतो के लिए माफी मांगी। कहते है, उस कुत्ते ने कहा—"ऐ हसनत ;" अर्थात्, यह तुमने अच्छा किया जो तौबा कर ली। "ऐ ख्वाजा अली, अगर तुमने शाहशुजा करमानी की मजार के अलावा और कही ऐसी गुस्ताखी की होती तो जरूर सजा पाते।"

: १९ :

अहमद ख़िज़रविया

खुरासान के सतो मे अहमद खिजरविया का बहुत ऊँचा दर्जा था। उन्होने बहुत-सी पुस्तके लिखी, उपदेश भी बहुत दिये और इनके मुरीदों की सख्या की काफी बड़ी है। मगर इससे भी बड़ी बात यह थी कि इनके सब मुरीद साहबे-कमाल (चमत्कारी) हुए। इन्होने स्वय हातम असम से दीक्षा ली और अबु-तराब के सत्संग से भी लाभ उठाया। अबु-हफस-हदाद, जो स्वय एक बहुत ऊँचे दर्जे के सन्त हुए है, इन्हे बहुत मानते थे। किसी ने इनसे पूछा, "आजकल आपकी नजर मे सूफियों मे कौन बुजुर्ग है?" अबु-हफस ने कहा, "मैंने अहमद-खिजरविया से ज्यादा बुलन्द-हौसला सच्चे हाल मे और किसी को न पाया। मुरव्वत और जवामर्दी मे लासानी (बेजोड) है।"

कहते है कि ये फौजियो के लिबास मे रहते थे। इनकी बीवी का नाम फ़ातिमा था। फ़ातिमा बलख के एक सरदार की बेटी थी। वह दिल से फकीर-दोस्त और खुदा-परस्त थी। इसकी इच्छा हुई कि वह इनसे शादी करे। उसने कहला भेजा कि आप मेरे पिता से मेरे निकाह की दरख्वास्त (निवेदन) कीजिये। इन्होंने अस्वीकार किया। उसने फिर कहलाया कि आप खुदा-रसा है और ईश्वर-भक्त को तो मार्ग-दर्शक होना चाहिये। आखिर, इन्होंने उसकी बात मानकर उसके पिता को कहला भेजा और सरदार ने प्रसन्नतापूर्वक अपनी पुत्री का विवाह उनके साथ कर दिया और फ़ातिमा जब अपने पति के घर आई तो इधर-उधर से मन हटाकर अपने पति के साथ ईश्वर-भजन में लग गई।

जब अहमद-खिजरविया मुस्लिम-जगत् के प्रसिद्ध संत बायज़ीद बस्तामी से मिलने गये तो उनकी बीवी फ़ातिमा भी उनके साथ थी। अब एक विचित्र परिस्थिति उठ खडी हुई। फातिमा फकीरों के प्रति स्वभाव से ही अनुरक्त थी और बायजीद अपने समय के माने हुए दिग्गज विद्वान संत थे। उनके प्रति उसका विशेष रूप से आकर्षित हो उठना कोई आश्चर्य की बात नही। पर लगता है, उसमें स्वतन्त्रता की भी काफी गहरी भावना थी अन्यथा वह खिज़रविया के पास ही विवाह के लिए दरख्वास्त करने का सन्देशा कैसे भिजवाती? वह किसी के रोब में आनेवाली भी न थी। उसने बायज़ीद से अपनी कुदरती बेबाकी (स्वाभाविक स्वतंत्रता) के साथ बाते करना शुरू की।

सत खिज़रविया को यह सब-कुछ बहुत अच्छा न लगा। वे बोले, "ऐ फातिमा, गैर मर्द से यो बेबाकी (निर्लज्जता) करना नखा (वर्जित) है।" फ़ातिमा ने उत्तर में कहा, "बात यह है कि जिस तरह आप मेरी तबियत के राजदार (जानकार) हैं और मेरे नफ़्स की ख़ाहिशे पूरी करते है, उसी तरह वह मेरी तारीकत के (आत्मिक-शुभ) राजदार है और मेरी बातिनी मुरादे (आत्मिक-इच्छाएँ) पूरी करते है, जिसकी वजह से मुझे दीदारे-इलाही हासिल होता है।" खिजरविया खामोश हो गए और फ़ातिमा की वह बेबाकाना गूफ्तगू (निडरता पूर्वक बात-चीत) कुछ दिन चलती रही। सौभाग्यवती होने से फ़ातिमा मेंहदी लगाती होंगी। एक दिन हाथ पर नज़र जो पड़ी तो बायजीद पूछ बैठे, "ऐ फ़ातिमा, यह मेहदी कैसी है?"

अब फ़ातिमा ने कहा, "आज तक आपने मेरे हाथ और मेंहदी को नही देखा था इसलिए मै आपके पास बैठती थी। अब मेरे लिए यहाँ बैठना हराम है।" ग्रंथकार अत्तार ने इस स्थान पर लिखा है, अगर कोई शख्स यह ख्याल करे कि उन्होंने बुरे ख्याल से उनकी तरफ़ देखा तो इसका जवाब यह है कि खुद उनका—बायज़ीद का कौल है कि औरत और दीवार मेरे सामने बराबर है। उर्दू अनुवादक का ख्याल है कि सम्भवतः बायज़ीद

ने जानबूझकर यह बात कही हो, क्योकि बाते करने से दोनो का ही भजन उतनी देर के लिए रुका रहता।

इस सिलसिले मे बायज़ीद की कितनी ऊँची धारणा थी, इसका उल्लेख कर देना समुचित होगा। बायजोद कहते थे, "जो शरूस मर्द को देखना चाहता है वह फातिमा को देखे। मर्द ओर जवामर्द, जैसा कि पीछे कई स्थानो पर अभिव्यक्त हो चुका है, असाधारण उत्कर्ष का द्योतक शब्द था इन संतो की भाषा मे। बायजोद के यहाँ से विदा होकर अहमद ख़िज़रविया अपनी धर्म-पत्नी के साथ नेशापुर आये। उनके आगमन से नेशापुर के लोग बहुत प्रसन्न हुए और सम्भवतः उनकी प्रेमपूर्ण प्रेरणा से इस नवागन्तुक दम्पति ने नेशापुर को ही अपना निवास-स्थान बनाया।

लिखा है, कि रात को उनके यहाँ चोर घुसा। ये देख रहे थे। फकीर के घर में था ही क्या, जो वह लेकर जाता। जब वह जाने लगा तो इन्होंने कहा, "आये हो तो यों खाली हाथ जाना ठीक नही। तुम यहां तमाम रात इबादत करो। मुझे जो कुछ मिलेगा वह तुम्हे दे दूगा।" उसने सारी रात इबादत की। सबेरे किसी अमीर ने सौ दीनार संत को भेट मे भेजे। उन्होंने वे दीनार उसके सामने रखकर कहा, "यह लो, तुम्हारी रात भर की इबादत का एवज है।" वह चोर अत्यन्त प्रभावित हुआ। बोला, "अफ़सोस है, मै उस पर्वरदिगार को भूला हुआ था, जो एक रात की इबादत में इतना देता है।" वह दीनार न लिये उसने। उनका मुरीद बना और बहुत ऊँचा उठा।

एक दरवेश इनके यहाँ मेहमान बनकर आया। रात को उसके सम्मान में इन्होंने सात चिराग जलाये। वह दरवेश बोला, "यह तकल्लुफ (दिखावा) तसव्वुफ के खिलाफ़ है।" इन्होंने कहा, "यह सब चिराग मैंने अल्लाह के लिए रोशन किये है, इसमें तकल्लुफ को दखल नहीं। अगर आपको यकीन न हो तो जो चिराग़ ख़ुदा के लिए न हो गुल कर दीजिए!" वह दरवेश रात भर चिरागों को गुल (बुझाने) करने में

लगा रहा पर एक भी चिराग गुल न हुआ। सवेरे इन्होंने दरवेश से कहा, "मेरे साथ आओ, तुम्हे उसके कुदरत का कुछ खेल दिखायं।"

दरवेश को साथ लेकर वह कलीसा[1] के द्वार पर पहुँचे। वहाँ पर कोई ग़ैर मुस्लिम भक्त बैठा हुआ था। उसने इनकी बड़ी ताजीम (मान-प्रतिष्ठा) की और दस्तरख्वान (भोजन के लिए बिछाने का वस्त्र) बिछाया और कहा, "आइये, हम लोग साथ मिलकर खाना खायं।" इन्होंने कहा, "खुदा के दोस्त उसके दुश्मनों के साथ खाना नही खाया करते।" इस बात का उसके दिल पर कुछ ऐसा असर हुआ कि वह तुरन्त ही मुसलमान होने को राजी हो गया। उसके साथ कुछ और लोग भी मुसलमान हुए जिनकी तादाद कुल मिलाकर सत्तर थी। रात को इन्होंने स्वप्न देखा कि अल्लाह कह रहा है, तूने मेरे लिए सात चिराग रोशन किये, उसके बदले में मैंने तेरे द्वारा सत्तर दिलों को नूरे-इलाही (प्रभु-ज्योति) से रोशन किया।

एक आदमी ने इनसे आकर कहा, "मै बहुत ग़रीब हूँ।" इन्होंने उससे तमाम पेशों के नाम अलग-अलग पर्चों पर लिखाकर एक बर्त्तन मे डाल दिये और फिर उसमे से एक पर्चा निकाला। देखा तो उसमे चोरी का पेशा लिखा हुआ था। ये बोले, "तुझे चोरी का पेशा अख्तियार करना चाहिये।" वह हैरान था। मगर उनकी बात मानकर चोरों मे शामिल हो गया। चोरो ने एक बहुत बडे अमीर को गिरफ्तार किया और उसे कत्ल करने को इस नये चोर से कहा। इसे क्या सूझी कि चोरों के सरदार को मार डाला और कैदी को रिहा कर दिया। उस अमीर ने शुक्राने में इतना माल दिया कि वह अच्छा-खासा अमीर हो गया।

लिखा है कि किसी शख्स ने देखा कि उम्दा रथ में सवार हो कर ये हवा में चले जा रहे है। उसमे सोने की जंजीरें लगी हुई हैं, जिन्हे पकड़कर फ़रिश्ते खीच रहे है। उसने पूछा, "इस शान-शौकत से आप कहां जा रहे हैं?" इन्होंने जवाब दिया, "दोस्त की मुलाकात को।" उसने इनसे कहा

---

१. एक यहूदी मन्दिर।

कि इस दर्जे पर पहुँचने पर भी दोस्त से मिलने की हाजत (इच्छा) हुई ? ये बोले, "अगर मै न जाऊँगा तो वे खुद मेरी मुलाकात को आयंगे और जो मर्तबा ज़ियारत करने वाले को मिलता, है, उसे मिलेगा।" कोई अपने पास चलकर आये इसकी अपेक्षा खुद ही जाकर उसके दर्शन करने में जो अधिक सबाब इस्लाम ने माना है वह याद रखने योग्य है।

एक बार ये किसी सूफी की खानकाह में पुराने कपड़े पहने हुए गये। उनके मुरीदों ने इन्हे हिकारत (घृणा) की नजर से देखा। होनहार, ये पानी भरने गये तो हाथ से छूट कर डोल कुएँ मे गिर पडा। यह सूफ़ी के पास पहुंचे और उससे बडी दीनता से इल्तिजा (प्रार्थना) की कि मेहरबानी करके दुआ कीजिये ताकि डोल निकल आये। वह सब हैरत में थे, "डोल निकालने के लिए दुआ ?" यह बोले, "अच्छा तो मुझे दुआ करने की इजाज़त महमत (दया-कृपा) फरमाइये।" सूफी ने इज़ाजत दे दी। यह दुआ करने बैठे और डोल खुद-ब-खुद कुएं की जगत पर आ गया। सूफी ने बड़ी इज्ज़त की। बोले, "मुरीदों से कहिये कि मुसाफ़िर को हिकारत से न देखे।"

यह अपने साथ यानी अपनी नफ़्स के साथ बहुत सख्ती से पेश आते थे। एक बार कुछ लोग जहाद को जाने लगे तो इनके नफ़्स ने भी इन्हें जहाद में शामिल होने की तरगीब (प्रेरणा) दी। इनका माथा ठनका। ज़रूर कुछ दाल में काला है—क्योंकि ऐसी बातों की ओर रगबत दिलाना नफ़्स का काम नही। इन्हे ख्याल आया, शायद नफ़्स ने समझा कि जहाद पर जाने से रोज़े और नमाज की सख्ती कुछ कम होगी और लोगों से मिलने-जुलने का मौका मिलेगा; पर यह बात न थी। दुआ की, नफ़्स के फरेब से मुझे आगाह किया जाय। ईश्वरीय प्रेरणा से नफ़्स ने ही बताया—मैंने सोचा तुम वहाँ जाकर शहीद होगे और मै रोज़ के बखेडों से छूटूगा।

एक बार वे बोले कि मैंने खल्क को बैल और गधे की तरह चारा खाते हुए देखा। लोगों ने पूछा, "क्या आप खल्क से अलग थे ?" बोले, "नही,

में भी उन्ही के साथ था। मुझमे और उनमे इतना फर्क था कि वह खाते थे और हंसते थे और—मैं खाता था और रोता था।" कहा, "जो शख्स सिद्क अख्तियार करता है अल्लाह उसके करीब होता है। ऐसा कहा गया है कि अल्लाह सादिको के साथ है। क्योकि सिद्क उसे सबसे ज्यादा अजीज है।"

उनकी कुछ सूक्तिये ये है—शिकायत करने वाला साबिर (संतोषी) नही होता क्योकि जो सब्र कर सकता है वह शिकायत क्यों करेगा। तोशा मुज्तरिबान (खाद्य सामग्री व्याकुलो) का सब्र है और दर्जा आरिफों का रज़ा है। अल्लाह को दिल से दोस्त रखना, और ज़ुबान से याद करना और सिवा उसके सबको तर्क करना मारिफत है। कहते, साहबे खुल्क को अल्लाह सबसे ज्यादा दोस्त रखता है। जो अल्लाह को ढूढता है उसे पाता है और ईश्वर-प्रेम के मानी ये है कि दुनिया की तमाम बातो को तर्क करदे और उसकी याद मे तल्लीन हो जाय।

वह कहते—कोई मालिक शहवत से कवी (बलवान्) नही लेकिन गफ़लत न हो तो शहवत गालिब नही हो सकती। बन्दगी आज़ादी में है। इन शहवतो और गफलतों से छूटे बिना आज़ादी कहाँ ? ज़िन्दगी और दुनिया की दरमियानी हालत में बसर करना चाहिये। उनके दिल की खुशहाली का इजहार करने वाली खुश-खबरी से भरी उनकी एक शानदार कहावत यह है—राह कुशादा (तंग) है और हक (सत्य) रोशन है और तालिब मतलब है। किसी ने नसीहत चाही तो कहा—नफ़्स को मुर्दा बना ताकि तू जिन्दा हो जाय।

उनकी यह एक महत्वपूर्ण सूक्ति है—जब दिल हक से पुर होता है तो उसकी रोशनी शरीर के अगो से व्यक्त होती है और जब बातिल अर्थात् असत् से पुर होता है तो उसकी तारीकी अर्थात्, आसुरी-वृत्ति शरीर से प्रकट होती है।

अहमद खिज़रविया कहते थे कि गफ़लत से ज्यादा बुरा कोई ख्वाब नही। (यह बात तुम्ही तो उनके मुह से कहते हो फिर तुम ही क्यों भूल

गए ? माना कि तुम गफलत मे नही हो, तुम यह प्रयोग-सा कर रहे हो कि असत्मयी सृष्टि कहाँ तक चलती है। लोग कहाँ तक इस तारीकी को झेल सकते है। यह भी हो सकता है कि इससे लाभ उठाकर तुम सत् की ओर चलो—एकदम सतोगुणी सृष्टि बनाओ। सुनो, एक राज की बात ! तुम इन वैज्ञानिको की तरह प्रयोग के झंझट मे न पडो। तुम तो बस इतना कहदो कि दुनिया अच्छी हो जाय और वह अच्छी हो जायगी।)

उनके जीवन की अन्तिम घटना अविस्मरणीय है। लिखा है कि उन पर ७० हजार दिरम का कर्ज़ था। यह ऋण, कर्ज ले लेकर खैरात करने मे हुआ था। इनका अन्त समय आया देख तमाम ऋणदाता इनके घर आ धमके और अपने कर्ज़ अदा कर देने का तकाज़ा करने लगे। इन्होंने दुआ की, "ऐ अल्लाह ! तू मुझे बुलाता है और मै इनके हाथ रहन हो चुका हूं। पहले इनका कर्ज़ चुका, फिर मुझे बुला।" कहते है, कि वे यह दुआ कर ही रहे थे कि दरवाज़े से आवाज़ आई—"कर्ज वाले बाहर आकर दाम ले जायं।" सब लोग बाहर गये और उनका सारा कर्ज़ चुका दिया गया।

: २० :

बशर हाफ़ी

बशर हाफ़ी का प्रारम्भिक जीवन अच्छा न था पर अपनी मदहोशी मे भी उन्होंने ईश्वर के नाम का जो सम्मान किया इसीके उपलक्ष्य में ईश्वर ने उन पर कृपा की और उनके जीवन मे वैराग्यमयी क्रान्ति की लहर ने प्रवेश करके उन्हे अन्ततः एक बहुत ही उच्च कोटि का संत बना दिया।

कहते है कि एक दिन जनून और मदहोशी की हालत में कही जा रहे थे। रास्ते मे एक कागज पर 'बिस्मिल्ला उर्रहमान उर्रहीम' लिखा देखा। उसे देख हाथ से उठाकर उसमे इत्र लगाकर उन्होंने सम्मानपूर्वक एक उच्च स्थान पर रख दिया। उसी रात किसी सत पुरुष को ख़्वाब में हुक्म हुआ कि तुम जाकर बशर हाफ़ी को यह खुशख़बरी दे आओ कि जिस तरह तूने हमारे नाम को इज्ज़त दे कर ऊँची जगह दी उसी तरह हम भी तुझे तमाम बुराइयों से पाक (पवित्र) करके आला मर्तबा अता (श्रेष्ठ दर्जा देंगे) करेंगे।

वह संत जब जागे तो ख़्वाब पर विचार करने लगे। सोचा, बशर-हाफ़ी तो ज़िंदीक (नास्तिक) और गुमराह (पथ-भ्रष्ट) है। यह ख़्वाब मैंने ग़लत देखा है। वह नमाज पढ़कर सो गए। फिर उन्होंने यही ख़्वाब देखा और फिर यही सोचकर सो गए। तीसरी बार जब फिर उन्हे यही हुक्म हुआ तो उन्होने बशर हाफ़ी को बुलाया। मालूम हुआ मयखाने (मदिरालय) में है। फिर आदमी भेजा तो मयख़ाने से खबर आयी कि वह मस्त (बेहोश) पड़े है। अब उन संत ने कहला भेजा कि उनसे कह दो, "एक शख़्स अल्लाह का पैग़ाम लाया है!"

सुनते ही बशर हाफ़ी उठ खड़े हुए। साथियों से विदा लेते हुए बोले, "अल्लाह ने न मालूम क्या अताब नाज़िल (श्राप दिया हो) किया हो। अब शायद मिलना न हो, अलविदा!" अल्लाह का पैग़ाम बाहर आकर जो सुना तो दिल में एक गुदगुदी भरी चोट-सी लगी। "आह! कहाँ मेरी यह जिंदगी और कहाँ उनकी यह रहमत। एक जरीसी बात के लिए जब मेरी इतनी इज्ज़त-अफ़जाई (मान-प्रतिष्ठा) की तो अब इस मेहरबानी के लिए उन्हे ज़िन्दगी से कम तो क्या दू? अब से यह ज़िन्दगी अल्लाह की हुई और अल्लाह की ही रहेगी।"

उन्होंने तौबा की। अपने सभी बुरे काम छोड़ दिये और बड़ी लगन के साथ खुदा की इबादत मे लग गए। खुदा ने उनपर मेहर की। शीघ्र ही उनकी साधना फल लाई और उनकी जिन्दगी लोगो के लिए कल्याण-मार्ग दिखानेवाली बन गई। खुदापरस्ती की उमग मे वह हमेशा नंगे पैर ही घूमते। इसीलिए लोग उन्हे हाफी कहते। नगे पैर रहने का सबब पूछा तो बोले, "जब मैंने तौबा की थी तब नंगे पैरो था, अब जूते पहनते शर्म आती है। अल्लाह ने कहा है, मैंने इन्सान के लिए ज़मीन का फ़र्श बिछाया है और बादशाह के फ़र्श पर जूते पहनकर चलना अदब (शिष्टाचार) के खिलाफ़ है।"

खुदा-परस्तों के लिए "नूरे-इलाही" उनकी आख का काम देता है और उनको सिवा खुदा के और कुछ नहीं दीखता। उन्हे पैर फैलाना भी बेअदबी-सी मालूम होती है। दरबार मे पैर फैलाकर भी क्या कोई कहीं बैठता है? बशर हाफ़ी को ज़मीन पर थूकने में भी कराहियत (घृणा) होती थी। जिस फ़र्शे ज़मीन को खुदा ने बिछाया है उस पर थूकना कितनी बुरी बात है।

इमाम अहमद हम्बल एक ऊँचे दर्जे के संत थे और वह अक्सर दीवाना-वार (पागलपन में) फिरनेवाले बशर हाफ़ी के साथ देखे जाते। उनके मुरीदों ने कहा, "आप इतने बड़े बुजुर्ग होकर एक दीवाने के साथ क्यों फिरा करते हैं?" इमाम ने जवाब दिया, "जो इल्म मुझे आते हैं वह यकीनन

(निश्चय ही) दीवाने से बेहतर जानता हूँ मगर वह दीवाना अल्लाह को मुझसे ज़्यादा जानता है।" अहमद जब हाफी से मिलते तो अरबी की एक सूक्ति द्वारा कहते, "मुझसे मेरे खुदा की बाते करो।" तब दोनो अपने हबीब की चर्चा मे महब (लीन) हो जाते और उन्हे पता भी न चलता कि कब सुबह हुई और कब शाम !

एक रोज कही बाहर जा रहे थे। एक पैर दरवाजे के बाहर था और एक पैर अभी अन्दर ही था कि उनपर हैरत तारी (जडता छा) हो गयी और वह तमाम रात यो ही दरवाजे मे खडे रहे। एक और दिन का जिक्र है कि बशर हाफी अपनी बहन से मिलने गये। कुछ सीढ़िया चढ़ी होगी कि उनपर जडता छा गयी। वह तमाम रात वही खडे रहे। जब सुबह हुई तो मस्जिद मे जाकर नमाज़ अदा की और फिर बहन के घर गये। बहन ने पूछा, "रात को तुम्हारा क्या हाल था ?" बोले, "मै सोच रहा था, सभी बशर यानी आदमी है। मेरा नाम भी बशर है फिर क्यों उन्होंने मुझपर इतनी इनायत (कृपा) की ? दूसरो को क्यों इस नेमत से महरूम (दयापूर्ण उपहार से वंचित) रखा ?"

इसी तरह सर्दी के मौसम मे एक संत उनसे मिलने गये तो देखा कि नंगे बदन खड़े मारे सर्दी के काँप रहे है। पूछा, "नगे होकर यह तकलीफ़ क्यों झेल रहे है ?" बोले, "मुझे ख्याल हुआ कि जो दरवेश मोहताज (अभिलाषी) है उनका इस सर्दी में न जाने क्या हाल होगा ! मेरे पास माल तो था नही जो उनकी मदद करता। इसलिए मुझे यही ठीक मालूम हुआ कि जिस्म से ही मै उनकी मुआफिकत करूँ यानी सर्दी सहने मे उनका साथ दू।" पूछा, "आपको यह मर्तबा कैसे मिला ?" बोले, "सिवा खुदा के मैंने अपना हाल किसी पर जाहिर नही किया।"

कहते है कि हदीस पढ़ने के बाद अपनी तमाम किताबों को ज़मीन में दफ़न (दबा) कर दिया और कभी कोई हदीस बयान न की। पूछने पर बताया कि मेरे दिल से अगर नामवरी (ख्याति) की ख्वाहिश मिट जाती तब मैं हदीस की चर्चा करता। इसलिए वह कभी वाज़ (उपदेश) न

देते और कहते वाज़ (उपदेश) देने की बजाय जो खुदा को नही जानता उससे खुदा की चर्चा करके चुपचाप इसके दिल में खुदा की मुहब्बत पैदा करना मैं कही ज्यादा अच्छा समझता हूं।"

किसी ने पूछा, "बग़दाद मे हलाल और हराम का लोग बहुत कम ख़याल करते है। आप कहाँ से खाते है ?" बोले, "जहाँ से तुम खाते हो ?" पूछा, "आपको यह मर्तबा कैसे मिला ?" बोले, "कम निवाला (अल्प भोजन) और हाथ को कोताह (छोटा) करने से।" बशर हाफ़ी कहते थे कि खाकर हंसनेवाले का दर्जा उससे कम है जो खाकर रोता है। कहते, "हराम तो हराम ही है मगर हलाल में भी फिज़ूलखर्ची अच्छी नही।" किसी ने पूछा, "सालन (भाजी) किस चीज का खाना चाहिए ?" बोले, "आफ़ियत (सुख-चैन) का सालन खाओ।" आत्मसंयम निश्चय ही जीवन की सबसे बडी सम्पदा है और बशर हाफी इस धन के धनी थे। जिस चीज़ के लिए दिल उतावली करता वह उसे न करते। बाकले की फलियों की सब्जी के लिए उनका दिल बहुत चाहता था पर उन्होने यह साग कभी न खाया।

बादशाह और काज़ी को संत लोग बहुत अच्छा नही समझते क्योंकि उनके हाथ मे न्याय-अन्याय की शक्ति है और भूल या प्रमाद से जाने या अनजाने में इनसे बडी भयंकर गलतियाँ हो सकती है। इसलिए वैराग्य-मयी वृत्ति के महात्मा इनसे किसी भी प्रकार का सम्पर्क नही रखना चाहते। बशर हाफ़ी उस नहर से, जो शाही नौकरों के लिए निकाली गई थी, कभी पानी न पीते। एक संत का लडका क़ाजी (न्याय-कर्त्ता) था। संत का नौकर एक दिन काज़ी के घर में मिलाने के लिए ख़मीर मांग लाया। संत जब भोजन करने बैठे तो उनकी उंगलिया ही काम न दे। नौकर ने ख़मीर की बात बताई तो कहा, "लड़का काज़ी है, उसके घर से कभी कुछ भी न लाना।"

संतों के जीवन में प्रायः विरोधाभास देखने मे आता है पर इससे उद्विग्न नही होना चाहिए। किसी ने लिखा है—"कभी न बोलने वाला

खूब बोलता है और कभी-कभी बोलने वाला मौन हो जाता है।" मौन और एकांत वृत्ति के समय संतों को यही स्थिति अच्छी लगती है। ख़ामोशी और किसी से कोई सरोकार न रखने की खूब प्रशंसा करते है पर जब वह अपनी साधना से बाहर आते है तो लोक-कल्याण के लिए उपदेश आदि भी देते हैं। हसन बसरी को रोता देख राबिया ने कहा था, "आंसू दिखावे के है तो उन्हे अन्दर ही रोक रखो ताकि उनकी तेज़ी मे तुम्हारा दिल डूब जाय और ढूढ़े से भी न मिले।" पर जब रोने का वक्त आया तो खुद राबिआ प्रेम के आँसू बहाती देखी गई।

हा तो, बशर हाफी एक मजमे में 'रजा-ए-इलाही' (ईश्वरेच्छा) का ज़िक्र कर रहे थे। किसी ने कहा, "आप सूफ़ी होने की वजह से ख़ल्क़ से कुछ नही लेते मगर कोई कुछ दे तो उसे लेकर गरीबों को दे दें और खुद रज़ा-ए-इलाही पर ही (गुजर) करे तो इसमे क्या हर्ज है?" साथियों को यह बात अच्छी नही लगी मगर बशर ने प्रसन्नमुद्रा में कहा, "अहले फ़ुक्र (फ़कीर) तीन तरह के है। एक तो वह जो मासिवा अल्लाह (मात्र प्रभु के) के किसी से कुछ नही लेते। वह रुहानियों (अध्यात्मवादियो) में है। दूसरे वह बीच के दर्जे (मध्य श्रेणी) के लोग है जो बिना मागे, जो मिल जाता है उसे ले लेते है। तीसरे वह है, जो सब्र करते है (आत्म-दमन और भजन में लगे रहते हैं)।

हज़रत अहमद-बिन-इब्राहीम का कहना है कि एक बार बशर हाफ़ी ने हज़रत मारूफ़ करखी को उनके द्वारा यह संदेश भेजा कि सुबह की नमाज़ के बाद वह उनसे मिलने आयंगे। अहमद ने मारूफ़ को यह संदेश पहुँचा दिया और खुद भी उनके आने का इन्तज़ार करते रहे पर वह आये नही। अहमद को आश्चर्य हुआ कि बशर जैसा बुजुर्ग वायदे का पक्का; आया क्यों नहीं। तब उन्होंने मस्जिद के दरवाज़े से नज़र उठाकर देख तो बशर को मुसल्ला उठाए दज्ले की ओर जाते पाया। दज्ले के पानी की सतह पर उन्होंने मारूफ़ से बाते की और सुबह तक बैठे रहे।

जब बशर पानी पर से वापिस आये तो अहमद ने उनके पाँव पकड़

लिये और दुआ मांगी। बशर ने उनके लिए दुआ तो की मगर कहा, "किसी से यह हाल जाहिर न करना" और अहमद का कहना है कि उनकी ज़िन्दगी के अन्दर उन्होंने यह बात किसी से न कही। मगर उनसे भी अधिक पोशीदगी (गुप्तता) के कायल (पक्षपाती) मालूम पड़ते है—संत अली जिरजानी। उन्हे एक चश्मे पर बैठा देखकर जब बशर उनके पास गये तो वह भाग खडे हुए यह कहकर कि आज मुझसे कोई बड़ा गुनाह हुआ है जो आदमी को देख लिया। बशर ने श्रद्धापूर्वक उनसे नसीहत चाही तो वह बोले, "फ़ुकर (फकीरी) को छुपाए रख। सब्र अख्तियार कर। नफ़सानी ख़्वाहिश (इन्द्रिय-मोह) छोड़ दे और अपना घर क़ब्र से ज्यादा ख़ाली रख ताकि दुनिया छोड़ने का अफ़सोस न हो।"

(अपनी साधना को गुप्त रखने की वृत्ति निश्चय ही अच्छी है क्योंकि व्यक्त करने से लोग प्रशंसा करते है और मन में अहंकार उत्पन्न होता है; पर इस सिद्धान्त का एक दूसरा पहलू भी है। जो बात प्रकाशित की जाती है वही प्रसारित होती है। संत तो अपने गुणों को प्रकाशित करते नही और अवगुणों का प्रसार बेतरह हो रहा है। इसीलिए समाज में दोषों की बाढ़-सी आ गई है। अहम्मन्यता के लिए नही, लोक-कल्याण की दृष्टि से संतों को अपने सत्कार्यो और सद्भावों को प्रकाश में लाना ही चाहिए। क्योंकि जो चीज लोग देखते हैं, सुनते है, पढ़ते है उसी पर अमल करते है। लोगों की वृत्ति छोटे बालकों की तरह अनुकरणशील होती है।)

अल्लाह पर तवक्कुल (ईश्वरेच्छा) बशर के जीवन की सुनहरी विशेषता थी। एक क़ाफ़िला शाम मुल्क से हज को जा रहा था। शाम देश के लोगों ने बशर से भी साथ चलने को कहा; मगर उन्होंने तीन शर्तें रखी। एक यह कि कोई शख्स ज़ाद सफ़र (मार्ग-व्यय) साथ न ले, किसी से मांगे नही और तीसरे अगर कोई कुछ दे तो कबूल न करे। काफ़िलेवालों ने कहा, "पहली दो शर्तें तो हम मानते हैं पर तीसरी शर्त हम अदा नही कर सकते कि मिलती हुई चीज छोड़ दें।" बशर बोले, तुम्हारा तवक्कुल हाज़ियों के ज़ाद सफ़र पर है। अगर तीसरी बात भी मान लेते

तो तवक्कुल अल्लाह पर होता और मरतब-ए-विलायत (वली का दर्जा) हासिल होता।

एक व्यक्ति ने कहा कि मेरे पास हजार दिरम है और चाहता हूँ कि हज कर आऊँ। बशर ने कहा, "हज करने से तो यह बेहतर है कि किसी कर्जदार का कर्ज चुका दे कि उसकी मुश्किले दूर हो और तुझे हज से ज्यादा सबाब (पुण्य) मिले।" वह बोला, "मेरा दिल तो हज करने को बहुत चाहता है।" बशर ने कहा, "तूने यह दौलत हराम की कमाई से हासिल की है इसलिए तू उससे ज्यादा सबाब हासिल नही कर सकता।" यह अच्छी सलाह थी। एक मोची ने तीन सौ दिरम मुसीबत मे पडे अपने पडौसी को देकर इतना सबाब कमाया कि उसकी बदौलत ही उस साल हाजियों को शफाअ़त (मोक्षदान) मिली।

एक बार बशर ने एक अजनबी (अपरिचित) आदमी को घर में देखकर पूछा, "तू कौन है?" वह बोला, "मै खिज्र हूँ।" बशर ने कहा, "मेरे लिए दुआ कीजिए।" खिज्र ने कहा, "अल्लाह इबादत तुझ पर आसान कर दे।" बशर ने कहा, "कुछ और कहिए", खिज्र ने कहा कि अल्लाह तेरी इबादत को तुझ से पोशीदा (गुप्त) रखे। (ये दुआ थी कि किसी राज का इन्कशाफ (भेद खुल जाना)?) स्वप्न मे मुहम्मद ने कहा, "ऐ बशर! तुझे कुछ मालूम है कि खुदा ने तेरा रुतबा तेरे साथियों से इतना ऊंचा क्यो किया?" बशर ने कहा, "मै नही जानता।" रसूल ने कहा, "इसलिए कि तूने लोगों को नेक नसीहतदी और मेरे असहाब (सज्जनों) और अहले-बैत (स्थान यानी काबा) से मुहब्बत पैदा की।" दूसरी बार स्वप्न मे रसूल ने बशर से कहा, "अमीर लोग शबाब (पुण्य) हासिल करने के लिए फकीरों पर जो शफ़क़त (दयालुता) करते है, वह अच्छी है; पर इससे भी अच्छी बात यह है कि फकीर अमीरों से कुछ न माँगे और सच्ची श्रद्धा के साथ खुदा पर ही भरोसा करे।"

बशर कहते थे कि जो भला बनना चाहता है वह इन तीन चीज़ों से दूर रहे—१. खल्क़ से हाजत तलब (आवश्यकता पूरी) करना। २.

दूसरों को बुरा कहना। ३. किसी के मेहमान के साथ जाना। जो दुनिया में अपनी नुमूद (ख्याति) चाहता है उसको आखिरत (परलोक) की हलावत (मिठास) नही मिलती। कनाअत (भाग्य पर सतोष) से सिर्फ़ दुनियाबी इज्जत (सासारिक-भान) ही हासिल होती तो भी कनाअत अच्छी थी। बोले—यह ख्याल कि लोग मुझे अच्छा जाने दुनिया की मुहब्बत की वजह से होता है। जब तक इन्सान अपने और नफ़्स के दरम्यान लोहे की दीवार का-सा पर्दा कायम नही करता तबतक इबादत की हलावत नही पाता। तीन काम बहुत मुश्किल है—मुफलिसी मे सख़ावत (उदारता), एकात मे पर्हेजगारी (इन्द्रिय सयम), ख़ौफ मे सच्चाई।

कहते—बन्दे को अल्लाह ने मारिफ़त (ईश्वर-भक्ति) और सब्र से अधिक अच्छी कोई वस्तु नही दी। जो शख़्स ख़ुदा के साथ दिल साफ रखे उसी को सूफ़ी कहते है। वह लोग आरिफ़ है, जिनको अल्लाह के सिवा कोई नही पहचानता और कोई उनकी इज्ज़त नही करता। जो आज़ादी का मज़ा चखना चाहता है उसे चाहिए कि अपने ख्याल पाक और दिल साफ़ रखे। बख़ील (लालची और कजूस) को देखकर इन्सान का दिल सख़्त हो जाता है। इन्सान को उस समय तक सकून (शाति) नही मिलता जबतक कि उसके दुश्मन उससे बेख़ौफ़ नही हो जाते। तकब्बुर (घमंड) और ख़ुदबीनी (आत्मश्लाघा) को दूर करके दिल मे तसव्वुर (कृतज्ञता-प्रकाशन को जगह) दे।

एक रहस्यभरी मीठी-सी सूक्ति इनकी यह थी, "अल्लाह ने अज़ल (अनादिकाल) मे तेरा ज़िक्र दोस्तो मे किया है? अब तू दोस्तों मे होने की कोशिश कर।" कैसा आश्चर्य है कि जिसने उस समय अपनी दोस्ती का सबूत दिया जब किसी और की दोस्ती काम न आ सकती थी, उसे भूलकर इन्सान दुनिया को दोस्त मान बैठता है। इस दुनिया की दोस्ती भी ठीक-ठीक तभी निभेगी जब वह दोस्तो का दोस्त दिल मे शाति से बैठकर प्यार भरी बाते करे। वह कहते—इन्सान तमाम उम्र शुकर (कृतज्ञता) के सिज्दे में पड़ा रहे तब भी हक़ शुकर का अदा नही

हो सकता। कोई जाने या न जाने यह ज़िन्दगी जामे-शुकराना (कृतज्ञता का घूँट) है।

बशर फ़क़ीर थे—देने के लिए उनके पास कुछ न था; मगर वह माँगनेवाला भला कब चूकता है। उनका आख़िरी वक्त था कि कोई आदमी आया और अपनी गरीबी की बात कहने लगा। बशर जो कपड़ा पहने हुए थे, वह उतारकर उसे दे दिया और और खुद किसी से लेकर कपड़ा पहना और उसी हालत में सद्गति पाई। अंत समय उनकी बेचैनी बढ गई थी। लोगों ने पूछा, "क्या आप दुनिया की ज़िन्दगी को दोस्त (लगावट) रखते है, नही तो बेचैनी क्यो ?" बशर ने कहा, "नही, मुझे अल्लाह के दरबार मे जाना है इसीलिए खौफ़ कर रहा हूँ।"

यह बात लोगों को अजीब-सी लगेगी मगर लिखा है कि बशर जबतक बगदाद मे रहे किसी जानवर ने राह मे लीद न की इसलिए कि वह नंगे पैर चलते है; कही नजासत (गंदगी) उनके पैरों में न लग जाय। एक दिन सरे-राह (बीच राह) एक चौपाये ने लीद की। उसका मालिक समझ गया कि आज संत बसरी ने अपनी लीला-संवरण कर ली। किसी को ख्वाब में बशर दिखाई दिये तो कहा, "खुदा ने नाराज़ होकर मुझसे कहा कि दुनिया में तू मुझसे इतना ज़्यादा डरता क्यों था ? क्या तुझे नही मालूम था कि मै करीम हूँ (दया और क्षमा मेरे भूषण हैं)।

एक दूसरे व्यक्ति ने स्वप्न मे उन्हे देखकर हाल पूछा, तो कहा, "खुदा ने मुझे बख्श दिया और फमाया तुझपर मर्हबा (तू धन्य है) इसलिए भी कि जब हमने तुझे दुनिया से उठाया तो कोई दुनिया में तुझसे ज़्यादा हमारा दोस्त न था।" बशर कहते, "दिल मेरा बादशाह है और उसकी रैयत (प्रजा) तक्वा (संयम) हैं। मुझ में यह ताकत नही कि बगैर इजाज़त सफ़र करूँ। जो दुनिया में, इस छोटी-सी ज़मीन पर उनके हुक्म के बगैर कही न आया-गया वह आख़िरत की कही बड़ी दुनिया में बिना हुक्म सफ़र करने की हिम्मत कैसे करता ?"

इमाम अहमद हम्बल के पास एक स्त्री एक प्रश्न लेकर हाज़िर हुई।

वह बोली, "मै कोठे पर बैठी सूत कात रही थी और शाही रोशनी रास्ते से गुज़री। मैंने उस रोशनी में थोड़ा-सा सूत काता पर मैं यह तय नही कर पा रही हूँ कि वह जायज है कि नही।" अहमद हम्बल ने स्वभावतः ही पूछा, "यह तो बता कि तू है कौन?" स्त्री बोली, "मै बशर हाफी की बहन हूँ।" हम्बल बोले, "तेरे लिए नाजायज़ हैं; क्योंकि तेरा खानदान पर्हेज-गारी का है। तू अपने भाई की पैरवी कर—वह ऐसे थे कि हराम की कमाई की रोटी सामने आने पर उनके हाथ ही काम न देते।"

: २१ :

बायज़ीद बस्तामी

बायजीद मुस्लिम-जगत् के एक बहुत ही उच्च-कोटि के पहुँचे हुए संत हुए है। उनके जीवन-निर्माण में उनकी माता बड़ी सहायक हुईं। उन्हे अपने पास रखकर स्वय उनकी देख-रेख करके नही, बल्कि अपने कलेजे पर पत्थर रखकर बचपन में ही उन्हेअपने से दूर करके उनकी इच्छानुसार ही उन्हे खुदा को सौपकर। बात यह हुई कि छुटपन मे जब उन्होंने एक आयत पढ़ी, जिसका भाव यह था—"तू माँ-बाप की और मेरी इज्ज़त कर।" तब उनके मन में यह विचार आया और वह मदर्से (शाला) के गुरु से आज्ञा लेकर अपनी माँ के पास घर आये।

बेवक्त उन्हे आया देख माँ ने पूछा, "बेटा, आज तुम जल्दी कैसे चले आये ?" बालक बायजीद बस्तामी ने कहा ? "माँ, आज मैंने एक आयत पढ़ी जिसमे खुदा कहता है कि मेरा और माँ-बाप का शुक्र करो। शुक्र तो खिदमत से ही हो सकता है। मुझे दो की खिदमत मुश्किल मालूम होती है। इसलिए या तो ऐसा कर कि तू मुझे खुदा से माँग ले ताकि मै तेरी खिदमत करूँ या फिर क़तई खुदा को ही सौप दे ताकि मै दिलोजान से उसकी खिदमत मे लग जाऊँ।" होनहार संत की ऊँचे दिलवाली माँ ने कहा, "जा बेटा, मैंने अपना हक छोड़कर तुझे खुदा के हवाले किया (ईश्वर को सौंप दिया)।

बालक बायजीद ने बस्ताम छोड़ दिया और मुल्क शाम के जंगलों में जाकर आराधना प्रारम्भ की। बहुत से संतों के उन्हे वहाँ दर्शन हुए। संस्कार अच्छे थे और दिन-रात मेहनत करके उन्होंने तीन साल में ही बहुत

कुछ पा लिया। जानकार लोगों का कहना है कि अद्वैत मे उनकी बहुत गहरी गति थी। वह उनके उस अद्वैत-ज्ञान का प्रारम्भ था—जहाँ बहुत-से ज्ञानी जाकर रुक गए, आगे न बढ सके। जुनैद बगदादी नाम के मशहूर संत उनकी तौहीद (ईश्वर को एक मानना) के कायल थे। बायजीद खुद कहते थे, "दो सौ साल तक इल्म हासिल (ज्ञानोपार्जन) करने में लोग लगाएँ, तब कही शायद उन्हे कोई ऐसा फूल मिले जैसे कि मुझे शुरुआत मे ही बहुत-से मिले।"

हज करने चले तो चन्द कदम चलकर नमाज पढते। इस तरह रुक-रुक कर नमाजे पढते हुए बारह साल मे मक्का पहुचे। अक्सर कहते कि खुदा का दरबार कुछ दुनिया के शाहों (राजाओ) का दरबार तो है नहीं कि उठे और दरबार में पहुँच गए। उसकी राह तो विनम्रता और प्रेम भरी प्रार्थना के साथ तै करनी चाहिए। लोग जब मक्का जाते है तो मदीना के दर्शनो को भी जरूर जाते है क्योकि वहाँ हजरत मुहम्मद की कब्र है। पर बायजीद ने कहा, "मै मक्का के तुफैल (हेतु) मे मदीना न जाऊगा। मै खुद मदीना के दर्शनो के लिए कभी चलकर आऊँगा। दूसरे साल मदीना की यात्रा पर निकले तो बहुत से लोग साथ हो लिये। उन्होंने प्रार्थना की कि या खुदा, मुझे इन दुनियावालो के साथ से दूर रख। फिर एक दिन सवेरे की नमाज के बाद लोगों की ओर देखकर वह आयत पढी जिसका अर्थ है: "मै खुद खुदा हूँ, मेरी ही परस्तिश (पूजा) लोग करते है।" लोगो ने समझा, यह दीवाने हो गए है और उनका साथ छोड दिया। अब यह अकेले सफर करने लगे। रास्ते मे एक खोपडी पडी मिली जिसपर कुछ लिखा देखकर चीख मार कर बेहोश हो गए। जब उठे तो उसे चूमा और कहा, "यह किसी सूफी का सिर मालूम होता है, जो याद मे इतना महब (लीन) है कि न किसी की बात सुनता और न किसी से बोलता है और न किसी को देखता है।"

जू-उल-नून मिस्री ने एक शिष्य को भेजकर इनसे कहला भेजा, "तुम रात को सोते और ऐशोआराम करते हो, यहाँ तक की काफ़िले से बिछुड़

जाते हो।" इन्होंने जवाब में कहा, "जो रात भर सोए और ऐश करे और काफ़िले से बिछुड जाय और फिर काफ़िले वालो से पहले अपने मंज़िले-मक़सूद (अभीष्ट लक्ष्य) तक जा पहुँचे वह कामिल (फकीर) है।" ज़ू-उल-नून ने यह सुनकर कहा, "यह मर्तबा जिसे अल्लाह ने अता किया है, उसे मुबारिक हो।" मदीना के सफर मे एक ऊँट साथ में था, जिस पर बेहद असबाब लदा देखकर लोगो ने शिकायत की। आप बोले, "जरा गौर से देखो।" लोगो ने देखा, "सामान ऊँट की पीठ से ऊँचा है।"

जब मदीना के दर्शन हो गए तो दिल में ख्याल आया कि अब माता के दर्शन करने चाहिए और वहाँ से वह बस्ताम की ओर रवाना हो गए। फ़जर की नमाज के वक्त मकान पर पहुँचे। कान लगाकर सुना तो मालूम हुआ कि माता वुज़ू कर रही है और यह दुआ माग रही है, "ऐ अल्लाह, मेरे मुसाफ़िर (यात्री यानी मेरे बेटे) को आराम मे रखना और बुज़र्गों को उससे राजी रखना और नेक बदला उसे देना।" सुनकर दिल भर आया। बहुत देर बैठे रहे और फिर दरवाजा खटखटाया। माता ने पूछा, "कौन है?" बोले, "तुम्हारा मुसाफिर।"

माँ ने दरवाजा खोला। जैसे गाय बड़छे के लिए हुमकती है वैसे ही माँ बड़े प्रेम से मिली और बोली, "तुमने सफ़र मे बहुत दिन लगा दिये। तुम्हारी मुहब्बत मे रोते-रोते मेरी आँखों की रोशनी जाती रही और मेरी पीठ गम की वजह से झुक गई।" बायजीद कहते कि जिस काम को मै सबसे पीछे जानता था, वह सबसे अव्वल (प्रथम) निकला और वह थी मेरी माँ की खुशनूदी। वह यह भी कहते कि खुदा ने जो-कुछ मेहर मुझ पर की, इल्म (ज्ञान) और मारिफत (प्रभु-भक्ति) मुझे हासिल हुई वह सब माँ की मुहब्बत भरी दिली-दुआ से ही।

भगवान किसी का हक नही छीनते। बायजीद की माँ ने अपना हक छोड़कर उन्हे जो बचपन मे ही खुदा के हवाले कर दिया था, उसका एक बहुत अच्छा बदला उन्होंने चुकाया। कहते है कि बायजीद को बहुत कुछ मिला कर एक पहेली उनकी अनबुझी ही रही और वह बुझी उस सर्दी की

रात को, जब पानी की सुराही लिये वह रात भर माँ के सिरहाने खड़े रहे और उनके हाथ ठड से ठिठुर गए। सोते से जागकर माँ ने पीने को पानी माँगा; मगर उस वक्त घर में पानी बिल्कुल न था। वह सुराही लेकर नहर पर पानी भरने गये।

जब तक वह पानी लेकर लौटे तब तक माँ फिर गहरी नीद में सो गई। वह सुराही लिये माँ के सिरहाने बहुत देर तक खड़े रहे। जब माँ की नीद खुली तो उन्होने पानी पिलाया। माँ ने कहा, "बेटा, तुम इतनी देर तक खड़े क्यों रहे?" बायजीद ने कहा, "मैंने सोचा आप जागे और पानी तैयार न मिले तो आपको तकलीफ होगी।" एक बार और भी ऐसी ही बात हुई। खुद बायज़ीद ने लोगों से इसका ज़िक्र किया। रात को जगाकर माँ ने कहा, "एक किवाड खोल दो", यह कहकर वह सो गई। दाहिना किवाड खोलने को कहा है कि बाया, इसी फिक्र में रात भर खड़े रहे, माँ ने सुना तो बड़ी दुआएँ दी।

वह जब नमाज पढ़ने जाते तो अक्सर दरवाजे पर खड़े होकर रोया करते। लोगों ने कारण पूछा, तो कहा, "मैं अपने-आपको देखता हूँ तो अज़हद नापाक (अत्यत अपवित्र) पाता हूँ और डरता हूँ कि कही मेरे अन्दर जाने से मस्जिद नापाक न हो जाय।" एक बार हज के इरादे से गये तो कुछ मंजिलों तक जाकर बस्ताम वापस आ गए। लोगों ने पूछा, "यह आपने कैसी अजीब बात की कि बिना हज पूरा किये रास्ते से ही लौट आय?" बोले, "रास्ते में मुझे एक जंगी (सैनिक) मिला। उसने कहा, घर लौट जा, खुदा को तो बस्ताम में छोड़ आया और हज को जा रहा है। उसकी बात सुनकर मैं लौट आया।"

जब वह इबादत करने बैठते तो मकान के तमाम सूराख बन्द कर देते कि कहीं बाहर की किसी आवाज़ से उनके ध्यान में बाधा न पड़े और दिल याद से ग़ाफ़िल न हो जाय। बस्ताम के रहनेवाले किसी नामी संत का कहना था कि तीस साल तक मै इनके साथ रहा; मगर कभी आपको बात करते न देखा। सदा अपना सर घुटनों पर टेके रहते और

जब सिर उठाते तो एक आह भरते और फिर सिर को घुटनों पर रख लेते।

सत अबु मूसा ने पूछा, "खुदा की राह में आपको कौन-सी बात सबसे मुश्किल मालूम हुई।" वे बोले, "खुदा की मदद के बिना उसकी ओर दिल को ले जाना मुझे सबसे मुश्किल मालूम हुआ और जब उनकी रहमत हुई तो दिल बिना मेरी किसी कोशिश के उनकी ओर रुजू हुआ और मुझे उनकी ओर खीचने लगा।" फिर बोले, "चालीस साल तक मैंने वह चीजे न खाई, जो अक्सर लोग खाते है, मुझे ताकत कही और से ही मिलती रही। चालीस साल तक दिल की निगहबानी (देख-भाल) की, तीस साल तक अल्लाह की तलाश को तब देखा कि तालिब (इच्छुक) वह है और मै मतलूब (इच्छित)।"

एक बार एकात मे इनके मन से यह कलमा निकला—"सुभानी माआजम शाफी" (अर्थात् मैं महान् और पवित्र हूँ)। यह शब्द ईश्वर को ही शोभा देते है इसलिए शिष्यों ने जब उनसे इसका जिक्र किया तो बोले, "अनजान मे मेरे मुह से ये अल्फाज (शब्द) अगर फिर निकले तो तुम दो टुकडे कर देना।" दूसरी बार जब फिर उन्होने यों ही कहा तो शिष्य उन्हे मारने दौडे; मगर उन्होने देखा कि मकान भर मे बायजीद-ही-बायज़ीद हैं। वह छडी मारते तो ऐसा लगता कि पानी पर छडी मारते हो और कुछ देर मे सूरत भी ग़ायब।

उन्होने बारह साल तक अपने मन को तपस्या की भट्टी मे जलाकर मुजाहिदा (हठयोग) की आग से तपाया और मलामत (भर्त्सना) के हथौडे से कूटा। उसके बाद उनका नफस (इन्द्रिय—अंतःकरण) आइने की तरह हो गया। फिर पाँच साल तक उसमे उन्होंने अपने-आपको देखा और भांति-भाति की आराधनाओ की कली उसपर की। फिर एक बार जब उन्होने उसपर ऐतबार (विश्वास) की नजर डाली तो खुदपसन्दी (स्वाभिमान, आदि) के ज़न्नार (यज्ञोपवीत) उसके गले मे पडे देखे। फिर पाँच साल असीम श्रम करके उन आत्म-विश्वास जागृत दोषो को दूर किया और फिर से मनको ईश्वरार्पित किया।

वह कहते थे कि इस तरह सच्चा मुसलमान बनकर जब मैंने दुनिया पर नजर डाली तो सबको मुर्दा पाया। उन सब पर नमाजे-जनाजा (अर्थी पर पढी जानेवाली नमाज) पढ़कर मैं दुनिया से इस तरह दूर हो गया जैसे जनाजे के नमाजी जनाजे-नमाजा पढकर कयामत (प्रलय) तक के लिए उससे दूर हो जाते है। तिस पर भी उन्हे एक बार गुमान हुआ कि मैं अपने जमाने का बहुत बड़ा शेख हूँ। खुरासान जाते वक्त तीन दिन तक वह एक मंजिल पर ही ठहरे रहे और इबादत की कि ऐ अल्लाह, जबतक तू मुझे अपनी असली हालत से आगाह नही कर देता तबतक मै आगे न जाऊँगा।

चौथे दिन बायजीद ने देखा कि एक काना आदमी ऊँट पर सवार उधर आया। ऊँट की तरफ देखकर उन्होने ठहरने का इशारा किया तो ऊँट के पैर जमीन मे धँस गए। वह शख्स, जो ऊँट पर सवार था, बोला कि क्या तू चाहता है कि मै खुली आँख बद करके अपनी बन्द आँख खोलू और शहर बस्ताम को बायजीद सहित डुबा दू ? यह सुनकर बायजीद बदहवास (व्याकुल) होकर बोले, "आये कहाँ से आय है ?" वह शख्स बोला, "जब तुमने अल्लाह से आगे न जाने का अहद (वचन) किया था तब मै यहाँ से तीन हजार फरलाग की दूरी पर था, वहाँ से आ रहा हूँ," और फिर यह कहकर, "तू अपने दिलकी निगहबानी कर और खबरदार होजा", वह शख्स गायब हो गया।

(इस कहानी से तो ऐसा अर्थ निकलता है कि कोई कितनी ही साधना क्यों न करे, हज़ार वर्ष की तपस्या के पश्चात् भी मन के प्रति असवाधान होना खतरे से खाली नही। कितना ही साफ़ क्यो न हो आइना अगर वह बराबर साफ़ होता न रहेगा तो उस पर धूल जम ही जायगी। इसी प्रकार तपः-सिद्ध मानव के मन को भी प्रकृति-जन्य-संसर्ग-दोष से बचाए रखने के लिए ब्रह्म-दर्शन और भक्तिभाव से प्लावित करते रहना चाहिए।)

एक बार अपने शिष्यों सहित एक गली में से जा रहे थे। सामने से एक कुत्ता आ रहा था। उसे देखकर वह एक ओर हट गए। उनके पीछे उनके शागिर्दों को भी हटना पड़ा। एक शागिर्द के यह पूछने पर कि आपने

कुत्ते की इतनी इज्जत क्यो की ? बोले, "उसने मुझे पूछा, क्या सबब है कि वह तो अजल (अनादि काल) मे कुत्ता बना और मै संत ? मुझ में क्या खासियत थी और उसका क्या गुनाह था। मैने दिल मे कहा, यह खुदा की मेहर थी कि उसने मुझे कुत्ते पर फ़जीलत (श्रेष्ठता) दी और इसीलिए मैने उसके लिए राह खाली कर दी।"

एक बार राह मे कुत्ते को देखकर अपना दामन समेट लिया। कुत्ते ने कहा, "आपने दामन क्यो समेटा ? अगर मुझसे दामन भी छू जाता तो आप उसे धो सकते थे पर यह जो नखवत (वर्गजनित घृणा) आपने की इसे तो सात दरियाओं का पानी भी दूर नही कर सकता।" बायजीद बोले, "तू सच कहता है। तुझमे अगर बाहरी, तो मुझमे अन्दरूनी नापाकी है, सो हम-तुम साथ रहे ताकि मुझमे भी कुछ पाकीज़गी (पवित्रता) आ जाय।" कुत्ते ने कहा, "हमारा साथ रहना नामुमकिन है, क्योकि मै नफरतजदा (घृणायोग्य) हूँ और आप पाक समझे जाते है।" फिर एक चुटकी-सी लेकर उसने कहा कि मै दूसरे दिन के लिए हड्डी नही रखता, आप अन्न लाकर जमा करते है। बायजीद बोले, "जब कुत्ते के ही लायक नही तब खुदा की खुदाई (ईश्वर-सान्निध्य) कैसे मिलेगी ?"

बायजीद कहते है कि एक बार मुझे अपने बारे मे कुछ शक हुआ और सोचा कि अब मै जन्नार खरीद कर बाँधू। बाजार मे आकर जन्नार की कीमत पूछी तो दूकानदार ने हजार दिरम कहा। मैने गर्दन झुका ली। गैब से आवाज आई कि तुम -ऐसे लोगो को हजार दिरम से कम का ज़न्नार नही लेना चाहिए। मेरा वह शक दूर हो गया और समझ गया कि खुदा की मुझ पर मेहर है।

बायजीद से लोगो ने पूछा, "आपका पीर कौन है ?" बोले, "एक बुढिया।" फिर एक घटना सुनाई कि एक बार मै जगल में था। एक बुढ़िया आटे का बोझ सर पर रखे हुए आई और मुझसे कहा, मेरा यह आटा घर पहुँचा दे। इतने में एक शेर दिखाई दिया। मैने वह आटा शेर की पीठ पर रख बुढ़िया से कहा, तू इसके साथ जा। यह आटा पहुँचा देगा।

और फिर पूछा, तू घर जाकर क्या कहेगी ?" बुढिया बोली, "मै कहूँगी कि आज जंगल मे खुदनुमा जालिम (घमडी और निर्दयी) से मिली।" पूछा, "क्यो ?" बोली, "तूने शेर को बेसबब तकलीफ़ दी, इसलिए जालिम; और तू दुनिया को दिखाना चाहता है कि शेर भी तेरे बस में है, यही खुदनुमाई, और सबसे बडा ऐब है।"

बुढ़िया की यह बात बायजीद के मन को लगी और मन-ही-मन उन्होने उसे अपना गुरु मान लिया। इसके बाद जब कोई चमत्कारी घटना उनके जीवन मे संघटित होती तो उसकी सात्विकता का प्रमाण वह ईश्वर से चाहते। ऐसे समय पीला प्रकाश प्रकट होता और उस रंग में पाँच पैगम्बरों के नाम हरे रंग मे लिखे नजर आते। तब वह समझते कि यह करामात जायज है; क्योकि अक्सर शैतान सतों को गुमराह करने के लिए तमाशा दिखाकर उनके दिल में अहंकार पैदा करता है।

अहमद खिजरविया अपने शागिर्दो के साथ उनसे मिलने आये तो उनका एक शागिर्द, जो हवा पर उडता और पानी मे चलता था, इज्जत के ख्याल से बाहर ही खडा रहा। वह बोला, "मै यहाँ आपकी चीजों की रखवाली करूगा क्योंकि मुझमें उनके दीदार की ताब नही। बायजीद ने कहा, "तुम्हारे शागिर्दो मे, जो सबसे अच्छा है, वह तो आया ही नही, उसे भी बुलाओ।" जब उसे बुलाया तब वह आया। फिर बायजीद सन्त अहमद से बोले, "कब तक यों ही घूमते रहोगे। जो मुकीम (स्थिर) है वह सफ़र से कैसे मिलेगा ?" अहमद बोले, "यह उसूल है कि पानी एक जगह ठहर जाता है तो बदरग और बदबूदार हो जाता है।" वह बोले, "क्यों न दरिया बन जाओ कि न रग बदले और न बू पैदा हो।" फिर उन्होंने अहमद से मार्फत (द्वारा) की बाते की।

इतने में सन्त अहमद पूछ बैठे, "मैंने आपके घर के पास शैतान को सूली पर चढ़े देखा। उसका क्या माजरा है ?" बोले, "मैंने उससे अहद (वचन) ले लिया था कि बस्ताम मे न आवे। मगर वह अहद को भूलकर आदमी को बहकाने बस्ताम आया। इसकी सजा में सूली पर चढ़ा है।"

इतने में किसी ने पूछा, "यह आपके पास इतनी औरतें कैसे है ?" बोले, "यह औरतें नही फरिश्ते है, जो अक्सर इल्मी मसले (प्रश्न) पूछने आते है।"

इन्ही सन्त अहमद का कहना है कि जब मुझे ईश्वर के दर्शन हुए तो उन्होंने मुझसे कहा कि और लोग तो अपनी-अपनी ज़रूरत की चीजे मुझसे मागते है मगर बायज़ीद मुझसे मुझे ही तलब (माग) करता है। एक इमाम मिलने आये। दोनो ने साथ मिलकर नमाज पढी। फिर इमाम ने बायज़ीद से पूछा, "आपकी रोजी का कोई जरीआ तो दीखता नही, फिर आप कहा से खाते है ?" बोले, "फिर से नमाज पढकर जवाब दूगा।" इमाम ने आश्चर्य से कहा, "फिर नमाज क्यो ?" बोले, "जो रोज़ी देने-वाले को नही जानता उसके पीछे पढी हुई नमाज़ कबूल नही होती।" बायज़ीद का यह जवाब निहायत वाजिब था (बहुत ही समुचित था)।

बायजीद पर जब कोई मुसीबत आती तो वह प्रेम भरे स्वर मे कहते, "या अल्लाह ! तूने रोटी दी है तो सालन भी दे ताकि उसे अच्छी तरह से खाऊँ", (अर्थात् यह मुसीबत तेरी दी हुई है तब उसको सहन करने की शक्ति यानी सब्र भी दे !)। एक आदमी को मस्जिद मे नमाज़ पढ़ते देखकर उससे कहा, "अगर तू समझता है कि यह नमाज अल्लाह तक पहुंचायगी तो तू गलती पर है। अगर नमाज छोड देगा तो काफिर हो जायगा और जो नमाज की वजह से तकब्बुर करेगा तो मुशरिक (जो ईश्वर को एक नही मानता) हो जायगा। तो मुझे भूखे रहने के सिवा कुछन ही मिला, जो मिला सो उसकी रहमत से मिला; अपनी कोशिश से नही।"

एक बार इन्हे इल्हाम (देव-वाणी) हुआ कि खिदमत और इबादत तो बहुत है, ऐसी चीज़ को अपनी साधना बना जो हमारे खजाने मे नही है। बोले, "या अल्लाह, ऐसी कौन-सी चीज़ है जो तेरे खज़ाने में नही है।" हुक्म हुआ कि बेचारगी (दीनता) और इज्ज (सम्मान) यानी विनय हासिल कर; क्योंकि यह चीजे हमे पसन्द है और जिनके पास यह होती है उन्हे हम अज़ीज़ रखते है। (इस प्रेमालाप मे भक्तों के लिए बड़ा ही सुन्दर संकेत है कि उसकी साधनाएँ ऐसी है जिससे अहंकार ही बढ़ता है और

निरहंकारिता या निरभिमानता भक्त के सर्वोत्तम आभूषण है और वह भगवान को बहुत प्रिय है)।

उनका शिष्य कह रहा था कि मुझे उस पर हैरत (आश्चर्य) है जो अल्लाह को जानता है और उसकी इबादत नही करता। वह बोले, "मुझे उस इसान पर हैरत है जो अल्लाह को पहचानने के बाद उसकी इबादत करता है यानी अल्लाह को जानकर होश मे कैसे रहता है!"

वह कहते—मैं पहली बार जब हज को गया तो खान-ए-काबा को देखा। दूसरी बार जब हज को गया तो न काबा दीखा न मालिके-काबा, यानी हर बार यादे-इलाही (प्रभु-स्मरण) मुझे अधिक होती गई। वह कहते—मेरी सारी उम्र इस खाहिश मे ही गुजर गई कि कोई नमाज़ ऐसे प्यारे भरे दिल से पढ़ू कि कबूल हो जाय। मगर यह खाहिश अब-तक पूरी न हुई। सारी रात नमाज पढता इसी ख्याल से कि शायद अबकी बार की नमाज कबूल के काबिल हो। आखिर सबेरे के वक़्त कहते—जैसा भी है मुझे उन्ही मे शुमार कर ले। कहा—चालीस साल रियाजत (श्रम) के बाद हिजाब (रहस्य) का पर्दा पूरा हुआ तो मैंने राह चाही। हुक्म हुआ, टूटी हुई बधनी और फटी हुई पोस्तीन जब तक तेरे पास है तबतक वह न मिलेगी और दूसरो को भी यह बात सुना दे।

यहा कुछ सूक्तियाँ दी जाती है—अल्लाह पहले जमीन के शिकश्ता-दिलो (निराश) मे रहता है। इसलिए पहले आस्मान यानी फरिश्ते पहले ज़मीन से शिकश्ता-दिलो को ढूढ़ा करते है। तमाम खल्क को बख्श देने की इबादत करने पर मालूम हुआ कि हर किसी के साथ एक शफ़ीअ (सिफ़ारिशी) है और खुदा उनपर मुझसे ज्यादा मेहरबान है। शैतान पर रहमत करने को कहा तो सुना—वह आग का है। आग को आग ही बेहतर है। किसी ने पोस्तीन मांगी तो कहा—तू मेरी खाल भी ले ले तो भी फायदा न होगा जबतक मेरे जैसे ही अमल न करेगा। एक दिन बोले, "अल्लाह मेरी ओर नजर कर।" उत्तर मिला, "बायजीद, तेरे ऐमाल?" बोले, "नज़र से ऐमाल (कर्म) खुद ही अच्छे हो जायंगे।"

बायजीद ने दिल को ढूंढा तो आवाज आई, "हमारे सिवा दूसरे की तलाश न कर। तुझे दिल से क्या काम ?" एक उनकी सूक्ति है—मुर्दा वह नही जो किसी चीज की तलाश करे बल्कि मुर्दा वह है जो चीज उसे दरकार हो खुद ही उसके पास आ जाय। कहा—जिनके दिलों को अल्लाह ने मारिफत का बोझ उठाने वाला न पाया उन्हे अपनी इबादत मे लगा दिया॥ आशिक का इश्क ही की तरफ देखना बुरा है और मतलूब के सिवा और कुछ मागना नारबा है। एक ऐसा इल्म है, जिसे आलिम नही जानते और एक ऐसा जुहद है जिसे जाहिद नही जानते।

सूक्ति—बातचीत आज पर्दे के बाहर है। (पर्दे के अन्दर शाति और आनन्द है)। अच्छे काम से अच्छो की सोहबत अच्छी है और बुरे काम से बुरों की सोहबत बुरी है। आरिफ़ (ज्ञानी) अपने को जाहिल (मूर्ख) और जाहिल अपने को आरिफ कहता है। आरिफ सिवा विसाले-हक (प्रभु-मिलन का अधिकार) के किसी चीज से खुश नही होता ! हुर्मत (मर्यादा) की निगाहदाश्त (देख-रेख) करनेवाला अल्लाह तक पहुचता है। जैसा हो वैसा ही जाहिर करे या जैसा जाहिर करे वैसा ही हो जाय। नफ़्स और दिल पर हमेशा नजर रखो।

सूक्ति—ख्याल था कि मै अल्लाह को दोस्त रखता हूँ मगर मालूम हुआ कि मै नही, वह मुझे दोस्त रखता है। लोग रियाजत (श्रम) पर नज़र करते है; पर मै अल्लाह पर नजर करता हूँ ! लोगों ने मुर्दों से इल्म सीखा, मैंने ऐसे जिन्दे से सीखा जिसे मौत नही। "तूने यह काम क्यों किया ?" कयामत मे यह पूछे जाने से बेहतर यह होगा कि यह पूछा जाय, "यह काम तूने क्यों नही किया ?" पूछा, "मै तेरी राह मे कैसे आ सकता हूं।'?" हुक्म हुआ, "खुदी छोडकर आ सकता है।"

लोगों ने पूछा, "आप भूखे रहने की तारीफ़ करते हैं ?" कहा, "फ़रऊन भूखा रहता तो खुदाई का दावा न करता।" लोगों ने कहा, "आप हवा और पानी पर चलते है।" बोले, "यह सब कुछ नही, मर्द वह है, जो सिवा खुदा के किसी से दिल न लगाय।" बोले—मै वह समन्दर

हूं जिसकी इब्तिदा और इन्तिहा (आरंभ और अंत) और गहराई का पता नही। किसी ने पूछा, "आस्मान क्या है?" कहा, "मै हूँ।" पूछने वाला पूछता जाता था और वह कहते जाते थे, "इब्राहीम, मूसा और मुहम्मद मै हूँ।" फरिश्तो का नाम लिया तो कहा, "यह सब भी मै ही हूं।" कहा—जो हक मे फ़ना (नष्ट) हो जाता है वह सबको अपने मे पाता है, क्योकि सब कुछ हक ही है।

: २२ :

यहिया-बिन-मुआज़ राज़ी

सत यहिया की दिमागी ऊंची उड़ानों का नमूना उस उत्तर मे मिलता है, जो उन्होने अपने एक भाई का खत पाने पर भेजा था। उनके यह भाई भी फकीरी तबियत के थे। और उन्होंने काबा की मुजाविरी (दरगाह की सेवा करनेवाला) को अपनी जिन्दगी का काम बनाया था। खत मे भाई ने लिखा, "मेरी तीन तमन्नाएँ (कामनाएँ) थी, दो पूरी हो गई। दुआ कीजिए कि तीसरी भी पूरी हो।"

भाई की पहली इच्छा यह थी कि वह किसी पाक जगह (पवित्र तीर्थ-स्थान) पर निवास करे। काबे के मुजाविर होने से यह इच्छा तो पूरी हो ही गई। दूसरी इच्छा थी सेवा-अर्चा मे बाधा न पड़े, सो खिदमत के लिए खुदा ने एक दासी दे दी, जो वुज़ू के लिए पानी ला देती थी और वह खुश थे। उन्होने अन्त मे लिखा, "अब सिर्फ एक तमन्ना बाकी है, मौत से पहले आपको देखूं। दुआ करे, यह भी पूरी हो।"

सन्त यहिया ने भाई को जवाब मे लिखा, "आदमी को खुद पाक होना चाहिए। उसके पाक होने से उसके रहने की जगह भी पाक हो जाती है। दूसरे, आपको खादिम (सेवा करने वाला) बनना चाहिये न कि मखदूम (सेवा करानेवाला—पूज्य)। तीसरे, अगर आप अल्लाह से ग़ाफ़िल न होते तो हर्गिज़ मे आपको याद न आता। अल्लाह को याद कीजिए और भाई-बहन, औलाद को तर्क कीजिए। अगर आप अल्लाह को पा लेंगे तो मुझसे सरोकार न रहेगा और अगर अल्लाह को न पाया तो मुझी को मिलने से क्या फ़ायदा होगा ?"

वह खौफ और रजा पर अक्सर बोलते। खौफ, (अर्थात्, ईश्वर का भय और रजा अर्थात्, ईश्वर की कृपा में विश्वास)। वे कहते, "बहिश्त पैदा करने से ज्यादा अल्लाह का यह अहसान है कि उसने दोज़ख पैदा की; क्योंकि अगर दोज़ख का खौफ़ न होता तो कोई इबादत करके बहिश्त के लायक नही होता।" दुनिया इबादत की जगह है और बन्दा भय और विश्वास के बीच हमेशा सोचता है न मालूम मैं ज़िन्नती (स्वर्ग का अधिकारी) हूं कि नहीं। वे कहते, "गुनाह न करो, यही एक बड़ी इबादत है।"

उन्हे खुद खुदा का कितना खौफ रहता इसका पता एक छोटी-सी घटना से लगता है। एक बार उनके मकान का चिराग हवा से गुल हो गया (बुझ गया)। उनके दिल मे ख्याल आया कि कही ईमान और तौहीद (अद्वैतवाद—ईश्वर को एक मानना) का चिराग भी इसी तरह बेनियाजी (स्वछदता) की हवा के झोके से गुल न हो जाय और वह ज़ार-ज़ार रोने लगे। इनके एक लडकी थी। उसने मा से कोई चीज मागी। मा ने कहा, "ऐ लडकी, अल्लाह से माग।" बेटी बोली, "दुनियाबी चीजे अल्लाह से माँगते हुए मुझे शर्म आती है।"

एक बार सत यहिया कही दावत मे गये। अपने स्वभाव के अनुसार उन्होने बहुत कम खाना खाया। लोगो ने और खाने के लिए आग्रह किया तो बोले, "ज्यादा खाने से नफ्स कवी (बलवान) होता है और इबादते-इलाही (प्रभु-उपासना) मे कमी होती है।" अपने भाई के साथ सफर करते हुए एक देहात के पास पहुचे तो भाई ने कहा, "यह देहात अच्छा है।" सत यहिया ने उत्तर दिया, "इससे ज्यादा वह दिल अच्छा है जो यादे-इलाही की वजह से अच्छी अच्छाई का ख्याल न करे!"

किसी ने कहा—दुनिया मौत के सामने एक दाने से भी ज्यादा हेच (तुच्छ) है। बोले, "अगर मौत न होती तो दुनिया बिल्कुल बेकद्र होती!" और एक आयत सुनाई, "मौत मिस्ल उस पुल के है जो हबीब को हबीब (प्रेमी को प्रेमी) के पास पहुँचाता है।" अपने किसी दोस्त को उन्होने लिखा,

"दुनिया ख़्वाब है और आख़िरत (परलोक) उस ख़्वाब से जागना यानी बेदारी है। अगर इन्सान ख़्वाब मे रोए तो बेदार होकर हंसता है। बस तुम दुनिया में ख़ौफ़े-इलाही (प्रभु-भय) से रोना इख्तियार करो ताकि आख़िरत मे हंसो!"

वे कहते—"जब तक तीन बाते इन्सान मे नही होती; अक़्लमन्द नही होता। एक ख़ालिक (सृष्टिकर्त्ता) पर एतमाद (पूर्ण विश्वास)। २ ख़ल्क से बेनियाजी (बेपरवाह होना)। ३. अल्लाह की याद करना।" बोले, "अगर मौत फ़रोख्त (विक्रय) की जाती तो आख़िरत वाले सिवा मौत के कुछ न ख़रीदते।" कहा—यह तीन बाते अक़्लमन्दी की निशानी है—(१) नसीहत की नजर से अमीरों को देखना न कि हसद से; (२) शफ़कत (ममता—आत्मीयता) की नजर से औरतों को देखना न कि शहवत (कामेच्छा) से, (३) तवाजय—इज्जत की नजर से दरवेशों को देखना न कि घमड से।

वे कहते कि अगर मैं दोजख़ का मालिक बना दिया जाऊं तो किसी आशिक (प्रेमी) को न जलाऊं इसलिए कि आशिक रोजाना अपने को सौ बार जलाता है। किसी ने कहा, अगर उसके गुनाह बहुत हों? कहा—फिर भी न जलाऊं क्योकि उसके गुनाह इजतरारी होते है न कि इख्तियारी (आतुरता-वश वह दोष करता है, जान-बूझकर वह गुनाह नहीं करता) और कहा—जो अल्लाह से खुश होता है तमाम चीज़े उससे खुश होती हैं और जिसकी आँख जमाले-इलाही (प्रभु-ज्योति) से रोशन होती है, तमाम जहान की आंखे उसके दीदार से रोशन होती है।

उनकी सूक्ति है—अल्लाह के गुनाह करने से जो शर्म रखता है अल्लाह उसपर अजाब करने में शर्म रखता है। बोले—बन्दे की हया (शर्म), नदामत (पछतावा) की हया और अल्लाह की हया करम (कृपा) की हया होती है। बोले—बन्दे को जिस कदर मारिफ़त (प्रभु-प्रेम) होती है उसी कद्र उसे करम यानी कृपा की उम्मीद होती है।

इसलिए वे कहते हैं—अल्लाह के साथ सब नेक गुमानों से ज्यादा नेक

गुमान रखना ऐमाले-शाइस्त और मुराकिबा के साथ अच्छा है। यह फ़ारसी मुहावरे का अस्पष्ट-सा अनुवाद है जिसका भाव यह है—(ईश्वर की अपार कृपा पर अगाध विश्वास रखना और सद्भावपूर्ण आशा विश्वास से कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है। पर साथ ही भगवान को प्रसन्न करनेवाले शुभ आचरण करते रहना चाहिए और अपने मन को समाधिमय ध्यान मे तल्लीन रखना चाहिए। मतलब यह कि सद्कर्म सद्भाव से और असत्-कर्म असद्भाव से उत्पन्न होते है।)

वे कहते—"बडे ही घाटे मे रहता है वह जो बुरे कामों मे अपनी जिन्दगी बसर करता है। उन्होंने एक अच्छी-सी चेतावनी दी है यह कह कर कि जो गुप्त रूप से दुष्कर्म करता है, ईश्वर उसे सबके सामने जलील करता है। दुनिया से इब्रत (सीख) न हासिल करना नादानो (मूर्खो) का काम है। इबादत में ज़्यादा वक्त सर्फ़ करो और लोगों से कम मिलो। साथ ही सावधान किया है—अल्लाह को दोस्त रखनेवाले का नफ़्स उसका दुश्मन होता है।

कहा—आरिफ वह है जो सिवा खुदा के किसी को दोस्त न रखे; खौफ़ दिल (भयभीत मन) में एक दरख्त है, जिसका फल दुआ और जारी है अर्थात् जिसके दिल में ख़ौफ होता है वह या तो दुआ करता है या उसके दरबार मे अपने गुनाहों की माफी के लिए रोता है। बोले—इबादत की ज़ीनत ख़ौफ़ है और खौफ तर्के-आर्जू (इच्छा-त्याग) को कहते है। कहा—तवाजो (आदर-सत्कार) करना बडी पहेंज़गारी है और ऐबों से अमल को (कर्म को दोषों से) बचाना इख़लास (निष्कपट-प्रेम) है। शहवत से बचना शौके-इलाही (प्रभु -प्रेम) है।

ख़ौफ तर्के-आर्ज़ू है—यह बात कुछ बहुत स्पष्ट-सी नही मालूम होती पर इसमें नुक्ता है बडे मार्के का। जिसके दिल में ख़ौफ होगा क़यामत का, जिसकी आँख के सामने दोज़ख़ की आग धधक रही हो वह आसाइश (सुविधा) की जमीन में उगने वाली आर्ज़ुओं को, तमन्नाओं को, कामनाओं और वासनाओं को कब अपने दिल में जगह दे सकेगा? जिसके मन में

कामनाएँ और वासनाएं उठती है। मानना होगा कि उसके अदर वस्तुतः ख़ौफ है ही नही।

इस भय की भावना को पोषित करने के कुछ तरीके थे और इस भय के दिल मे रहते दुनिया एक दम ही, और सचमुच ही बिल्कुल नाचीज-सी मालूम पडे तो कुछ आश्चर्य नही। इस ख़्याल की रोशनी मे, वैसे अस्वाभाविक-सी लगने वाली वह भयकर विरक्ति कुछ समझ में आती है। संत यहिया कहते थे—दुनिया की कीमत एक दम के गम से भी कम है। दुनिया शैतान की दुकान है, इससे डर। और दुनिया शैतान की शराब है इसे न पी।

और कहते—जाहिद वह है जो दुनिया तर्क करे। दुनिया गम और अन्देशा है और उकबा (परलोक) जजा (बेसब्री) और सजा है। कहते—दुनिया हासिल करने मे जिल्लत और उकबा हासिल करने मे इज्जत है। आर्जू दुनिया की अल्लाह से गाफिल कर देती है। कहा—तीन शख़्स अक्लमन्द है.—१. तारके-दुनिया (ससार-त्यागी) २ तालिबे-उकबा, (परलोक-इच्छुक), ३ आशिके-हक (सत्य-प्रेमी)। कहते—दीनार और दिरम बिच्छू है और उनका मन्त्र यह है कि हलाल जरीआ (द्वारा) से पैदा करे और हक (सचाई) काम मे सर्फ (व्यय) करे।

वे कहते—मालदार को मरते समय दो मुसीबतें पेश आती है—एक यह है कि उसका माल दूसरे ले लेते है और दूसरी यह कि उससे माल का हिसाब पूछा जाता है। दुनिया का तालिब (इच्छुक) ज़िल्लत में, आखिरत का तालिब इज्जत मे, हक का तालिब आराम मे है। इबादत का ज़ाहिर करना नारबा (अनुचित) है। (ये शायद इसलिए कि इससे मन दुनिया की ओर जाता है और दुनियावालो के सम्मान से मन में गर्व पैदा होने की आशंका है।)

उनकी यह सूक्ति कुछ बाकपन से भरी हुई है कि मुतकब्बिर से तकब्बर करना ऐसा है जैसे मुतवाजय से तवाजय। (घमण्डी के प्रति यथोचित स्वाभिमान से पेश आना उनकी दृष्टि में उतना ही श्रेयस्कर है, जैसा

विनयी सज्जन पुरुष के प्रति विनय और उदारता से पेश आना और निश्चय ही यह श्रेयस्कर हो सकता है यदि उससे घमण्डी की आँख खुल जाती है और अपने को बेहद बडा समझने की उसकी आदत छूट जाती है।)

कम खाना, कम सोना और कम बोलना भी और सन्तों की तरह यहिया की साधना का मूल-मंत्र था। वह खुद तो कम खाते ही थे पर कहते थे कि ज्यादा खानेवाला बहुत जल्द शहवत की आग मे जल जाता है। भूख शरे-आजा (अगोद्भव विपत्तियो) से महफूज (सुरक्षित) रखती है। वे कहते—भूखो रहना नूर (ज्योति), पेट भर खाना नार (आग) है, पर साथ ही सावधानी की दृष्टि से यह आवश्यक बात कह रहे है—भूख और खाना हक (सचाई) है। और सादिक सत्यवादी इसमे बल पाते है।

एक अच्छी बात उन्होने यह कही है—अपने उन्स (ईश्वर-प्रेम) पर खिलवत मे नजर कर कि तेरा उन्स अल्लाह की तरफ खिलवत मे है! अगर तेरा उन्स खिलवत के साथ होगा तो बाद खिलवत के जाता रहेगा और अल्लाह के साथ होगा तो कभी जाइल (विमुख) न होगा।

इससे सन्त यहिया का आशय यह है कि एकान्त मे तो भगवान का भजन होता है, प्रेम उमडता है पर वहाँ से हटते ही मन और-का-और हो जाता है तो निश्चय ही यह बात सोचने योग्य है। इशारे से वह बताते है, तुम्हारे ईश्वर-प्रेम के साथ एकान्त का प्रेम मिश्रित हो गया है। निस्सग निर्लिप्त ईश्वर-प्रेम सर्वत्र समरस है।

संत यहिया की मुनाजात (प्रेमपूर्ण प्रार्थनाएँ) भी बडे मार्मिक और दिल को छूनेवाले है। भगवान को कृपालु और क्षमाशील कहकर मधुर ढग से अपने गुनाहों के माफ कर दिये जाने की आशा व्यक्त करते हुए कहते, "ऐ अल्लाह! फ़रऊन ने खुदाई का दावा किया और तूने मूसा को उससे भी नरमी से बात करने का हुक्म फर्माया।" जो अपने को रब कहे उसके साथ जब तू इतनी कृपा दिखाता है तो जो तुझे अपना रब मानकर दिल-ही-दिल सदा तेरी परस्तिश (पूजा) करता है उस पर तू जो लुत्फ़ करेगा, उसे भला कौन जान सकता है!

कहते—ऐ अल्लाह ! मेरी मिल्क (सम्पत्ति) मे सिवा एक पुरानी कमली के कुछ नही है; लेकिन अगर यह कमली कोई मागे तो दे दूगा। फिर तू अपनी रहमत से, जिसकी इन्तिहा सिवा तेरे कोई नही जानता, कब अपने तालिबो को महरूम रखेगा ? ऐ अल्लाह ! तेरा कौल है कि नेकी करने वाले को उसकी नेकी से अच्छा बदला मिलता है। मै तुझ पर ईमान लाया हू और इससे अच्छी कोई नेकी दुनिया मे नही है। इसके बदले मे तू सिवा अपने दीदार के क्या देगा ?

कहते—ऐ अल्लाह, जैसे तू किसी से मुशाबा (सदृश) नही, वैसे ही तेरे काम भी दूसरो के काम से मुशाबा (अर्थात् उनके सदृश) न होंगे। क़ायदा है तालिब मतलूब को खुश करना चाहता है तब कैसे सभव है कि तू अपने भक्तों को अजाब और बला मे फसाए इसलिए कि तुझसे ज्यादा कोई दोस्त रखनेवाला नही है। ऐ अल्लाह, जो हिस्सा मेरा दुनिया मे हो, कुफ़्फ़ार (नास्तिको) को दे और जो हिस्सा मेरा आखिरत मे हो, वह मुसलमानो को दे। मुझे दुनिया मे तेरी याद और आखिरत मे तेरा दीदार काफी है।

उनकी एक चोज-भरी प्रार्थना यह थी—ऐ अल्लाह, मै गरीब हूँ और तेरा जिक्र गरीब है, क्योकर उसे दोस्त न रखू ? ज़िक्र को गरीब कहकर उसके साथ दोस्ती करने की बात मे एक गहरी सूझ, एक मजेदार बारीकी है। गरीब का अर्थ है बे-वतन, परदेसी, अपने घर से दूर परदेस में फिरनेवाला मुसाफिर। इन्सान गरीब है, वह अपना असली वतन छोड़कर इस फानी (नाशवान) किसी की न होने वाली दुनिया में आ पडा है।

वे कहते—अल्लाह का खजाना ताअत (विनयपूर्वक ईश्वरीय आज्ञा का पालन) करना है। और दुआ उसकी कुजी है। तौहीद नूर है और शिर्क-नार (दोजख़) आग है। नूरे तौहीद गुनाहों को जला देता है और शिर्क की आग नेकियों को जला देती है। तौहीद अगले-पिछले गुनाहों को महव-(नष्ट) कर देती है। कहते—विरा (त्याग) तो तरह का है, सिवा खुदा

के सबसे बेपरवाह हो जाना, यह जाहिरी त्याग है। दूसरा त्याग बातिनी (आतरिक) है, दिल में सिवा खुदा के किसी के लिए जगह न रहना। कहा—अल्लाह की पनाह (आश्रय) और अमन मे होने का नाम ही तवंगिरी यानी अमीरी है।

उनके जीवन की अन्तिम घटना श्रद्धा-वर्द्धक और शिक्षाप्रद है। लोगों से ऋण ले-लेकर वह हाजियो, फकीरो, सूफियो, गाजियों और आलिमो की सहायता करते रहे। जब एक लाख दिरम का ऋण हो गया तो ऋण-दाताओं ने ऋण चुकाने के लिए सख्त तकाजे करने शुरू किये। जुम्मा की रात को स्वप्न में उन्होंने रसूल को देखा कि कह रहे हैं—"ऐ यहिया, रज न करो। तुम सफ़र करो, शहर-ब-शहर वाज करो। मै एक शख्स को ख्वाब मे हुक्म दूगा कि वह तुम्हे तीन लाख दिरम दे दे। बेफ़िक्र रहो, वक्त पर तुम्हे मिल जायगा।"

संत यहिया ने नेशापुर के प्रवचन मे इसका उल्लेख किया तो श्रोताओं में से एक ने पचास हजार, एक ने चालीस हजार और एक ने दस हज़ार दिरम देने को कहा। यहिया बोले, "मै तुम लोगों के ये दिरम नही ले सकता; क्योकि हजरत रसूल ने कहा है कि एक ही शख्स कुल कर्ज अदा कर देगा।" शहर बलख मे वह तवंगरी (अमीरी) पर बोले। एक शख्स ने लाख दिरम भेट किये, पर एक बुजुर्ग ने कहा, "तुमने तवंगरी की फज़ीलत (श्रेष्ठता) दरवेशी पर बयान की, यह नाजेबा (अनुचित) है।" रात में डाकुओं ने वो लाख दिरम लूट लिये। बोले, "यह उस बुजुर्ग के कहने का असर था।"

यहिया का यह ख्याल ठीक था, पर रसूल ने तो तीन लाख दिरम की बात कही थी और वह हुई भी पूरी मुल्क हरी मे। उनके प्रवचन मे उस देश की शाहजादी उपस्थित थी। वह बोली, "जब आपको रसूल ने कहा, उसी रात को उन्होंने मुझे भी ख्वाब में आपका कर्ज चुकाने को कहा और यह भी फर्माया, वह खुद यहाँ आयगे, तेरे वहाँ जाने की जरूरत नही।" शाहज़ादी के कहे से चार दिन रहकर उन्होंने चार वाज दिये। पहले

मे दस, दूसरे दिन पच्चीस, तीसरे दिन चालीस और आख़री दिन पूरे सत्तर आदमी जान-ब-हक-तस्लीम (अपने प्राण प्रभु को अर्पण करनेवाले) हुए।

सत यहिया जब विदा हुए तो अमीरे-हरी की शाहजादी ने सात ऊँट दिरम से भरे हुए भेट किये। जब घर पहुचे तो अपने पुत्र से कहा कि कर्ज चुकाने के बाद जो कुछ बचे वह सब दरवेशो को दे ो। मेरे लिए कुछ न रखना। मेरे लिए अल्लाह की जात काफ़ी है। यह कहकर वह मुनाजात (ईश्वर-स्तुति) मे मशगूल (व्यस्त) हो गए। मगर आश्चर्य, किसी ने उनके सर पर पत्थर मारा! वक्त आ गया था। देर न करके उन्होने अपने सामने कर्ज अदा कराके शेष धन फ़कीरो और दरवेशो मे बंटवा दिया और फिर निश्चित होकर अपने प्यारे प्रभु से जा मिले।

: २३ :

अबु हफ़्स हदाद

निश्चय ही यह एक निहायत शानदार संत हुए है और इनकी बुजुर्गी गैरमामूली (असाधारण) दर्जे की रही है, जिसका एतिराफ (मान्यता) जुनैद-जैसे संतो को भी खुले दिल से करना पडा। मगर इनकी जीवनी के प्रारम्भ मे ही एक खास बात अत्तार ने यह कही है कि इनको कश्फ के मरातिब बे-वास्ता हासिल हुए (आत्म-ज्ञान के भेदो की प्रतिष्ठा सहज ही प्राप्त हुई) और इसीमे इनके जीवन की उच्चता की कुंजी है। अपने बल पर नही, अपने आराध्य की कृपा के बल पर ही यह इतने अच्छे बने, इतने ऊचे उ ।

कीचड मे उगे हुए कमल की तरह इनकी आध्यात्मिक ज़िन्दगी का आगाज (उदय) मजाजी-इश्क (वासनामय प्रेम) की एक मामूली कहानी से होता है। यह किसी कनीज (दासी) पर बेतरह (अत्यधिक) आसक्त थे। उन दिनों नेशापुर में एक नामी जादूगर रहता था। उसके पास जाकर इन्होंने अपना हाल बयान किया। वह इबादत तब भी करते थे। इबादत और जादू का मेल नही। इसलिए उसने कहा, पहले तुम चालीस दिन इबादत तर्क (त्याग) करो, फिर मेरे पास आना। तब मैं जादू करूँगा। इन्होंने ऐसा ही किया।

चालीस दिन के बाद जब यह जादूगर के पास पहुँचे तो उसने बहुत कोशिश की, मगर उसके जादू ने कुछ असर न किया। वह बोला, "मालूम होता है, इन चालीस दिनों में तुमने कोई नेक काम किया है, जिसकी वजह से मेरा जादू काम नही करता।" सत बोले, "मैंने कोई नेक काम तो

नही किया। हाँ, इतना जरूर हुआ कि जिस रास्ते में जाता उसमें जो कंकर-पत्थर मुझे पडे मिलते उन्हे उठाकर मै एक ओर रख देता ताकि किसी के ठोकर न लगे।"

अब वह कारसाज जादूगर बोलता है, "अफसोस है कि तुम ऐसे खुदा की याद नही करते, जिसने मामूली नेक काम को कबूल करके जादू के असर को बेकार कर दिया और तुम्हारी चालीस दिन की नाफर्मानी (अवज्ञा) का कुछ ख्याल न किया।" आसक्तिमग्न सत के दिल पर जादूगर के इन शब्दो ने मार्मिक चोट की। वह सर्वथा विरक्त होकर दिलोजान से भगवान के भजन मे लग गए।

हदाद लोहार को कहते है और चूकि यह पेशा लोहारी का करते थे इसीलिए हदाद कहलाए। मगर इनकी यह लोहारी भी खूब थी। यह अपने पेशे से रोज़ एक दीनार कमाते थे। और रात को किसी दरवेश को देते थे या अनाथ विधवा स्त्रियो के घर मे इस तरह फेक आते कि किसी को कोशिश करने पर भी यह पता न चलता कि कौन यह दीनार उनके घर मे फेक गया है। एक मुद्दत तक इन सत हदाद का यही रवैया रहा।

हदाद मेहनत तो करते, अपनी मेहनत के द्वारा दीनार भी कमाते; मगर वह दरवेशो को बाँटने या चुपचाप गरीबों के घरो मे फेक आने के ही लिए। और खुद क्या करते? शाम की नमाज़ पढ़कर भीख माँगने निकलते या गिरा-पडा साग बीनकर उसे ही पकाकर खा लेते। लाखों का दान करनेवाले तो इतिहास मेंब हुत से मिलेंगे, पर इस नमूने का आदमी और कोई सुनने में नही आया।

कौन जाने, उनके इस भीख मांगने मे भी एक मसलहत (रहस्य) न रही हो? जब वह किसी के घर पर भीख माँगने जाते तो इनकी खुदा-परस्त आँखे चुपचाप उसकी माली हालत का, मुमकिन ही क्यों, कहना चाहिए यक़ीनन जायजा (अनुमान) लेती होंगी और जब कोई अनाथ बालक या झुकी कमरवाला, सिन-रसीदा (बड़ी आयु) बेरोज़गार बुज़ुर्ग

अपने हिस्से की रोटी देने आता तो खुदा कान मे कहता होगा कि कल कहाँ उसका दीनार फिके !

उनके मुरीद तो थे और इस सिलसिले में अबू-उस्मान हैरी के नाम का उल्लेख अन्नार ने किया है; पर उनके पीर कौन थे, इसका जिक्र ग्रन्थकार ने नही किया। वह भूल गए हो, ऐसा मानना तो ठीक न होगा, पर वस्तुतः ऐसे लोगो का गुरु वही होता है, जो गुप्त ही रहना पसद करता है और उसीने एक सूरदास को एक आयत पढ़ते हुए इनकी दूकान की तरफ भेजा और यह बेखुद हो गए उस आयत को सुनकर।

"ज़ाहिर हुआ उन पर अल्लाह की तरफ से वह अमर(भेद), जिसका उनको गुमान (भ्रम) भी न था—यह दिया गया है उस आयत का अर्थ ! बडी निर्दोष-सी है यह आयत; मगर बेचारे लोहार के दिल पर शायद घन-की-सी चोट पडी। नही, यह कहना ठीक होगा कि इसको सुनकर किसी ऐसे मीठे राज का इजहार उनके दिल मे हुआ कि वह बेकरार नही, बेखुद हो गए, उनकी चेतना देहाध्यास से हटकर किसी ऐसे स्तर पर जा बैठी कि लोक का भान होते हुए भी देह की ओर से बेभान-से हो गए।

दूकान पर तो वह बैठे ही थे ओर अपना काम कर रहे थे कि इस बेखुदी के आलम (आत्म-विस्मृत दशा) मे उन्हे न जाने क्या सूझी कि जलता हुआ लोहा आग से निकालकर अपने हाथ पर रखा और शागिर्दों से कहा, "इसे कूटो।" शिष्य यह हाल देखकर चकित थे। जब होश आया तो वह जलता हुआ लोहा अपने हाथ मे देखा। उसे फेककर तमाम दूकान लुटा दी। गोशानशीनी इख्तियार (एकातवास धारण) करके इबादत और रियाजत (उपासना और तपस्या) में लग गए।

हदाद जिस मोहल्ले मे रहते थे उसमे एक उपदेशक उपदेश दिया करते थे। और उसमें वह हदीसे बयान करते। तमाम लोग हदीसे सुनने जाते। किसी ने इनसे भी कहा, आप भी चलकर सुनिए। बोले, "तीस साल हुए जब मैंने हदीस सुनी थी। उस पर पूरे तौर पर अमल करना चाहा, मगर मेरी वह ख्वाहिश अभी तक पूरी नही हुई।" पूछने पर बताया, "वह हदीस

यह है—हराम (त्याज्य या वर्जित) तर्क करना ही हुस्ने-इस्लाम (इस्लाम की श्रेष्ठता) है।

संत अबु हफस हदाद जैसे बाअदब (शिष्ट) थे वैसा ही अदब वह अपने शागिर्दो को सिखाते थे। उनके मित्रों का कहना है कि बीस साल हम उनके साथ रहे; लेकिन कभी बेखत्री के साथ खुदा को याद करते नही देखा। जब अल्लाह को याद करते तो निहायत ताजीम और हुरमत (सम्मान और मर्यादा) के साथ। इसलिए इनका शिष्यो पर इतना रोब था कि इनके सामने न कोई बात कर सकता था न इनकी ओर नजर उठाकर देखने की उनकी हिम्मत होती थी।

बिना उनकी इजाजत के उनके पास बैठने की किसी को जुर्रत (साहस) न थी। इसीलिए उनके मुरीद अक्सर हाथ बाँधे सामने खडे रहते। जुनैद ने यह शान देखकर शायद शिकायत और ताने के तौर पर कहा, "मुरीदों (भक्तों) को आदाबेशाही (राजसी शिष्टाचार) सिखाते है।" बोले, "सरनामा (पत्र का सबोधन) देखा, उसीसे खत का मजमून (विषय) जाहिर हो जाता है।" अच्छा-सा था यह जवाब! कौन-सा शाही दरबार अल्लाह के दरबार से ज्यादा बाअदब (शिष्ट) हो सकता है और जहाँ वली-अल्लाह है, वही अल्लाह का दरबार है।

इसी दिली अदब की साधना से ही एक कहानी का इजहार (रचना-प्रकट) यों हुआ : हदाद ने कहा, "ऐ जुनैद, जेरवा (एक तरह का पकवान) और हलुवा तैयार कराओ।" जब दोनो चीजे तैयार हो गईं तो कहा, "एक मजदूर को बुलाकर इन चीजो का थाल उसके सिर पर रखाओ और उसे कहो कि जबतक न थके, लिये ही चला जाय और बिल्कुल थक जाय तो करीब जो मकान हो, वहा ठहरकर आवाज दे और वही इन चीजों को दे आय।"

मजदूर के साथ एक मुरीद भी पीछे-पीछे चला। वह मजदूर जहां तक चल सका, चला। जब बिल्कुल थक गया तो करीब एक मकान था। उसकी कुंडी खटखटाई। अन्दर से किसीने आवाज दी कि अगर जेरवा और

हलुवा दोनो हों तो मै बाहर आऊं। एक बुजुर्ग बाहर आए और दोनों चीज़े ले ली। मुरीद, जो कि मजदूर के पीछे-पीछे गया था, यह हाल देखकर बडा चकित हुआ और उस बुजुर्ग के करीब आकर पूछा, "यह क्या माजरा है ?"

बुजुर्ग बोले, "बहुत दिनों से मेरे लडके मुझसे जेरवा और हलवा मांगते थे। मैने ख्याल किया कि अल्लाह से मांगने की क्या जरूरत है। वह खुद ही भेज देगा। और सचमुच भेज दिया।" उस शख्स ने अल्लाह का अदब (मान) किया और उसका असर यह हुआ कि बहुत बडे वली को इशारा हुआ कि अब वक्त आ गया है कि उन बच्चों की खाहिश पूरी हो और मजा यह है कि मजदूर बेपते के चलता है और वही पर जाकर थकता है।

इस अदब के साथ हदाद के यकीन की कहानी एक नया चोज पैदा करती है। बगदाद से कही जा रहे थे। रास्ते मे सहरा था। सोलह दिन तक कही पानी न मिला। उसके बाद एक नहर के किनारे पहुचे और बिना पानी पिये खामोश बैठे थे। इतने में वरुशी अबु-तराब उधर से आ निकले। उन्होंने पूछा, "किस फिक्र में बैठे हैं ?" सब बात बताकर बोले, "मेरे इल्म और यकीन (ज्ञान और विश्वास) मे बहस हो रही है। अगर इल्म गालिब (विजयी हुआ) आया तो पानी पीऊंगा और यकीन जीता तो बिना पानी पिये आगे बढ़ूंगा।"

इस इल्म और यकीन को जरा समझने की जरूरत होगी। अगर्चे ये मुबाहिसा (विवाद) अमूनन (प्रायः) हर शख्स की जिन्दगी में दरपेश (उपस्थित) आता है। इल्म कहता है : यह दुनिया है, यह जिस्म है, इस जिस्म को भूख लगती है, प्यास लगती है। खाना खाने और पानी पीने से भूख-प्यास शांत हो जाती है और इसके बिना जिस्म चल नही सकता। इस इल्म पर ही यह दुनिया चलती है और यह इल्म हर किसीको हस्बे-औक़ात (मर्यादानुसार) मिलता है हालांकि हैवान (पशु) भी इससे महरूम (वंचित) नहीं।

इस इल्म का सबसे खुशनुमा फल है यकीन; अगर्चे उसकी खुशबू हर किसीको हर वक्त नसीब (प्राप्त) नही होती। इस यकीन के दर्जे है—इल्मुल-यकीन (पूर्ण विश्वास), ऐनुल-यकीन (आँखो-देखा विश्वास) और इक्कल-यकीन (अटल विश्वास)। इल्मुल-यकीन कहता है—यह दुनियाँ खुदा की बनाई हुई है, खुदा की ताकत से यह चलती है, खुदा का नूर ही सबमे चमक रहा है। खुदा की मर्जी से ही यहाँ सब कुछ होता है। उसकी मर्जी के बिना कुछ भी नही होता। पत्ता तक नही हिल सकता।

यह इल्म ऊपरी तौर पर प्रायः सभी भक्तो को होता है। पर जब इसमे निष्ठा और श्रद्धा हो तब यह ऐन-यकीन के दर्जे पर पहुँचता है। हक्कुल-यक़ीन वह है जब यह सर्वमान्य सिद्धान्त केवल बौद्धिक विश्वास ही नही रहता, बल्कि सुश्रद्ध निष्ठा से भी आ बढ़कर जीवन में सक्रिय हो उठता है। खुदा के हुक्म के बिना आग जलाती नही, जला सकती ही नही, यह ठीक; पर जब हाथ मे लेने पर भी नही जलाती, तब हक्कुल-यक़ीन हुआ।

इसी तरह के और भी कितने ही उदाहरण दिये जा सकते है जिनकी एक मजिल पर संत अबु हफ़स हदाद थे। जब वे नहर के किनारे अबु-तराब बख्शी को मिले और १६ दिन के प्यासे होने पर भी सोच रहे थे कि पानी पिऊं कि न पिऊं। आखिर जिस्म है बिना पानी कैसे काम करेगा। सोलह दिन बहुत होते है, खुदा की रहमत से जब पानी मयस्सर (प्राप्त) हुआ है तो खुदा को शुक्र भेजो और पानी पीओ। इल्म कुछ इसी तरह की बाते कहकर हदाद को समझा रहा होगा। यह आसानी से समझा जा सकता है।

पर हक्कुल-यकीन के मौके ज़िन्दगी में रोज़ थोड़े ही मिलते है। १६ दिन तक प्यासे रहने के बाद यकीन को आगे बढ़ने का अवसर मिला है। वह कह रहा होगा दुनिया नाचीज़ है, खुदा ही सब-कुछ है, ऐसा तुम हमेशा कहते आये हो। ज़िन्दगी हक़ (सचाई) से है न कि पानी से।

हक तुम्हारे हाथ है फिर क्यो दुनियादार की तरह पानी पर टूटते हो ? ज़ोरदार थी दोनों ही की दलीले ।

अदब और कायदे को वे जितना महत्व देते थे इसके दो उदाहरण उल्लेखनीय है । उनके शिष्य अबु-उस्मान-हेरी का कहना है कि एक बार, जब वे उनसे मिलने गये तो कुछ मुनक्के रखे हुए थे। मुनक्के का एक दाना उठाकर उन्होने मुह मे डाल लिया । हदाद ने उनका हाथ पकड लिया और कहा, "बिना पूछे मुनक्का क्यों खा लिया ?" उस्मान बोले, "आपके दिल का हाल मै जानता हूँ । आपके पास जो कुछ होता है, फकीरों को तकसीम कर देते है । इसीलिए मैंने खा लिया ।"

हदाद ने कहा, "मै खुद अपने दिल का हाल नही जानता हूं तब तुम्हे मेरे दिल का हाल कैसे मालूम हो सकता है ?" उनका एक दूसरा शिष्य बहुत ही बा-अदब और सभ्य था । उसे देखकर जुनैद ने पूछा, "यह कितने जमाने से आपके साथ है ?" हदाद बोले, "दस साल से और इसने ७० हजार दीनार, जो इसके पास थे, मेरे लिए खर्च कि है । इसके अलावा ७० हजार कर्ज लेकर खर्च किये है जो अभी तक चुकाये नही गए । मगर फिर भी इसकी यह हिम्मत न हुई कि मुझसे कोई बात पूछे ।"

एक बार जंगल मे ध्यान मे बैठे थे। एक हिरन आकर उनकी गोद मे लोटने लगा और ये रो पडे । हिरन चला गया । कुछ लोग, जो साथ में थे, पूछने लगे, "यह क्या बात हुई ?" हदाद बोले, "दिल मे ख्याल आया, अगर बकरी होती तो तुम लोगो की जियाफ़त (भोज) करता । फौरन ही हिरन गोद मे आ गया ।" लोगों ने कहा, "तो इसमे रोने की क्या बात जबकि अल्लाह को इतना ख्याल है ।" बोले, "यह तो अपने से दूर करने के ढंग हैं । अगर फ़रऊन का भला मन्जूर होता तो उसके कहने से नील रवां (नील नदी को प्रवाहित) न करते ।

यह थी तो समझदारी की बात मगर इन्सान का दिल कभी कैसा और कभी कैसा हो जाता है । कहीं जा रहे थे । किसीका गधा खो गया । उसने आकर इनसे कहा । दुआ की और कहा जबतक इसका गधा न

मिल जायगा मैं आगे कदम नही रखूगा। गधा मिल गया और ये आगे बढे। मगर इससे भी जलाली शान देखी काबा मे। ग़रीबों को देखा तो मदद करने की इच्छा हुई। देने को पास मे कुछ था नही। एक पत्थर उठाया और कहा, "आज अगर तूने कुछ न दिया तो सब कदीले-काबे (काबा के चिराग) को तोड दूगा।" किसी ने थैली लाकर दी, उसे बांट-कर शान्त हुए।

इस हज से फारिग (मुक्त) होकर जब बगदाद पहुंचे तो जुनैद ने कहा, "हमारे लिए क्या सौगात लाये हो?" बोले, "तुम्हारे लिए यह सौगात लाया हू कि जब कोई तुम्हारा कसूर करे तो उसे माफ करके अपनी समझ की गलती का ख्याल करो। अगर नफ्स न माने तो उससे कहो—अगर तू अपने भाई का कसूर माफ न करेगा तो मैं तेरा साथ छोड दूगा। और जबरन नफ्स से कसूर माफ करवाओ।" जुनैद ने विनम्रता से कहा—"ये मर्तब (दर्जे) अल्लाह ने आप ही को दिये है।"

हदाद के आध्यात्मिक बांकपन का नमूना अबु उस्मान के सामने आया। उस्मान ने कहा, "मेरा इरादा है कि मैं वाज (प्रवचन) कहूं; क्योंकि मुझे खल्कत (जनता) पर इस कद्र शफकत (सहानुभूति) है कि मैं तमाम खल्क (जनता) के एवज (बदले) मे दोजख (नरक) जाना पसंद करता हू।" अनुमति दे दी और वह खुद भी प्रवचन सुनने को एक कोने मे जा बैठे। प्रवचन की समाप्ति पर किसीने कहा, "मुझे कपड़े की जरूरत है।" अबु उस्मान ने अपना लिबास उतार कर उसे दे दिया।

हदाद, अभी तक जो कोने में छिपे बैठे थे, अब सामने आये और बोले, "ऐ झूठे, वेदी पर से उतर आ? तू तो कहता था कि मुझे खल्क पर शफ़कत है और सायिल (प्रार्थी) का सवाल पूरा करने में तूने औरों पर सबकत (पहल) की। शफ़कत का तकाज़ा (माग) था कि दूसरों को मौका देता ताकि वह आगे आकर हाजतमन्द की हाजत (मांग) पूरी करके तुझसे ज्यादा सबाब (पुण्य) का मुस्तहक (अधिकारी) होता।" बात की बारीकी उस्मान समझ गए।

मगर मेहमानदारी कैसे की जाती है, यह सबक (पाठ) निहायत पुरअसर ढंग पर मुस्लिम-जगत के प्रसिद्ध विद्वान सत शिबली को एक बार उन्होने सिखाया। शिबली ने प्रेम से चार महीने उन्हे अपने यहाँ मेहमान रखा और बडी खातिरदारी की। रोज़ नयी-नयी चीजे पेश करते। रुखसत (विदा) के वक़्त ये शिबली से बोले, "जब कभी तुम नेशापुर मे आओ तो मै तुम्हे मेहमान रखकर मेजबानी (आतिथ्य) और जवा-मर्दी (श्रेष्ठ पौरुष) सिखाऊगा। मेहमान के साथ तकल्लुफ (दिखावा) ठीक नही, ताकि उसके आने पर रज (खेद) और जाने पर खुशी न हो।"

यहाँ तक तो ठीक, और यह बात सबकी समझ मे आने लायक है; पर दरसल हदाद को इससे भी बडी एक बात कहनी थी ओर वह क्रियात्मक ढंग से तब कही गई जब शिबली इनके यहाँ जाकर मेहमान हुए। वे कुल चालीस आदमी थे। हदाद ने इकतालीस चिराग रोशन किये। शिबली बोल उठे, "क्या यह तकल्लुफ नही हुआ ?" बोले, "अगर इसे तुम तकल्लुफ समझते हो तो इन सबको गुल कर दो।" शिबली ने बहुत कोशिश की, मगर एक चिराग के सिवा और कोई गुल न हुआ। आश्चर्य-चकित शिबली ने इसका कारण पूछा।

उत्तर मे हदाद ने एक बडी ही अच्छी मार्के की बात कही। वे बोले, "मेहमान खुदा का भेजा हुआ होता है। वह उसीका (प्रतीक) है। मैंने हर मेहमान के लिए, अल्लाह की खुशीनूदी की खातिर, एक चिराग रोशन किया और एक अपने लिए। चूकि चालीस खुदा के लिए थे, वे गुल न हुए और जो एक मेरे लिए था वह गुल हो गया। तुमने बग़दाद मे जो कुछ किया था, वह मेरे ही लिए किया था, इसलिए तकल्लुफ था; और मैंने जो कुछ किया अल्लाह के लिए किया, इसलिए तकल्लुफ़ मे दाखिल नही।"

अबु उस्मान को वाज की अनुमति देते समय सत हदाद ने कुछ नेक सलाह दी थी, जो वहा पर न लिखी जा सकी। उन्होने कहा था, "पहले अपने नफ़्स को नसीहत कर, फिर दूसरों को करना। और जब मजमा

ज़्यादा हो तो ग़रूर न करना; क्योंकि खल्क (जनता) ज़ाहिर को और खालिक (सृष्टिकर्त्ता) बातिन (अंतस्) को देखता है।" इस सलाह के अनुसार वह अपने को नसीहत करने की धुन मे रहते। चुनांचे बाजार मे एक यहूदी को देखा तो देखते ही बेहोश हो गए। लोगों ने अचानक बेहोश होने का सबब पूछा तो वे बोले—

"मैंने एक मर्द को लिबासे-अदल (बहुत ही घटिया पहरावा) और अपने को लिबासे-फ़जल (श्रेष्ठतापूर्ण पहरावा) पहने हुए देखा। मुझे ख़ौफ हुआ कि कही इसका लिबास मुझे और मेरा लिबास उसे न दे दिया जाय। मतलब यह कि यहूदी को अल्लाह ने जिस लायक समझा इन्साफ़ (न्याय) करके उसको वैसा ही बनाया; पर मुझे अपने फज़ल से शरफे-इस्लाम बख्शा (मुसलमान होने का सम्मान दिया)। उनके डरने का खासा कारण था, जिसका उल्लेख वही पर आया है। उन्होंने कहा, "मैंने तीन साल तक देखा कि अल्लाह बनजरे ख़श्म (क्रोध-भरी दृष्टि से) मेरी ओर देख रहा है।"

एक बार नेशापुर से हज को चले। रास्ते में बगदाद मे ठहरे। उनकी तकरीर (भाषण) से अरबी के विद्वान् भी दंग थे। हदाद स्वयं फ़ारस के रहनेवाले थे और अरबी न जानते थे। वही जुनैद से वह पूछ बैठे, "तुम्हारी नजर मे जवांमर्दी क्या है?" जुनैद बोले, "जो अच्छा काम किया हो उसे ज़ाहिर न करे और उसे अपना किया हुआ न समझे।"

यह एक अच्छी बात कही गई थी और हदाद ने इसे स्वीकार किया; मगर वे बोले, "मेरे नज़दीक जवांमर्दी इसका नाम है कि खुद इन्साफ़ करे और दूसरे से इन्साफ का तालिब न हो।" उनका अभिप्राय यह है कि सच्चा पौरुष इसमें है कि न्यायपूर्वक दूसरे के हक को दे दे, मगर अपने हक की मांग न करे। जुनैद को भी यह बात पसन्द आई। लोगों से कहा कि इस पर अमल करो। हदाद बोले, "बल्कि तुम खुद इस पर अमल करो।" जुनैद बोले, "बेशक, मैं जवामर्दी से नावाक़िफ़ (अपरिचित) था, आज वाक़िफ़ हुआ।"

किसीने पूछा, "वली के लिए कलाम (बोलना) करना अच्छा है या खामोशी (चुप) ?" बोले, "अगर बात कहे तो उसकी आफत (तकलीफ़) को जाने और खामोशी की लज्जत (मधुरता) उम्रेनह (हजरत नूह की आयु) मांगती है ताकि खामोशी में गुजार दे।" वे कहते थे, "खुदा के दोस्त वह है जो दुनिया से खुश जायं। वली वह है जो नफ्स से इखलास (प्रतिहिंसा) तलब करे। बुख्ल (कृपणता), तर्के-ईसार (स्वार्थ-त्याग) को कहते हैं।" स्वार्थ-त्याग दीन और दुनिया दोनों मे दूसरे को अपने हक से ज्यादा मान्यता देता है।

उनकी सूक्तियाँ है—अच्छा वह शख्स है जो लोगो पर करम (कृपा) करे और खुद अल्लाह के करम का तालिब रहे। सद्गृहस्थ वह है, जो धार्मिक नियमों का पालन करे और शुद्ध कमाई का भोजन करे। जो अपने को बुरा न समझे मगरूर (घमंडी) है, और जिसने गरूर किया हलाक हुआ (मारा गया)। खौफ दिल का चिराग है, जो नफ्स की अच्छाई और बुराई को मालूम कराता है।

कहते—फ़रासत (अक़्लमन्दी) का दावा करनेवाला साहबे-फरासत (बुद्धिमान) नही। फुक यह है कि लेने से देने को अजीज रखे। देनेवाला और लेनेवाला आधा मर्द और फ़कत (केवल) देनेवाला और न लेनेवाला पूरा मर्द। और न देनेवाला और लेनेवाला मर्द नही, मक्खी है। हर समय अल्लाह का फजल ढूढनेवाला हलाक नही होता। इबादत पर भरोसा न करो। अपनी निगहबानी (देखभाल) करो अल्लाह के साथ।

वे कहते—तकवा यानी पाकीजगी (पवित्रता) हलाल रोजी (नेक कमाई) मे है। तौबा के बाद गुनाह न करने को तौबा कहते हैं। दिखाने के लिए अमल करना बुरा है। वह शख्स अंधा है जो मस्नअ: (बनाई हुई चीज) या (दुनियावी चीज़ से) बनाने वाले को पहचानता है। और साने-ए-मसनूअ (निर्माता) को नही पहचानता। अल्लाह का दर (दरवाज़े) इख्तियार करले ताकि सब दर तुझ पर खुल जायं और रसूल का आज्ञाकारी बन जा ताकि सब तेरे आज्ञाकारी बन जायं।

कहते—बन्दा वह है, जो पूरे तौर से अहकामे-इलाही (प्रभु-आज्ञाएँ) बजा लाय। दरवेश वह है जो अल्लाह की दरगाह मे बावजूद बहुत-सी इबादत के आजिज़ी ज़ाहिर करे। एकदम भी वह राह मिलना, जिससे अल्लाह तक पहुँचे, अच्छा है। शराबे-शौक़ पीनेवाले (प्रभु-प्रेम-रूपी मदिरा) को हर वक़्त अल्लाह का दीदार हासिल होता है। गुनाह कुफ़्र का डक है—जैसे ज़हर मौत का डंक है।(जाहिर की रोशनी खिदमत और निष्ठा द्वारा अन्तर को रोशन करे।)

संत हदाद से कोई पूछ बैठा, "आप अल्लाह की तरफ रागिब (आकर्षित) किस लिए हुए ?" उन्होने जवाब दिया—जिस लिए फ़कीर मालदार की तरफ रागिब होता है। और वह मालदारों का मालदार ऐसा मालदार है जिसके पास किसी माल की कमी नही। जरूरत इस बात की है कि उस मालदार से सामाजिक विशुद्धि की, संसार के समुद्धरण की माग करे। सच्चे जी से हो सके, तो रोकर किसी सद्वृद्ध की सद्प्रेरणा से निर्दोष बालको के मन मे उठी यह प्रार्थना और भी कारगर होगी !

: २४ :

इमाम अबु हनीफ़ा

कहते हैं कि हनीफ़ा इनकी लडकी का नाम था। इनका अपना खुद का नाम नेमान था और साबित पिता का नाम था। इसलिए पहले यह नेमान बिन साबित कहलाते थे। एक बार कुछ स्त्रियों ने आकर इनसे एक प्रश्न किया, "मुस्लिम शरीयत (धर्म-पद्धति) में मर्दों को तो एक वक्त में चार निकाह (विवाह) करने तक की मंजूरी दी गई है और औरतों को एक वक़्त में दो की भी इज़ाजत नही, ऐसा क्यों ?"

इमाम को इसका कोई उत्तर सूझ न पड़ा, इसलिए यह कहकर कि इसका जवाब फिर दूगा, वह घर आये। उनकी लड़की ने उन्ह चिन्तित देखकर कारण पूछा, तो उन्होंने उक्त प्रश्न की बात कही। लड़की, जिसका नाम हनीफा था, बोली, "अगर अपने नाम के साथ मेरा नाम मशहूर कर दें तो इसका तसल्लीबख्श जवाब (संतोषजनक) दे सकती हूं।" इस पर वह राज़ी हो गए और उन स्त्रियों को उसके पास भेज दिया। लड़की ने एक-एक प्याली उन स्त्रियों को देकर कहा," इनमें तुम अपना थोड़ा-थोड़ा दूध अलग-अलग निचोड दो।" फिर एक प्याली देकर कहा, "सब दूध इसमें मिला दो।" सब ने अपना-अपना दूध मिला दिया।

जब वह दूध एक प्याली में मिला चुकी तो हनीफ़ा ने कहा, "अब तुम अपना-अपना दूध अलग कर लो।" स्त्रियां बोलीं, "अब हम इसे अलग-अलग कैसे कर सकती है, क्योकि यह मिल गया है ?" हनीफ़ा बोली, कई खाविंद (पति) करने के बाद जब तुम्हारी औलाद होगी तो तुम कैसे बता सकोगी कि यह औलाद किसकी है ?" उन स्त्रियों को यह उत्तर संतोष-

जनक प्रतीत हुआ और वे चली गई। इस घटना के कारण ही उनका उपनाम अबु-हनीफ़ा पड़ा, और आगे चलकर नामके बजाय उपनाम अधिक प्रसिद्ध हो गया।

इमाम अबुहनीफ़ा एक विद्वान् संत थे। कहते हैं, जब वह मदीने गये और मुहम्मद की कब्र पर जाकर मुहम्मद को सलाम किया तो जवाब मिला, "वालेकुम सलाम या इमाम-उल-मुसलमीन।" एक बार स्वप्न में उन्होंने देखा कि वह मुहम्मद की हड्डियों को अलग-अलग छाँट रहे हैं। जब वह जगे तो उनके मन में बड़ी ग्लानि हुई; लेकिन एक संत ने इस स्वप्न की ताबीर (स्वप्न-फल) बतलाई कि तुम मुहम्मद के उपदेशों और उनकी सूक्तियों की खोज और उनका संपादन करोगे।

कुछ दिन तक उनका ऐसा मामूल (क्रम) था कि हर रात को ३०० बार नमाज़ पढ़ते थे। एक रोज़ राह में जाते हुए एक स्त्री को अपनी सहेली से यह कहते हुए सुना "यह मर्द रात को ५०० बार नमाज़ पढ़ता है।" बस, उस दिन से उन्होंने ५०० बार नमाज़ पढ़ना शुरू कर दिया। फिर किसी आदमी ने कहा कि यह रोज़ १००० बार नमाज़ पढ़ता है। उस रोज़ से १००० बार नमाज़ पढ़ने लगे। एक बार उनके एक शिष्य ने कहा, "लोगों का ख्याल है कि आप रात को सोते नही हैं।" बोले, "अच्छा, अब मैं नहीं सोया करूंगा।" शिष्य ने पूछा, "क्यों?" एक आयत सुनाकर कहा, "मैं उन लोगों में से नही होना चाहता जो झूठी तारीफ चाहते हैं।"

एक बार ख़लीफ़ा ने किसी दस्तावेज़ पर अपने काज़ी शाबी से हस्ताक्षर कराने के लिए अपने एक गुलाम के द्वारा कहला भेजा। शाबी ने हस्ताक्षर कर दिए। फिर वही कागज उन्होंने इमाम अबु हनीफा के पास उनके हस्ताक्षर के लिए भेजा, मगर उन्होंने गुलाम से कहा, "या तो खलीफ़ा मेरे पास आकर कहे या मुझे अपने पास बुलाकर कहे, तब मैं हस्ताक्षर करूंगा, वैसे नहीं।" खलीफ़ा ने शाबी से पूछा, "क्या गवाही में देखना ज़रूरी है?" शाबी ने कहा, "हाँ।" खलीफ़ा ने कहा, "फिर

आपने बिना देखे दस्तखत कैसे कर दिये ?" शाबी बोले, "मुझे यक़ीन था कि गुलाम से आपने ही कहलाया है।"

खलीफा ने कहा, "आपको कायदे के खिलाफ़ काम (नियम के विरुद्ध कार्य) नही करना चाहिए था। वाजिब यह है कि आपकी जगह पर किसी दूसरे शख्स को काजी तैनात करूं।" अपने मंत्रियों से सलाह करके उन्होंने अबु हनीफ़ा को और दूसरे तीन संतों को इसके लिए बुलाया। किन्तु अबु-हनीफ़ा काजी के पद को अच्छा नही समझते थे। इसलिए उन्होंने सफ़ियान को सलाह दी कि तुम तो भाग जाओ और मशअर तुम दीवाने बन जाओ। मै किसी तरह बच निकलूगा। रहे शरीह, खलीफ़ा इन्हे काज़ी बनाये बिना नही छोड़गा। हुआ भी ऐसा ही। सफियान तो भाग निकले और मशअर दीवाने बनकर छूटे।

अबुहनीफ़ा के पश्चात् मशअर से खलीफ़ा ने जब काज़ी होने को कहा तो उन्होंने बहकी-बहकी बाते करनी शुरू कर दीं। खलीफ़ा का हाथ पकड़-कर बड़े प्रेम से पूछा, "कहिये, आपका मिज़ाज़ कैसा है ? और हाँ, आपके सुपुत्र कहाँ है ?" खलीफा ने सोचा ऐसे दीवाने को काज़ी बनाना ठीक नही। इसलिए शरीह से आग्रह करके उन्हे काज़ी बनने के लिए राज़ी कर लिया। मगर अबु हनीफ़ा ने इसके बाद उनसे मिलना बन्द कर दिया। खुद वह यों बचे कि पहले तो कहा कि मै अरब नही हूं, इसलिए काज़ी नहीं हो सकता, कुलीन सरदार मेरी बात नहीं मानेगे। मगर लोगों ने कहा, "काज़ी के लिए इल्म की ज़रूरत है, जाति की नही।"

जब इस तरह छुटकारा नही होते देखा तो उन्होंने खलीफ़ा से कहा, "मै समझता हूँ कि मै काज़ी बनने के काबिल (योग्य) नही हूं।" छूटते ही खलीफ़ा ने कहा, "तुम झूठ बोलते हो।" अब वह बोले, "देखिये, अगर मै झूठ बोलता हूं तो झूठे आदमी को काज़ी नही बनाना चाहिए और अगर जो मै कहता हूं वह सच है तो जिसमें काज़ी होने की लियाक़त (योग्यता) नही तो काज़ी और खलीफ़ा का नायब कैसे हो सकता है ?" लाजवाब (निरुत्तर) और निराश होकर खलीफ़ा ने दूसरों से कहा।

एक व्यक्ति ने उनसे कुछ ऋण ले रखा था। एक बार उसके मोहल्ले में उन्हे जाना पडा। सख्त धूप थी, कही दूर तक छाया न थी। बस थोड़ी-सी छाया उसी आदमी की दीवार की थी। लोगों ने उन्हें बुलाया तो उन्होंने अपने कर्ज़दार की छाया से भी लाभ लेना उचित न समझा। उन्होंने एक हदीस सुनाई, जिसका अर्थ है, "कर्ज से जो नफा लिया जाता है, सूद है।" सूद को इल्लामी विधान में बहुत ही त्याज्य माना जाता है।

कुछ ज़ालिमो ने एक बार इन्हे कैद कर दिया।उनमें से एक आदमी ने कहा कि मुझे कलम बनादो (वध कर दो)। उन्होने अस्वीकार किया। उसने बार-बार आग्रह किया पर वह न माने। जब उसने पूछा, "क्या सबब है कि आप कलम नही बनाते ? तो वे बोले, "मै डरता हूँ कि कही मेरी गिनती जालिमों के मददगारों में न हो जाय। इसके प्रमाण में एक आयत सुनाई, "कयामत के दिन अल्लाह फ़रिश्तों को हुक्म देगा कि ज़ालिमों को उनके मददगारो के साथ क़ब्रो से उठाओ।"

अबु हनीफा के घुटनो मे सिजदो के कारण ऊंटो के घुटनों की तरह घट्टे पड़ गए थे और ये स्वाभाविक है क्योंकि जो वर्षों तक हर रात को १००० बार नमाज पढे उसके घुटनों का और क्या हाल होगा ! एक और सत की पेशानी पर सिजदे अधिक करने से ढट्ठे पड गए थे। क़ुरान के पारायण में भी उनकी बड़ी श्रद्धा थी। जब कोई कठिनाई सामने आती तो कुरान के ४० पारायण करते थे जिससे उनकी समस्या हल हो जाती। एक बार उन्होने कुरान के १००० पाठ किये केवल इसलिए कि किसी धनिक का उसके धन के कारण उन्होने सम्मान किया था। उसका प्रायश्चित्त आवश्यक था।

मुस्लिम सतो मे अदब अर्थात् ईश्वर की मर्यादा का भाव बहुत प्रबल होता है। हिन्दुओं मे ऐसे बहुत से साधु मिलेगे जो वर्षो तक पैरो पर खडे ही रहे, न कभी बैठे और न लेटे। किसी झूले का सहारा लेकर वो नींद तो ले लेते है मगर उस समय भी टागो पर खड़े रहते हैं। दाऊद ताई नाम संत, जो इनके शिष्य थे, कहते थे कि २० वर्ष तक मैं आपके साथ रहा,

कभी आपको नंगे सिर और पैर फैलाए नहीं देखा। दाऊद न कहा, "अकेले में पाँव फैलाने में क्या हर्ज है?" बोले, "मजमे में लोगों का अदब करूं और अकेले में खुदा का अदब न करू?"

एक लड़के को कीचड़ में चलते देखकर बोले, "ज़रा सम्भल कर चल, कहीं पैर न फिसले।" उसने कहा, "अगर मेरा पैर फिसला तो कोई हर्ज नही। मै अकेला ही गिरूंगा। लेकिन आप बचे रहिए; क्योंकि आप इमाम हैं। अगर आप फिसले तो बहुत से लोग आपके साथ गुमराह हो जायंगे।" अबु-हनीफ़ा के दिल को यह बात लग गई और सावधानी की दृष्टि से अपने सभी शिष्यों से उसी दिन उन्होंने कह दिया कि जिस बात मे तुम्हे प्रमाण न मिले और संदेह हो, हरगिज मेरा अनुकरण न करना, बल्कि खुद सोच-समझ करके उसका नतीजा (निष्कर्ष) निकालना।

अबु-हनीफ़ा दानी-वृत्ति के पुरुष थे। कुछ लोग एक मस्जिद के लिए, जिसे वह बनवा रहे थे, इनसे धन लेने आये; मगर इन्होंने देने से इन्कार कर दिया। लोगों ने आशीर्वाद-स्वरूप जब कुछ देने के लिए बहुत आग्रह किया तो अनिच्छापूर्वक एक दिरम दे दिया। शिष्यों ने अबुहनीफ़ा से कहा कि आपकी दानशीलता तो प्रसिद्ध है। फिर आपको यह दिरम देना इतना नागवार क्यों गुज़रा? बोले, "नेक कमाई मिट्टी और पानी में खर्च नही होती। मुझे तो अब अपनी कमाई में शक हो गया है।" कुछ दिनों बाद, "यह दिरम खोटा है" यह कहकर वह लोग वापिस कर गये और वह उसे लेकर बहुत खुश हुए।

इनके वही शिष्य दाऊद ताई जब मुसलमानों के नेता चुने गए तो उन्होंने अबु-हनीफ़ा से पूछा कि मुझे क्या करना चाहिए। वह बोले, "तुम्हें इल्म पर अमल करना चाहिए। क्योंकि आलिम बेअमल मिस्ल जिस्म बेरूह के होता है" यानी ज्ञान दिमाग़ का बोझ बनने के लिए नहीं बल्कि कर्म में उतरकर जीवन को पवित्र और उज्ज्वल बनाने के लिए है। वो ज्ञान ज्ञान नही जो जीवन में उतरने से झिझकता है। दीपक अपनी शक्ति-भर प्रकाश देता है, ठीक ऐसे ही ज्ञान जीवन को आनन्दमय और सुन्दर बनाता है।

अबु-हनीफ़ा कहते थे कि मैं किसी बखील यानी कंजूस और लालची की गवाही नही लेता, क्योंकि ऐसा आदमी स्वभाव से ही हक़ से अधिक लेने का इच्छुक होता है। एक बार हम्माम यानी स्नानागार से एक आदमी को बिल्कुल नंगे बाहर आते देखा तो अपनी आंखे बंद कर लीं। उस आदमी ने मज़ाक किया, "आपकी आखों की रोशनी कब से ले ली गई?" बोले, "जबसे तुझसे शर्म छीन ली गई।"

एक बार खलीफा ने इजराईल को स्वप्न मे देखा और उनसे अपनी आयु के संबंध में पूछा। मृत्युदेव ने उत्तर में अपनी पांच अंगुलिया दिखाई। खलीफ़ा ने लोगों से अपने स्वप्न को कहा तो कोई भी उसका आशय न बता सका। जब अबु-हनीफ़ा से पूछा तो उन्होंने कहा कि पांच अंगुलियों से मतलब उन पांच इल्मों से है, जिन्हे खुदा के सिवा और कोई नही जानता एक आयत सुनाई—जिसमें कहा है कि कयामत कब होगी, पानी कब बरसेगा, गर्भ में क्या है, कल कोई क्या करेगा और कौन कब कहां मरेगा, इसका हाल अल्लाह ही को मालूम है।

मुस्लिम संतों के देहावसान के पश्चात उनके साथी संतो का स्वप्न मे उन्हे देखने का कुछ रिवाज़-सा मालूम पड़ता है। अबु-हनीफ़ा को भी उनकी मृत्यु के पश्चात न-फिल-हवान ने स्वप्न में यों देखा कि क़यामत लग रही है, हिसाब-किताब हो रहा है, हौजे क़ौसर (स्वर्ग का एक कुंड) पर मुहम्मद बैठे हैं, उनके इर्द-गिर्द बहुत-से बुजुर्ग खड़े हैं। उनमें अबु-हनीफ़ा भी हैं। मुहम्मद की अनुमति से अबु-हनीफ़ा ने एक कटोरे में नू-फ़िल को पीने के लिए पानी दिया। खूब पेट भरकर पिया; मगर कटोरा खाली नहीं हुआ। फिर पूछने पर अबु-हनीफ़ा ने बताया कि मुहम्मद के दाहिनी तरफ इब्राहीम और बाएँ हजरत सिद्दीक हैं। एक दूसरे संत को मुहम्मद ने स्वप्न में कहा, "मुझे ढूंढ़ना है तो अबु-हनीफ़ा के इल्म के पास ढूंढो।"

: २५ :

मन्सूर अम्मार

"इन्सान का दिल नूरी (प्रकाशवाला) होता है। जब उसमें दुनिया की मुहब्बत समा जाती है तो तारीकी (अधकार) छा जाता है और नूर ले लिया जाता है।" यह सूक्ति मन्सूर अम्मार नामी सन्त की है और यह मानव के मन को बहुत ऊंचे स्थान पर प्रतिष्ठित करती है। संसार मे लिप्त होकर वह तिमिरमयी हो जाती है और प्रकाश, जो उसका नैसर्गिक गुण है, उससे छीन लिया जाता है।

मन्सूर अम्मार के जीवन से यह शिक्षा मिलती है कि कैसे एक छोटी-सी सद्वृत्ति मनुष्य को ऊंचे स्थान पर पहुंचा देती है। लिखा है कि कहीं वह जा रहे थे। रास्ते में एक कागज़ पड़ा हुआ मिला, जिस पर, "बिस्मिल्ला उलरहमानुल्रहीम" लिखा था। उसे देखकर उनके भक्तिभाव ने जोर मारा और अल्लाह के नाम को इज्ज़त देने के विचार से वह उसकी गोली बनाकर खा गए। रात्रि को उन्होंने ख्वाब देखा कि कोई कह रहा है, "तूने हमारे नाम की इज्ज़त की इसके बदले में हमने तेरे लिए इल्म के दरवाजे खोल दिए।" आगे चलकर अम्मार एक बहुत बड़े विद्वान हुए और उनकी अपनी यह मान्यता थी कि उस गोलीवाली घटना के बदले ही खुदा ने उन पर अपनी मेह्र की प्रेमपूर्ण वर्षा की।

अपने निजी जीवन की तरह ही सद्वृत्तिपोषक की एक छोटी-सी घटना के द्वारा एक गुलाम और उनके मालिक का उद्धार भी शिक्षाप्रद और मनोरंजक हैं। सभा लगी हुई थी, उनका उपदेश हो रहा था। उधर से एक गुलाम आया। उसके मालिक ने चार दिरम देकर बाजार से कुछ

चीज़ मोल लाने के लिए उसे भेजा था। सभा देखकर वह क्षण-भर के लिए ठिठका, यह देखने के लिए कि क्या हो रहा है। हृदय से निकली हुई सन्त की वाणी, जो उसके कानों मे पड़ी तो उसका मन रम गया और भूल गया कि वह गुलाम है और किसी काम के लिए भेजा गया है। सन्त के हाथ खाली और हृदय भरापूरा होता है। सभा में कोई दरवेश था। मन्सूर की इच्छा हुई कि उन्हे कुछ सहायता पहुंचाई जाय। इसलिए उपदेश की समाप्ति पर उन्होंने श्रोताओं से कहा, "क्या कोई ऐसा मर्द इस मजलिस में है, जो चार दिरम इस दरवेश को दे और उसके बदले मे चार दुआएं ले ?"

आगे बढ़कर गुलाम ने वह चारो दिरम उस दरवेश को दे दिये। सन्त ने गुलाम से पूछा, 'बता तू, क्या दुआएं चाहता है ?" उसने कहा, "पहली बात तो यह कि मुझे आजादी नसीब हो, दूसरी यह कि मेरे मालिक को खुदा नेकी दे, ताकि वह नेकराह (सन्मार्ग) पर चल सकें। तीसरी यह कि उन चार दिरमों के बदले उसे चार दिरम मिल जायं। चौथी यह कि अल्लाह मुझ पर, आप पर और मजलिस के सभी लोगों पर मेहर करे।"

सन्त ने आखे बन्द करके ईश्वर से प्रार्थना की और गुलाम घर वापिस आया। मालिक, जो देर से प्रतीक्षा कर रहा था, उसे देखते ही रुष्ट होकर बोला, "इतनी देर कहाँ लगाई ?" गुलाम ने सब बाते सुना दीं। मालिक ने यह सुनकर तुरंत ही उसे आज़ाद कर दिया और अपने पास से चार सौ दीनार भी उसे भेट किये। इतना ही नही, उसने सच्चे जी से तौबा की, अर्थात् जो कुछ लांछनयुक्त व्यवहार था उसके जीवन में उसे त्यागकर सन्मार्ग ग्रहण करने का संकल्प किया। रात्रि को मालिक ने स्वप्न देखा कि कोई कह रहा है, "हमने तुझ पर, तेरे गुलाम पर, मन्सूर अम्मार पर और मजलिस के सभी लोगों पर रहमत की, यानी उन्हें बख्श (मुक्त कर) दिया।"

एक बार हारूं रशीद ने इन्हीं सन्त मन्सूर अम्मार से दो प्रश्न किये, "दुनिया में सबसे ज्यादा अक्लमंद कौन है ?" और सबसे ज्यादा बेवकूफ

कौन है ?" मन्सूर ने उत्तर में कहा, दुनिया का सबसे अक्लमंद इंसान वह है जो अपने-आपको अपने बनानेवाले के हाथ में सौपकर बिलकुल उसके हुक्म मे रहता है और दुनिया का सबसे ज़्यादा जाहिल (मूर्ख) वह है जो जानता है कि जो कुछ वह कर रहा है, वह गुनाह है फिर भी वह उसे छोड़ता नही।" मन्सूर अम्मार की यह सूक्ति भी याद रखने लायक है, "अल्लाह ने आरिफ़ों का दिल ज़िक्र के लिए और अहले दुनिया का दिल लालच के लिए बनाया है।" (जो जागरूक भक्त है वह इस मंत्र को कसौटी की भाति अपने मन मे रखकर यह देख सकते है कि उनका दिल कैसा है। यदि भजन, सुमिरन और ज्ञानमार्ग मे उसे रस आता है तो वह ठीक राह पर है और यदि दुनिया की चीजो के लिए उसका मन दौड़ता है तो ज्ञानी कहलाने की इच्छा छोडकर उसे अपने घर को ठीक करने में जी-जान से लग जाना चाहिए।)

एक रोज़ रात को घूमते हुए इन्हे एक घर मे से किसी की दर्द-भरी आवाज़ सुनाई दी। सुना कि कोई कह रहा था, "ऐ अल्लाह, मैंने तेरी नाफर्मानी (अवज्ञा) के सबब यह काम नही किया बल्कि नफ़्स ने मुझे बहकाया और शैतान ने नफ़्स की मदद की। तू अपनी रहमत (करुणा) से माफ कर दे, सिवा तेरे कोई मेरा हाथ पकडने वाला नही है।" किसी दुःखिया की यह दीन याचना सुनकर वह बेकरार हो गए और उसी बेकरारी (व्याकुलता) की हालत मे यह आयत उनके मुह से निकली, "ऐ ईमानवालो, अपने नफ़्स को और अपने अहल को दोज़ख़ की आग से बचाओ कि जिसका ईधन आदमी और पत्थर है।" सुबह को घूमते हुए फिर उधर से गुज़रे तो उसी मकान से रोने की आवाज़ सुनी। पूछा तो लोगों ने कहा, "कल रात को किसीने दरवाजे पर एक आयत पढ़ी थी जिसे सुनकर एक लड़का ख़ौफ़-ए-इलाही से मर गया।" मन्सूर अम्मार ने कहा, "आह उसका कातिल (वधिक) मैं ही हूँ।" वह लड़का स्वयं ही अपने कृत्य से अत्यधिक व्यथित था। उस आयत ने उसके मन पर मार्मिक चोट की।

उनकी सूक्तियाँ है—ख़ल्क से मिलनेवाले ख़ालिक से दूर रहते हैं। नफ़्स की पैरवी से इन्सान बला में फंसता है। दुनिया की मुसीबतों पर सब्र न करनेवाला आख़िरत (परलोक) की मुसीबतों में फंसता है। तारक यानी त्यागी बे-ग़म होता है और ख़ामोश रहनेवाले को माफ़ी मागने की ज़रूरत नही होती। और कहा—जिस गुनाह के करने की ताकत न हो और फिर भी करे तो वह बड़ा गुनाहगार होता है। जिससे बच सकता हो उसको करना तो बुरा है ही, पर जिस बुराई को कर भी नही सकता उसे करने जाना तो और भी बुरा।